

वस्त्रकी प्रासिके लिये सुगन्धित पुष्पोंसे हवन करे। विभिन्न धान्योंकी प्रासिके लिये उन्हीं धान्योंसे होम करना चाहिये। धान्यके होमसे धान्य प्राप्त होता है और अन्नके होमसे अन्नकी वृद्धि होती है। तिल, घी, दूध और मधुकी आहुति देनेसे गाय-भेंसकी वृद्धि होती है। अधिक कहनेकी क्या आवश्यकता है? विष और व्याधिके निवारणमें, शान्तिकर्ममें, भूतजनित भय और संकटमें, युद्धमें, दैवी क्षति प्राप्त होनेपर, बन्धनसे छूटनेमें और महान् वनमें पड़ जानेपर आदि सभीमें यह सिद्ध किया हुआ मन्त्र मनुष्योंको निश्चय ही कल्याण प्रदान करता है।

द्वादशाक्षर-मन्त्रमें जो अन्तिम छः अक्षर (हनुमते नमः) हैं इनको और आदि बीज (हाँ)-को छोड़कर शेष बचे हुए पाँच बीजोंका जो पञ्चाक्षर-मन्त्र बनता है, वह सम्पूर्ण मनोरथोंको देनेवाला है। इसके श्रीरामचन्द्रजी ऋषि, गायत्री छन्द और हनुमान् देवता कहे गये हैं। सम्पूर्ण कामनाओंकी प्रासिके लिये इसका विनियोग किया जाता है। इसके पाँच बीजों तथा सम्पूर्ण मन्त्रसे षडङ्ग-न्यास करे। रामदूत, लक्ष्मण-प्राणदाता, अञ्जनीसुत, सीताशोक-विनाशन तथा लङ्घाप्रासादभञ्जन—ये पाँच नाम हैं, इनके पहले 'हनुमत' यह नाम और है। हनुमत् आदि पाँच नामोंके आदिमें पाँच बीज और अन्तमें डे विभक्ति लगायी जाती है। अन्तिम नामके साथ उक्त पाँचों बीज जुड़ते हैं, ये ही षडङ्ग-न्यासके छः मन्त्र हैं*। इसके ध्यान-पूजन आदि कार्य पूर्वोक्त द्वादशाक्षर मन्त्रके समान ही हैं।

प्रणव (ॐ), वाग्भव (ऐ), पद्मा (श्री) तीन दीर्घ स्वरोंसे युक्त मायाबीज (हाँ हीं हं) तथा पाँच कूट (हस्फँ, खँ, हस्तौं, हस्खँ, हस्तौं) यह ग्यारह अक्षरोंका मन्त्र सम्पूर्ण सिद्धियोंको

देनेवाला है। इसके भी ध्यान-पूजन आदि सब कार्य पूर्ववत् होते हैं। इस मन्त्रकी आराधना की जाय तो यह समस्त अभीष्ट मनोरथोंको देनेवाला है। 'नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा।' यह अठारह अक्षरोंका मन्त्र है। इसके ईश्वर ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, पवनकुमार हनुमान् देवता, हं बीज और स्वाहा शक्ति है, ऐसा मनीषी पुरुषोंका कथन है। 'आञ्जनेयाय नमः' का हृदयमें, 'रुद्रमूर्तये नमः' का सिरमें, 'वायुपुत्राय नमः' का शिखामें, 'अग्निगर्भाय नमः' का कवचमें, 'रामदूताय नमः' का नेत्रोंमें तथा 'ब्रह्मास्त्राय नमः' के अस्त्रस्थानमें न्यास करे। इस प्रकार न्यास-विधि कही गयी है।

ध्यान

तसचामीकरनिभं भीजं संविहिताञ्जलिम्।
चलत्कुण्डलदीपास्यं पद्माक्षं मारुतिं स्मरेत्॥



जिनकी दिव्य कान्ति तपाये हुए सुवर्णके समान है, जो भयका नाश करनेवाले हैं, जिन्होंने

* यथा-'हस्फँ हनुमते नमः, हृदयाय नमः। खँ रामभक्ताय नमः शिरसे स्वाहा। हस्तौं लक्ष्मणप्राणदात्रे नमः शिखायै वषट्।' हस्खँ अञ्जनीसुताय नमः कवचाय हुम्।' 'हस्तौं सीताशोकविनाशाय नमः नेत्रयाय वौषट्। हस्फँ खँ हस्तौं हस्खँहस्तौं लङ्घाप्रासादभञ्जनाय नमः अस्त्राय फट्।'



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!

अपने प्रभु (श्रीराम)-का चिन्तन करके उनके लिये अङ्गलि बाँध रखी है, जिनका सुन्दर मुख हिलते हुए कुण्डलोंसे उद्धासित हो रहा है तथा जिनके नेत्र कमलके समान शोभायमान हैं, उन पवनकुमार हनुमानजीका ध्यान करे।

इस प्रकार ध्यान करके दस हजार मन्त्र-जप करे। तत्पश्चात् घृतमिश्रित तिलसे दशांश होम करे। पूर्वोक्त रीतिसे वैष्णव-पीठपर पूजन करे। प्रतिदिन केवल रातमें भोजनका नियम लेकर जितेन्द्रियभावसे एक सौ आठ बार जप करे तो मनुष्य छोटे-मोटे रोगोंसे छूट जाता है, इसमें संशय नहीं है। बड़े भारी रोगोंसे मुक्त होनेके लिये तो प्रतिदिन एक हजार जप करना चाहिये। सुग्रीवके साथ श्रीरामकी मित्रता कराते हुए हनुमानजीका ध्यान करके जो दस हजार मन्त्र-जप करता है, वह परस्पर द्वेष रखनेवाले दो विरोधियोंमें संघ उत्पन्न कर सकता है। जो यात्राके समय हनुमानजीका स्मरण करते हुए मन्त्र-जप करता है, उसके बाद यात्रा करता है, वह शीघ्र ही अपना अभीष्ट-साधन करके घर लौट आता है। जो अपने घरमें मन्त्र-जप करते हुए सदा हनुमानजीकी आराधना करता है, वह आरोग्य, लक्ष्मी तथा कान्ति पाता है और किसी प्रकारके उपद्रवमें नहीं पड़ता। वनमें यदि इस मन्त्रका स्मरण किया जाय तो यह व्याघ्र आदि हिंसक जन्तुओं तथा चोर-डाकुओंसे रक्षा करता है। सोते समय शव्यापर एकाग्रचित्त होकर इस मन्त्रका स्मरण करना चाहिये। जो ऐसा करता है, उसे दुःखपूर्ण और चोर आदिका भय कभी नहीं होता।

वियत् (ह) इन्दु (अनुस्वार)-से युक्त हो, उसके बाद 'हनुमते रुद्रात्मकाय' ये दो पद हों, फिर वर्म (हुं) और अस्त्र (फट) हो तो (हुं हनुमते रुद्रात्मकाय हुं फट) यह बारह अक्षरोंका महामन्त्र होता है, जो अणिमा आदि अष्ट सिद्धियोंको देनेवाला है। इसके श्रीरामचन्द्रजी ऋषि, जगती

छन्द, श्रीहनुमानजी देवता, हं बीज और 'हुम्' शक्ति कही गयी है। छः दीर्घस्वरोंसे युक्त बीज (हां हीं हूं हैं हैं हः)-के द्वारा षडङ्ग-न्यास करे।

ध्यान

महाशैलं समुत्पाद्य धावन्तं रावणं प्रति ॥
लाक्षारसारुणं रौद्रं कालान्तकयमोपमम् ॥
ज्वलदग्निसमं जैत्रं सूर्यकोटिसमप्रभम् ॥
अङ्गदाद्यैर्महावैर्वेष्टितं रुद्ररूपिणम् ॥
तिष्ठ तिष्ठ रणे दुष्ट सृजन्तं घोरनिःस्वनम् ॥
शैवरूपिणमध्यर्थं ध्यात्वा लक्षं जपेन्मनुम् ॥

(७४। १२२—१२५)



हनुमानजी एक बहुत बड़ा पर्वत उखाड़कर रावणकी ओर दौड़ रहे हैं। वे लाक्षा (महावर)-के रंगके समान अरुणवर्ण हैं। काल, अन्तक तथा यमके समान भयंकर जान पड़ते हैं। उनका तेज

प्रज्वलित अग्निके समान है। वे विजयशील तथा करोड़ों सूर्योंके समान तेजस्वी हैं। अंगद आदि महावीर उन्हें चारों ओरसे घेरकर चलते हैं। वे साक्षात् रुद्रस्वरूप हैं। भयंकर सिंहनाद करते हुए वे रावणसे कहते हैं—‘अरे ओ दुष्ट! युद्धमें खड़ा रह, खड़ा तो रह!’ इस प्रकार शिवावतार भगवान् हनुमान्‌जीका ध्यान और पूजन करके एक लाख मन्त्रका जप करे।

तदनन्तर दूध, दही, घी मिलाये चावलसे दशांश होम करे। विमलादि शक्तियोंसे युक्त पूर्वोक्त वैष्णवपीठपर मूल मन्त्रसे मूर्ति-कल्पना करके हनुमान्‌जीकी पूजा करनी चाहिये। एकमात्र ध्यान करनेसे भी मनुष्योंको सिद्धि प्राप्त होती है। इसमें संशय नहीं है। अब मैं लोकहितकी इच्छासे इस मन्त्रका साधन बतलाता हूँ। हनुमान्‌जीका साधन पुण्यमय है, वह बड़े-बड़े पातकोंका नाश करनेवाला है। यह लोकमें अत्यन्त गुह्यतम रहस्य है और शीघ्र उत्तम सिद्धि प्रदान करनेवाला है। इसके प्रसादसे मन्त्र-साधक पुरुष तीनों लोकोंमें विजयी होता है। प्रातःकाल स्नान करके नदीके तटपर कुशासनपर बैठे और मूल-मन्त्रसे प्राणायाम तथा षडङ्ग-न्यास सब कार्य करे। फिर सीतासहित भगवान् श्रीरामचन्द्रजीका ध्यान करके उन्हें आठ बार पुष्पाञ्जलि अर्पित करे। तत्पश्चात् घिसे हुए लाल चन्दनसे उसीकी शलाकाद्वारा ताम्र-पात्रमें अष्टदल कमल लिखे। कमलकी कर्णिकामें मन्त्र लिखे। उसमें कपीश्वर हनुमान्‌जीका आवाहन करे। मूल-मन्त्रसे मूर्ति-निर्माण करके ध्यान तथा आवाहनपूर्वक पाद्य आदि उपचार अर्पण करे। गन्ध, पुष्प आदि सब सामग्री मूल-मन्त्रसे ही निवेदन करके कमलके केसरोंमें छः अङ्गों (हृदय, सिर, शिखा, कवच, नेत्र तथा अस्त्र)-का पूजन करके आठ दलोंमें सुग्रीव आदिका पूजन करे। सुग्रीव, लक्ष्मण, अंगद, नल, नील, जाम्बवान्, कुमुद और केसरीका एक-एक दलमें पूजन करना

चाहिये। तदनन्तर इन्द्र आदि दिक्ष्यालों तथा वज्र आदि आयुधोंका पूजन करे। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध होनेपर मन्त्रोपासक पुरुष अपनी अभीष्ट कामनाओंको सिद्ध कर सकता है।

नदीके तटपर, किसी वनमें, पर्वतपर अथवा कहीं भी एकान्त प्रदेशमें श्रेष्ठ साधक भूमि-ग्रहणपूर्वक साधन प्रारम्भ करे। आहार, श्वास, वाणी और इन्द्रियोंपर संयम रखे। दिग्बन्ध आदि करके न्यास और ध्यान आदिका सम्यक् सम्पादन करनेके पश्चात् पूर्ववत् पूजन करके उक्त मन्त्रराजका एक लाख जप करे। एक लाख जप पूर्ण हो जानेपर दूसरे दिन सबेरे साधक महान् पूजन करे। उस दिन एकाग्रचित्तसे पवननन्दन हनुमान्‌जीका सम्यक् ध्यान करके दिन-रात जपमें लगा रहे। तबतक जप करता रहे, जबतक दर्शन न हो जाय। साधकको सुदृढ़ जानकर आधी रातके समय पवननन्दन हनुमान्‌जी अत्यन्त प्रसन्न हो उसके सामने जाते हैं। कपीश्वर हनुमान्‌जी उस साधकको इच्छानुसार वर देते हैं; वर पाकर वह श्रेष्ठ साधक अपनी मौजसे इधर-उधर विचरता रहता है। यह पुण्यमय साधन देवताओंके लिये भी दुर्लभ है; क्योंकि गूढ़ रहस्यरूप है। मैंने सम्पूर्ण लोकोंके हितकी इच्छासे इसे यहाँ प्रकाशित किया है।

इसी प्रकार साधक अपने लिये हितकर अन्यान्य प्रयोगोंका भी अनुष्ठान करे। इन्दु (अनुस्वार)-युक्त वियत् (ह) अर्थात् ‘हं’ के पश्चात् डे विभक्त्यन्त पवननन्दन शब्द हो और अन्तमें वहिप्रिया (स्वाहा) हो तो (हं पवननन्दनाय स्वाहा) यह दस अक्षरका मन्त्र होता है, जो सम्पूर्ण कामनाओंको देनेवाला है। इसके ऋषि आदि भी पहले बताये अनुसार हैं। षडङ्ग-न्यास भी पूर्ववत् करने चाहिये।

ध्यान
ध्यायेद्वाणे हनूमन्तं सूर्यकोटिसमप्रभम्।
धावन्तं रावणं जेतुं दृष्ट्वा सत्वरमुत्थितम्॥

लक्ष्मणं च महावीरं पतितं रणभूतले ।
गुरुं च क्रोधमुत्पाद्य ग्रहीतुं गुरुपर्वतम् ॥
हाहाकारैः सदर्पैश्च कम्पयन्तं जगत्वयम् ।
आब्रहाण्डं समाव्याप्य कृत्वा भीमं कलेवरम् ॥

(७४। १४५—१४७)

लङ्घाकी रणभूमिमें महावीर लक्ष्मणको गिरा देख हनुमान्‌जी तुरन्त उठ खड़े हुए हैं, वे हृदयमें महान् क्रोध भरकर एक विशाल एवं भारी पर्वतको उठाने तथा रावणको मार गिरानेके लिये वेगसे दौड़ पड़े हैं। उनका तेज करोड़ों सूर्योंकी प्रभाको लज्जित कर रहा है। वे ब्रह्माण्डव्यापी भयंकर एवं विराट् शरीर धारण करके दर्पपूर्ण हुंकारसे तीनों लोकोंको कम्पित किये देते हैं। इस प्रकार युद्ध-भूमिमें हनुमान्‌जीका चिन्तन करना चाहिये।

ध्यानके पश्चात् विद्वान् साधक एक लाख जप और पूर्ववत् दशांश हवन करे। इस मन्त्रका भी विधिवत् पूजन पहले-जैसा ही बताया गया है। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध होनेपर मन्त्रोपासक अपना हित-साधन कर सकता है। इस श्रेष्ठ मन्त्रका साधन भी गोपनीय रहस्य ही है। सब तन्त्रोंमें इसे अत्यन्त गोप्य बताया गया है। इसका उपदेश हर एकको नहीं देना चाहिये। ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर शौचादि नित्यकर्म करके पवित्र हो नदीके तटपर जाकर तीर्थके आवाहनपूर्वक स्नान करे। स्नानके समय आठ बार मूलमन्त्रकी आवृत्ति करे। तत्पश्चात् बारह बार मन्त्र पढ़कर अपने ऊपर जल छिड़के। इस प्रकार स्नान, संध्या, तर्पण आदि करके गङ्गाजीके तटपर, पर्वतपर अथवा बनमें भूमिग्रहणपूर्वक अकारादि स्वरवर्णोंका उच्चारण करके पूरक, 'क' से लेकर 'म' तकके पाँचवर्गके अक्षरोंसे कुम्भक तथा 'य' से लेकर अवशेष वर्णोंका उच्चारण करके रेचक करना चाहिये। इस प्रकार प्राणायाम करके भूत-शुद्धिसे लेकर पीठन्यासतकके सब कार्य करे। फिर पूर्वोक्त रीतिसे कपीश्वर हनुमान्‌जीका

ध्यान और पूजन करके उनके आगे बैठकर साधक प्रतिदिन आदरपूर्वक दस हजार मन्त्र-जप करे। सातवें दिन विशेषरूपसे पूजन करे। उस दिन मन्त्रसाधक एकाग्रचित्तसे दिन-रात जप करे। रातके तीन पहर बीत जानेपर चौथे पहरमें महान् भय दिखाकर कपीश्वर पवननन्दन हनुमान्‌जी अवश्य साधकके सम्मुख पधारते हैं और उसे अभीष्ट वर देते हैं। साधक अपनी रुचिके अनुसार विद्या, धन, राज्य अथवा विजय तत्काल प्राप्त कर लेता है। यह सर्वथा सत्य है, इसमें संशयका लेश भी नहीं है। वह इहलोकमें सम्पूर्ण कामनाओंका उपभोग करके अन्तमें मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

सद्योजात (ओ)-सहित दो वायु (य् य॒यो यो) 'हनूमन्त' का उच्चारण करे। फिर 'फल' के अन्तमें 'फ' तथा नेत्र (इ) युक्त क्रिया (ल) एवं कामिका (त)-का उच्चारण करे। तत्पश्चात् 'धग्गधगित' बोलकर 'आयुराष' पदका उच्चारण करे, तदनन्तर लोहित (प) तथा 'रुडाह' का उच्चारण करना चाहिये। (पूरा मन्त्र इस प्रकार है—'ॐ यो यो हनूमन्त फलफलित धग्गधगित आयुराष परुडाह') यह पचीस अक्षरका मन्त्र है। इसके भी ऋषि आदि पूर्वोक्त ही हैं। 'प्लीहा' रोग दूर करनेवाले वानरराज हनुमान्‌जी इसके देवता कहे गये हैं। 'प्लीहा' रोगसे युक्त पेटपर पानका पत्ता रखे, उनके ऊपर आठ पर्व लपेटा हुआ वस्त्र रखकर उसे ढक दे। तत्पश्चात् श्रेष्ठ साधक हनुमान्‌जीका स्मरण करके उस वस्त्रके ऊपर एक बाँसका दुकड़ा डाल दे। इसके बाद बेरके वृक्षकी लकड़ीसे बनी हुई छड़ी लेकर उसे जंगली पत्थरसे प्रकट हुई आगमें मन्त्रसे सात बार तपाके, फिर उस छड़ीसे पेटपर रखे हुए बाँसके दुकड़ेपर सात बार प्रहार करे। इससे मनुष्योंका प्लीहा रोग अवश्य ही नष्ट हो जाता है।

'ॐ नमो भगवते आम्बनेयाय अमुकस्य शृङ्खलां त्रोट्य त्रोट्य बन्धमोक्षं कुरु कुरु स्वाहा ।'

यह एक मन्त्र है। इसके ईश्वर ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, शृङ्खलामोचक पवनपुत्र श्रीमान् हनुमान् देवता, हं बीज और स्वाहा शक्ति है। बन्धनसे छूटनेके लिये इसका विनियोग किया जाता है। छः दीर्घ स्वर तथा रेफयुक्त बीजमन्त्रसे षडङ्ग-न्यास करे (यथा—हाँ हृदयाय नमः, हीं शिरसे स्वाहा इत्यादि)।

ध्यान

वामे शैलं वैरिभिदं विशुद्धं टङ्कमन्यतः।
दधानं स्वर्णवर्णं च ध्यायेत् कुण्डलिनं हरिम्॥

(७४। १६९-१७०)

'बायें हाथमें वैरियोंको विदीर्ण करनेवाला पर्वत तथा दायें हाथमें विशुद्ध टंक धारण करनेवाले, सुवर्णके समान कान्तिमान्, कुण्डल-मण्डित वानरराज हनुमान्जीका ध्यान करे।'

इस प्रकार ध्यान करके एक लाख मन्त्रका जप तथा आम्र-पल्लवसे दशांश हवन करे। विद्वानोंने इसके पूजन आदिकी विधि पूर्ववत् बतायी है। महान् कारागारमें पड़ा हुआ मनुष्य दस हजार जप करे। इससे वह कारागारसे मुक्त हो अवश्य सुखका भागी होता है।

अब मैं बन्धनसे छुड़ानेवाले शुभ हनुमत्-मन्त्रका वर्णन करता हूँ। अष्टदल कमलके भीतर षट्कोण बनावे। उसकी कर्णिकामें साध्य पुरुषका नाम लिखे। छः कोणोंमें 'ॐ आज्जनेयाय' का उल्लेख करे। आठों दलोंमें 'ॐ वातु-वातु' लिखे। गोरोचन और कुंकुमसे यह उत्तम मन्त्र लिखकर मस्तकपर धारण करके बन्धनसे छूटनेके लिये उक्त मन्त्रका दस हजार जप करे। इस मन्त्रको प्रतिदिन मिट्टीपर लिखकर मन्त्रज्ञ पुरुष दाहिने हाथसे मिटावे। बारह बार लिखने और मिटानेसे मन्त्राराधक महान् कारागारसे छूटकारा पा जाता है। गगन (ह) नेत्र (इ)-युक्त ज्वलन (र) अर्थात् 'हरि' पदके पश्चात् दो बार 'मर्कट' शब्द बोलकर शेष (आ)-सहित तोय (व)

अर्थात् 'वा' का उच्चारण करके 'मकरे' पद बोले। फिर 'परिमुञ्चति मुञ्चति शृङ्खलिकाम्' का उच्चारण करे। (पूरा मन्त्र इस प्रकार है—हरि मर्कट मर्कट वाम करे परिमुञ्चति मुञ्चति शृङ्खलिकाम्) यह चौबीस अक्षरोंका मन्त्र है। विद्वान् पुरुष इस मन्त्रको दायें हाथमें बायें हाथसे लिखकर मिटा दे और एक सौ आठ बार इसका जप करे। ऐसा करनेपर कैदमें पड़ा हुआ मनुष्य तीन सप्ताहमें छूट जाता है। इसमें संशय नहीं है। इसके ऋषि आदि पूर्ववत् हैं। पूजन आदि कार्य भी पूर्ववत् करे। इसका एक लाख जप और शुभ द्रव्योंसे दशांश हवन करना चाहिये। मन्त्रसाधक पुरुष इस प्रकार कपीश्वर वायुपुत्र हनुमान्जीकी आराधना करता है, वह उन सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्त कर लेता है, जो देवताओंके लिये भी दुर्लभ हैं। अज्ञनीनन्दन हनुमान्जीकी उपासना की जाय तो वे धन, धान्य, पुत्र, पौत्र, अतुल सौभाग्य, यश, मेधा, विद्या, प्रभा, राज्य तथा विवादमें विजय प्रदान करते हैं। सिद्धि तथा विजय देते हैं।

सनत्कुमारजी कहते हैं—अब मैं हनुमान्जीके लिये रहस्यसहित दीपदान-विधिका वर्णन करता हूँ। जिसको जान लेनेमात्रसे साधक सिद्ध हो जाता है। दीपपात्रका प्रमाण, तैलका मान, द्रव्य-प्रमाण तथा तन्तु (बत्ती)-का मान—इन सबका क्रमशः वर्णन किया जायगा। स्थानभेद-मन्त्र, पृथक्-पृथक् दीपदान-मन्त्र आदिका भी वर्णन होगा। पुष्पसे वासित तैलके द्वारा दिया हुआ दीपक सम्पूर्ण कामनाओंको देनेवाला माना गया है। किसी पथिकके आनेपर उसकी सेवाके लिये तिलका तैल अर्पण किया जाय तो वह लक्ष्मीप्राप्तिका कारण होता है। सरसोंका तैल रोग नाश करनेवाला है, ऐसा कर्मकुशल विद्वानोंका कथन है। गेहूँ, तिल, उड़द, मूँग और चावल—ये पञ्चधान्य कहे गये हैं। हनुमान्जीके लिये सदा इनका दीप देना चाहिये। पञ्चधान्यका आटा बहुत सुन्दर होता है। वह दीपदानमें सदा

सम्पूर्ण कामनाओंको देनेवाला कहा गया है।

सन्धिमें तीन प्रकारके आटेका दीप देना उचित है, लक्ष्मीप्राप्तिके लिये कस्तुरीका दीप विहित है, कन्याप्राप्तिके लिये इलायची, लौंग, कपूर और कस्तुरीका दीपक बताया गया है। सब्ख्य सम्पादन करनेके लिये भी इन्हीं वस्तुओंका दीप देना चाहिये। इन सब वस्तुओंके न मिलनेपर पञ्चधान्य श्रेष्ठ माना गया है। आठ मुट्ठीका एक किञ्चित् होता है, आठ किञ्चित्का एक पुष्कल होता है। चार पुष्कलका एक आढक बताया गया है, चार आढकका द्रोण और चार द्रोणकी खारी होती है। चार खारीको प्रस्थ कहते हैं अथवा यहाँ दूसरे प्रकारसे मान बताया जाता है। दो पलका एक प्रसृत होता है, दो प्रसृतका कुडव माना गया है, चार कुडवका एक प्रस्थ और चार प्रस्थका आढक होता है। चार आढकका द्रोण और चार द्रोणकी खारी होती है। इस क्रमसे षट्कर्मोपयोगी पात्रमें ये मान समझने चाहिये। पाँच, सात तथा नौ—ये क्रमशः दीपकके प्रमाण हैं, सुगन्धित तेलसे जलनेवाले दीपकका कोई मान नहीं है। उसका मान अपनी रुचिके अनुसार ही माना गया है। तैलोंके नित्य पात्रमें केवल बत्तीका विशेष नियम होता है। सोमवारको धान्य लेकर उसे जलमें डुबोकर रखे। फिर प्रमाणके अनुसार कुमारी कन्याके हाथसे उसको पिसाना चाहिये। पीसे हुएको शुद्ध पात्रमें रखकर नदीके जलसे उसकी पिण्डी बनानी चाहिये। उसीसे शुद्ध एवं एकाग्रचित्त होकर दीपपात्र बनावे। जिस समय दीपक जलाया जाता हो, हनुमत्कवचका पाठ करे। मङ्गलवारको शुद्ध भूमिपर रखकर दीपदान करे। कूट बीज ग्यारह बताये गये हैं, अतः उतने ही तनु ग्राह्य हैं। पात्रके लिये कोई नियम नहीं है। मार्गमें जो दीपक जलाये जाते हैं, उनकी बत्तीमें इक्कीस तनु होने चाहिये। हनुमान्‌जीके दीपदानमें लाल सूत ग्राह्य बताया गया है।

कूटकी जितनी संख्या हो उतना ही पल तेल दीपकमें डालना चाहिये। गुरुकार्यमें ग्यारह पलसे लाभ होता है। नित्यकर्ममें पाँच पल तेल आवश्यक बताया गया है। अथवा अपने मनकी जैसी रुचि हो उतना ही तेलका मान रखे। नित्य-नैमित्तिक कर्मोंके अवसरपर हनुमान्‌जीकी प्रतिमाके समीप अथवा शिवमन्दिरमें दीपदान कराना चाहिये।

हनुमान्‌जीके दीपदानमें जो कोई विशेष बात है उसे मैं यहाँ बता रहा हूँ। देव-प्रतिमाके आगे, प्रमोदके अवसरपर, ग्रहोंके निमित्त, भूतोंके निमित्त, गृहोंमें और चौराहोंपर—इन छः स्थलोंमें दीप दिलाना चाहिये। स्फटिकमय शिवलिङ्गके समीप, शालग्रामशिलाके निकट हनुमान्‌जीके लिये किया हुआ दीपदान नाना प्रकारके भोग और लक्ष्मीकी प्राप्तिका हेतु कहा गया है। विघ्र तथा महान् संकटोंका नाश करनेके लिये गणेशजीके निकट हनुमान्‌जीके उद्देश्यसे दीपदान करे। भयंकर विष तथा व्याधिका भय उपस्थित होनेपर हनुमद्विग्रहके समीप दीपदानका विधान है। व्याधिनाशके लिये तथा दुष्ट ग्रहोंकी दृष्टिसे रक्षाके लिये चौराहेपर दीप देना चाहिये। बन्धनसे छूटनेके लिये राजद्वारपर अथवा कारागारके समीप दीप देना उचित है। सम्पूर्ण कार्योंकी सिद्धिके लिये पीपल और बड़के मूलभागमें दीप देना चाहिये। भयनिवारण और विवाद-शान्तिके लिये, गृहसंकट और युद्ध-संकटकी निवृत्तिके लिये तथा विष, व्याधि और ज्वरको उतारनेके लिये, भूतग्रहका निवारण करने, कृत्यासे छुटकारा पाने तथा कटे हुएको जोड़नेके लिये, दुर्गम एवं भारी वनमें व्याघ्र, हाथी तथा सम्पूर्ण जीवोंके आक्रमणसे बचनेके लिये, सदाके लिये बन्धनसे छूटनेके लिये, पथिकके आगमनमें, आने-जानेके मार्गमें तथा राजद्वारपर हनुमान्‌जीके लिये दीपदान आवश्यक बताया गया है। ग्यारह, इक्कीस और पिण्ड—तीन प्रकारका मण्डलमान होता है। पाँच, सात अथवा नौ—इन्हें लघुमान कहा गया

है। दीपदानके समय दूध, दही, माखन अथवा गोबरसे हनुमानजीकी प्रतिमा बनानेका विधान किया गया है। सिंहके समान पराक्रमी वीरवर हनुमानजीको दक्षिणाभिमुख करके उनके पैरको रीछपर रखा हुआ दिखावे। उनका मस्तक किरीटसे सुशोभित होना चाहिये। सुन्दर वस्त्र, पीठ अथवा दीवारपर हनुमानजीकी प्रतिमा अङ्कित करनी चाहिये। कूटादिमें तथा नित्य दीपमें द्वादशाक्षर-मन्त्रका प्रयोग करना चाहिये।

गोबरसे लिपी हुई भूमिपर एकाग्रचित्त हो षट्कोण अङ्कित करे। उसके बाह्यभागमें अष्टदल कमल बनावे तथा उसके भी बाह्यभागमें भूपुर-रेखा खींचे। उस कमलमें दीपक रखे। शैव अथवा वैष्णव पीठकर अञ्जनीनन्दन हनुमानजीकी पूजा करे। छः कोणोंके अन्तरालमें 'हौं हस्फँ खँ हस्त्रौं हस्खँ हसौं,' इन छः कूटोंका उल्लेख करे। छहों कोणोंमें बीजसहित छः अङ्गोंको लिखे। मध्यमें सौम्यका उल्लेख करे और उसीमें पवननन्दन हनुमानजीकी पूजा करके छः कोणोंमें छः अङ्गों तथा छः नामोंकी पहले बताये अनुसार पूजा करे। कमलके अष्टदलोंमें क्रमशः इन वानरोंकी पूजा करनी चाहिये—'सुग्रीवाय नमः, अङ्गदाय नमः, सुषेणाय नमः, नलाय नमः, नीलाय नमः, जाम्बवते नमः, प्रहस्ताय नमः, सुवेषाय नमः।' तत्पश्चात् षडङ्ग देवताओंका पूजन करे। 'अञ्जनापुत्राय नमः, रुद्रमूर्तये नमः, वायुसुताय नमः, जानकीजीवनाय नमः, रामदूताय नमः, ब्रह्मास्त्रनिवारणाय नमः।' पञ्चोपचार (गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य)-से इन सबका पूजन करके कुश और जल हाथमें लेकर देश-कालके उच्चारणपूर्वक दीपदानका संकल्प करे। उसके बाद दीप-मन्त्र बोले। श्रेष्ठ साधक उत्तराभिमुख हो उस मन्त्रको कूट संख्याके बराबर (छः बार) जप कर हाथमें लिये हुए जलको भूमिपर गिरा दे। तदनन्तर दोनों हाथ जोड़कर यथाशक्ति मन्त्र-

जप करे। फिर इस प्रकार कहे—'हनुमानजी! उत्तराभिमुख अर्पित किये हुए इस श्रेष्ठ दीपकसे प्रसन्न होकर आप ऐसी कृपा करें, जिससे मेरे सारे मनोरथ पूर्ण हो जायें।'

इस प्रकार ये तेरह द्रव्य उपयुक्त होते हैं—गोबर, मिट्टी, मषी, आलता, सिंदूर, लाल चन्दन, श्वेत चन्दन, मधु, कस्तूरी, दही, दूध, मक्खन और घी। गोबर दो प्रकारके बताये गये हैं—गायका और भैंसका। खोये हुए द्रव्यकी पुनः प्राप्तिके लिये दीपदान करना हो तो उसमें भैंसके गोबरका उपयोग आवश्यक माना गया है। मुने! दूर देशमें गये हुए पथिकके आगमन, महादुर्गकी रक्षा, बालक आदिकी रक्षा, चोर आदिके भयका नाश आदि कार्योंमें गायका गोबर उत्तम कहा गया है। वह भी भूमिपर पड़ा हो तो नहीं लेना चाहिये। जब गाय गोबर कर रही हो तो किसी पात्रमें आकाशमेंसे ही उसे रोक लेना चाहिये।

मिट्टी चार प्रकारकी कही गयी है—सफेद, पीली, लाल और काली। उनमें गोपीचन्दन, हरिताल, गेरू आदि ग्राह्य हैं; अन्य सब द्रव्य प्रसिद्ध एवं सबके लिये सुपरिचित हैं। विद्वान् पुरुष गोपीचन्दनसे चौकोर मण्डल बनाकर उसके मध्यभागमें भैंसके गोबरसे हनुमानजीकी मूर्ति बनावे। मन्त्रोपासक एकाग्रचित्त हो बीज और क्रोध (हं)-से उनकी पूँछ अङ्कित करे। तेलसे मूर्तिको नहलाये और गुडसे तिलक करे। कमलके समान रंगवाला धूप, जो शालवृक्षकी गोंदसे बना हो, निवेदन करे। पाँच बत्तियोंके साथ तेलका दीपक जलाकर अर्पण करे। इसके बाद (हाथ धोकर) श्रेष्ठ साधक दही-भातका नैवेद्य निवेदन करे। उस समय वह तीन बार शेष (आ)-सहित विष (म्)-का उच्चारण करे*। ऐसा करनेपर खोयी हुई भैंसों, गौओं तथा दास-दासियोंकी भी प्राप्ति हो जाती है। चोर आदि दुष्ट जीवों तथा सर्प आदिका भय प्राप्त होनेपर 'ताल' से चार दरवाजेका सुन्दर गृह बनावे। पूर्वके

* 'मा मा मा' इस प्रकार उच्चारण करना चाहिये।

द्वारपर हाथीकी मूर्ति बिठावे और दक्षिण द्वारपर भैंसेकी, पश्चिम द्वारपर सर्प और उत्तर द्वारपर व्याघ्र स्थापित करे। इसी प्रकार क्रमसे पूर्वादि द्वारोंपर खड़ग, छुरी, दण्ड और मुद्रा अङ्कित करके मध्य भागमें भैंसके गोबरसे मूर्ति बनावे। उसके हाथमें डमरू धारण करावे और यत्नपूर्वक यह चेष्टा करे कि मूर्तिसे ऐसा भाव प्रकट हो मानो वह चकित नेत्रोंसे देख रही है। उसे दूधसे नहलाकर उसके ऊपर लाल चन्दन लगाये। चमेलीके फूलोंसे उसकी पूजा करके शुद्ध धूपकी गन्ध दे। धीका दीपक देकर खीरका नैवेद्य अर्पण करे। गगन (ह), दीपिका (ऊ) और इन्दु (अनुस्वार) अर्थात् 'हूं' और शस्त्र (फट) यह आराध्यदेवताके आगे जपे। इस प्रकार सात दिन करके मनुष्य भारी भयसे मुक्त हो जाता है। उक्त दोनों प्रयोगोंका प्रारम्भ मङ्गलवारके दिन आदरपूर्वक करना चाहिये। शत्रुसेनासे भय प्राप्त होनेपर गेरूसे मण्डल बनाकर उसके भीतर थोड़ा झुका हुआ ताढ़का वृक्ष अङ्कित करे। उसपरसे लटकती हुई हनुमानजीकी प्रतिमा गोबरसे बनावे। उनके बायें हाथमें तालका अग्रभाग और दाहिनेमें ज्ञान-मुद्रा हो। ताढ़की जड़से एक हाथ दूर अपनी दिशामें एक चौकोर मण्डल बनावे। उसके मध्यभागमें मूर्ति अङ्कित करे। उसका मुख दक्षिणकी ओर हो, वह हनुमन्मूर्ति बहुत सुन्दर बनी हो, हृदयमें अञ्जलि बौधे बैठी हो। जलसे उसको स्थान कराकर यथासम्भव गन्ध आदि उपचार अर्पण करे। फिर घृतमिश्रित खिचड़ीका नैवेद्य निवेदन करे और उसके आगे 'किलि-किलि' का जप बताया गया है। प्रतिदिन ऐसा ही करे। ऐसा करनेपर पथिकोंका शीघ्र समागम होता है।

जो प्रतिदिन विधिपूर्वक हनुमानजीको दीप देता है, उसके लिये तीनों लोकोंमें कुछ भी असाध्य नहीं है। जिसके हृदयमें दुष्टता भरी हो, जिसकी बुद्धि दुष्टताका ही चिन्तन करती हो, जो शिष्य होकर भी विनयशून्य और चुगला हो, ऐसे मनुष्यको

कभी इसका उपदेश नहीं देना चाहिये। कृतघ्नको कदापि इस रहस्यका उपदेश न दे। जिसके शील-स्वभावकी भलीभाँति परीक्षा कर ली गयी हो, उस साधु पुरुषको ही इसका उपदेश देना चाहिये।

अब मैं तत्त्वज्ञान प्रदान करनेवाले दूसरे मन्त्रका वर्णन करूँगा। 'तार (ॐ) नमो हनुमते' इतना कहकर तीन बार जाठर (म)-का उच्चारण करे। फिर 'दनक्षोभम्' कह-कहकर दो बार 'संहर' यह क्रियापद बोले। उसके बाद 'आत्म-तत्त्वम्' बोलकर दो बार 'प्रकाशय' का उच्चारण करे। उसके बाद वर्म (हुं), अस्त्र (फट) और वहिजाया (स्वाहा)-का उच्चारण करे। (पूरा मन्त्र यों है—ॐ नमो हनुमते मम मदनक्षोभं संहर संहर आत्मतत्त्वं प्रकाशय प्रकाशय हुं फट स्वाहा) यह साढ़े छत्तीस अक्षरोंका मन्त्र है। इसके वसिष्ठ मुनि, अनुष्टुप् छन्द और हनुमान् देवता हैं। सात-सात, छः, चार, आठ तथा चार मन्त्राक्षरोंद्वारा षड़ङ्ग-न्यास करके कपीश्वर हनुमानजीका इस प्रकार ध्यान करे—

जानुस्थवामबाहुं च ज्ञानमुद्रापरं हृदि।
अध्यात्मचित्तमासीनं कदलीवनमध्यगम्॥
बालार्ककोटिप्रतिमं ध्यायेज्ञानप्रदं हरिम्।

(७५। ९५-९६)



‘हनुमानजीका बायाँ हाथ घुटनेपर रखा हुआ है। दाहिना हाथ ज्ञानमुद्रामें स्थित हो हृदयसे लगा है। वे अध्यात्मतत्त्वका चिन्तन करते हुए कदलीवनमें बैठे हुए हैं। उनकी कान्ति उदयकालके कोटि-कोटि सूर्योंके समान है। ऐसे ज्ञानदाता श्रीहनुमानजीका ध्यान करना चाहिये।’

इस प्रकार ध्यान करके एक लाख जप करे और धृतसहित तिलकी दशांश आहुति दे, फिर पूर्वोक्त पीठपर पूर्ववत् प्रभु श्रीहनुमानजीका पूजन करे। यह मन्त्र-जप किये जानेपर निश्चय ही कामविकारका नाश करता है और साधक कपीश्वर हनुमानजीके प्रसादसे तत्त्वज्ञान प्राप्त कर लेता है।

अब मैं भूत भगानेवाले दूसरे उत्कृष्ट मन्त्रका वर्णन करता हूँ। ‘ॐ श्रीं महाञ्जनाय पवनपुत्रावेशयावेशय ॐ श्रीहनुमते फट्।’ यह पचीस अक्षरका मन्त्र है। इस मन्त्रके ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द, हनुमान् देवता, श्रीं बीज और फट् शक्ति कही गयी है। छः दीर्घस्वरोंसे युक्त बीजद्वारा षडङ्ग-न्यास करे।

ध्यान

आञ्जनेयं पाटलास्यं स्वर्णाद्रिसमविग्रहम्।
पारिजातद्वमूलस्थं चिन्तयेत् साधकोत्तमः॥

(७५। १०२)

‘जिसका मुख लाल और शरीर सुवर्णगिरिके सदृश कान्तिमान् है, जो पारिजात (कल्पवृक्ष)-के नीचे उसके मूलभागमें बैठे हुए हैं, उन अञ्जनीनन्दन हनुमानजीका श्रेष्ठ साधक चिन्तन करे।’

इस प्रकार ध्यान करके एक लाख जप करे और मधु, धी एवं शक्कर मिलाये हुए तिलसे दशांश होम करे। विद्वान् पुरुष पूर्वोक्त पीठपर पूर्वोक्त रीतिसे पूजन करे। मन्त्रोपासक इस मन्त्रद्वारा यदि ग्रहग्रस्त पुरुषको झाड़ दे तो वह ग्रह चीखता-चिल्लाता हुआ उस पुरुषको छोड़कर भाग जाता है। इन मन्त्रोंको सदा गुप्त रखना चाहिये। जहाँ-तहाँ सबके सामने इन्हें प्रकाशमें नहीं लाना चाहिये। खूब जाँचे-बूझे हुए शिष्यको अथवा अपने पुत्रको ही इनका उपदेश करना चाहिये। (ना० पूर्व० ७४-७५)

भगवान् श्रीकृष्ण-सम्बन्धी मन्त्रोंकी अनुष्ठानविधि तथा विविध प्रयोग

सनत्कुमारजीने कहा—नारद! अब मैं भोग और मोक्षरूप फल देनेवाले श्रीकृष्ण-मन्त्रोंका वर्णन करूँगा; काम (कर्ली) ‘डे’ विभक्त्यन्त कृष्ण और गोविन्द पद (कृष्णाय गोविन्दाय) फिर ‘गोपीजनवल्लभाय स्वाहा’ (कर्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा) यह अठारह अक्षरोंका मन्त्र है, जिसकी अधिष्ठात्री देवी दुर्गाजी है। इस मन्त्रके नारद ऋषि, गायत्री छन्द, परमात्मा

श्रीकृष्ण देवता, कर्लीं बीज और स्वाहा शक्ति है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंकी सिद्धिके लिये इसका विनियोग किया जाता है। श्रेष्ठ साधक ऋषिका सिरमें, छन्दका मुखमें, देवताका हृदयमें बीजका गुह्यमें और शक्तिका चरणोंमें न्यास करें। मन्त्रके चार, चार, चार, चार और दो अक्षरोंसे पञ्चाङ्ग-न्यास करके फिर तत्त्व-न्यास करे। तत्पश्चात् हृदयकमलमें क्रमशः

१. नारदर्षये नमः शिरसि, गायत्रीछन्दसे नमः मुखे, श्रीकृष्णपरमात्मदेवतायै नमः हृदि, कर्लीं बीजाय नमः गुह्ये, स्वाहा शक्तये नमः पादयोः—यह ऋष्यादि न्यास है।

२. पञ्चाङ्ग-न्यास इस प्रकार है—कर्लीं कृष्णाय हृदयाय नमः। गोविन्दाय शिरसे स्वाहा। ‘गोपीजन’ शिखायै वषट् ‘वल्लभाय’ कवचाय हुं, ‘स्वाहा’ अस्त्राय फट्।

द्वादशकलाव्यास सूर्यमण्डल, षोडशकलाव्यास चन्द्रमण्डल तथा दशकलाव्यास अग्निमण्डलका न्यास करे। साथ ही मन्त्रके पदोंमें स्थित आठ, आठ और दो अक्षरोंका भी क्रमशः उन मण्डलोंके साथ योग करके उन सबका हृदयमें न्यास करे (यथा—कर्लीं कृष्णाय गोविन्दाय अं द्वादशकला-व्याससूर्यमण्डलात्मने नमः, गोपीजनवल्लभाय ॐ षोडशकलाव्यासचन्द्रमण्डलात्मने नमः स्वाहा, मं दशकलाव्यासवह्निमण्डलात्मने नमः—हृत्पुण्डरीके)। तत्पश्चात् आकाशादिके स्थलोंमें अर्थात् मूर्ढा, मुख, हृदय, गुह्य तथा चरणोंमें क्रमशः वासुदेव आदिका न्यास करे। वासुदेव, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध तथा नारायण—ये वासुदेव आदि कहलाते हैं। ये क्रमशः परमेष्ठी आदिसे युक्त हैं। परमेष्ठि पुरुष, शौच, विश्व, निवृत्ति तथा सर्व—ये परमेष्ठ्यादि कहे गये हैं। परमेष्ठि पुरुष आदि क्रमशः श्वेतवर्ण, अनिलवर्ण, अग्निवर्ण, अम्बुवर्ण तथा भूमिवर्णके हैं। इन सबका पूर्ववत् न्यास करे (यथा— श्वेतवर्णपरमेष्ठिपुरुषात्मने वासुदेवाय नमः मूर्ढनि। अनिलवर्णशौचात्मने सङ्कर्षणाय नमः मुखे। अग्निवर्णविश्वात्मने प्रद्युम्नाय नमः हृदये। अम्बुवर्णनिवृत्त्यात्मनेऽनिरुद्धाय नमः गुह्ये। भूमिवर्णसर्वात्मने नारायणाय नमः पादयोः।) ॐ क्षौं कोपतत्त्वात्मने नृसिंहाय नमः इति सर्वाङ्गे। इस प्रकार सम्पूर्ण अङ्गमें न्यास करे। यह तत्त्व-न्यास कहा गया है। इसी प्रकार श्रेष्ठ साधकोंको यह जानना चाहिये कि वासुदेव आदि नामोंका 'डे' विभक्त्यन्त रूप ही न्यासमें ग्राह्य है। तदनन्तर मन्त्रज्ञ पुरुष मूलमन्त्रको चार बार पढ़कर पूरक, छः बार पढ़कर कुम्भक और दो बार पढ़कर रेचक करते हुए प्राणायाम सम्पन्न करे। कुछ आचार्योंका यहाँ यह कथन है कि प्राणायामके पश्चात् पीठन्यास करके दूसरे न्यासोंका अनुष्ठान करे। आगे बतायी जानेवाली विधिके अनुसार दशतत्त्वादि न्यास करके विद्वान् पुरुष मूर्तिपञ्चर

नामक न्यास करे। फिर किरीटमन्त्रद्वारा बुद्धिमान् साधक सर्वाङ्गमें व्यापक न्यास करके प्रणवसम्पुटित मन्त्रको तीन बार दोनों हाथोंकी पाँचों अंगुलियोंमें व्यास (विन्यस्त) करे। उसके बाद तीन बार पञ्चाङ्ग-न्यास करे। तदनन्तर मूलमन्त्रको पढ़कर सिरसे लेकर पैरतक व्यापक-न्यास करे। फिर केवल प्रणवद्वारा एक बार व्यापक-न्यास करके मन्त्र-न्यास करे। इसके बाद पुनः नेत्र, मुख, हृदय, गुह्य और चरणद्वय—इनमें क्रमशः मन्त्रके पाँच पदोंका अन्तमें 'नमः' लगाकर न्यास करे (यथा—कर्लीं नमः नेत्रद्वये। कृष्णाय नमः मुखे। गोविन्दाय नमः हृदये। गोपीजनवल्लभाय नमः गुह्ये। स्वाहा नमः पादयोः)। पुनः ऋषि आदि न्यास करके पूर्वोक्त पञ्चाङ्ग-न्यास करे।

अब मैं सब न्यासोंमें उत्तमोत्तम परमगुह्य न्यासका वर्णन करता हूँ, जिसके विज्ञानमात्रसे मनुष्य जीवन्मुक्त तथा अणिमा आदि आठों सिद्धियोंका अधीक्षर हो जाता है, जिसकी आराधनासे मन्त्रोपासक श्रीकृष्णका सान्निध्य प्राप्त कर लेता है। प्रणवादि व्याहतियोंसे सम्पुटित मन्त्रका और मन्त्रसे सम्पुटित प्रणवादिका तथा गायत्रीसे सम्पुटित मन्त्रका और मन्त्रसे सम्पुटित गायत्रीका मातृकास्थलमें न्यास करे। मातृका-सम्पुटित मूलका और मूलसे सम्पुटित मातृका वर्णोंका श्रेष्ठ साधक क्रमशः न्यास करे। विद्वान् पुरुष पहले मातृका वर्णोंका नियतस्थलमें न्यास कर ले। उसके बाद पूर्वोक्त न्यास करने चाहिये। इस तरह उपर्युक्त छः प्रकारके न्यास करे। यह षोडान्यास कहा गया है। इस श्रेष्ठ न्यासके अनुष्ठानसे साधक साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णके समान हो जाता है। न्याससे सम्पुटित पुरुषको देखकर सिद्ध, गन्धर्व, किन्नर और देवता भी उसे नमस्कार करते हैं। फिर इस भूतलपर मनुष्योंके लिये तो कहना ही क्या है? तत्पश्चात् 'ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्वाय फट्' इस मन्त्रसे दिग्बन्ध करे। इसके बाद अपने

हृदयमें सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको देनेवाले
इष्टदेवका इस प्रकार ध्यान करे—

उत्कुल्लकुसुमद्रातनप्रशाखैर्वरहृमैः ।

सस्मेरमञ्जरीवृन्दबल्लरीवेष्टितैः शुभैः ॥

गलत्परागधूलीभिः सुरभीकृतदिङ्मुखैः ।

स्मरेच्छिशिरितं वृन्दावनं मन्त्री समाहितः ॥

उन्मीलन्नवक्ञालि विगलन्मधुसञ्जयैः ।

लुब्धान्तःकरणीर्गुञ्जदद्विरेफपठलैः शुभम् ॥

मरालपरभृत्कीरकपोतनिकरैर्मुहुः ।

मुखरीकृतमानृत्यन्मायूरकुलमञ्जुलम् ॥

कालिन्द्या लोलकल्लोलविप्रूषैर्मन्दवाहिभिः ।

उन्निद्राम्बुरुहन्नातरजोभिर्धूसैः शिवैः ॥

प्रदीपितस्मैरगोष्ठसुन्दरीमृदुवाससाम् ।

विलोलनपैः संसेवितं वा तैर्निरन्तरम् ॥

स्मरेतदन्ते गीर्वाणभूरुहं सुमनोहरम् ।

तदथः स्वर्णवेद्यां च रत्नपीठमनुत्तमम् ॥

रत्नकुट्टिमपीठेऽस्मिन्नरुणं कमलं स्मरेत् ।

अष्टपत्रं च तन्मध्ये मुकुन्दं संस्मरेत्स्थितम् ॥

फुल्लेन्दीवरकान्तं च केकिबर्हावितंसकम् ।

पीतांशुकं चन्द्रमुखं सरसीरुहनेत्रकम् ॥

कौस्तुभोद्दासिताङ्गं च श्रीवत्साङ्गं सुभूषितम् ।

व्रजस्त्रीनेत्रकमलाभ्यर्चितं गोगणावृतम् ॥

गोपवृन्दयुतं वंशीं वादयन्तं स्मरेत्सुधीः ।

(४०—५०)

'मन्त्रोपासक एकाग्रचित्त होकर श्रीवृन्दावनका चिन्तन करे, जो शुभ एवं सुन्दर हरे-भरे वृक्षोंसे परिपूर्ण तथा शीतल है। उन वृक्षोंकी शाखाएँ खिले हुए कुसुम-समूहोंके भारसे झूकी हुई हैं। उनपर प्रफुल्ल मञ्जरियोंसे युक्त विकसित लतावल्लरियाँ फैली हुई हैं। वे वृक्ष झड़ते हुए पुष्पपरगरारूप धूलिकणोंसे सम्पूर्ण दिशाओंको सुवासित करते रहते हैं, वहाँ खिलते हुए नूतन कमल-वनोंसे निकलती मधुधाराओंके संचयसे लुभाये अन्तःकरणवाले भ्रमरोंका समुदाय मनोहर गुलार करता रहता है। हंस, कोकिल, शुक और

पारावत आदि पक्षियोंका समूह बारम्बार कलरव करते हुए वृन्दावनको कोलाहलपूर्ण किये रहता है। चारों ओर नृत्य करते मोरोंके झुंडसे वह वन अत्यन्त मनोरम जान पड़ता है। कालिन्दीकी चञ्चल लहरोंसे नीर-विन्दुओंको लेकर मन्द-मन्द गतिसे प्रवाहित होनेवाली शीतल सुखद वायु प्रफुल्ल पङ्कजोंके पराग-पुञ्जसे धूसर हो रही है। व्रजसुन्दरियोंके मृदुल वसनाञ्चलोंको वह चञ्चल किये देती है और इस प्रकार मनमें प्रेमोन्मादका उद्दीपन करती हुई वह मन्द वायु वृन्दावनका निरन्तर सेवन करती रहती है। उस वनके भीतर एक अत्यन्त मनोहर कल्पवृक्षका चिन्तन करे, जिसके नीचे सुवर्णमयी वेदीपर परम उत्तम रत्नमय पीठ शोभा पाता है। वहाँकी प्राङ्गण-भूमि भी रत्नोंसे आबद्ध है। उस रत्नमय पीठपर लाल रंगके अष्टदलकमलकी भावना करे, जिसके मध्यभागमें श्रीमुकुन्द विराजमान हैं। उनके स्वरूपका इस प्रकार ध्यान करे—उनकी अङ्ग-कान्ति विकसित नील कमलके समान श्याम है। वे मोर-पङ्कजका मुकुट पहने हुए हैं, कटिभागमें पीताम्बर शोभा पा रहा है। उनका मुख चन्द्रमाको लज्जित कर रहा है, नेत्र खिले हुए कमलोंकी शोभा छीने लेते हैं, उनका सम्पूर्ण अङ्ग कौस्तुभमणिकी प्रभासे उद्घासित हो रहा है, वक्षःस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न सुशोभित है। वे परम सुन्दर दिव्य आभूषणोंसे विभूषित हैं, व्रजसुन्दरियाँ मानो अपने नेत्रकमलोंके उपहारसे उनकी पूजा करती हैं, गौरै उन्हें सब ओरसे घेरकर खड़ी हैं। गोपवृन्द उनके साथ हैं और वे वंशी बजा रहे हैं। विद्वान् पुरुष भगवान्का चिन्तन करे।'

बुद्धिमान् साधक इस तरह ध्यान करके पहले बीस हजार मन्त्र-जप करे। फिर एकाग्रचित्त हो अरुण कमल-कुसुमोंकी दशांश आहुति दे। तत्पश्चात् समाहित होकर मन्त्र-सिद्धिके लिये पाँच लाख जप करे। लाल कमलोंकी आहुति देकर साधक

सम्पूर्ण सिद्धियोंका स्वामी हो जाता है। पूर्वोक्त वैष्णव पीठपर मूलमन्त्रसे मूर्ति-निर्माण करके उसमें गोपीजनमनोहर श्यामसुन्दर श्रीकृष्णका आवाहन और पूजन करे। मुखमें वेणुकी पूजा करके, वक्षःस्थलमें वनमाला, कौस्तुभ तथा श्रीवत्सका पूजन करे। इसके बाद पुष्टाङ्गलि चढ़ावे। तत्पश्चात् बुद्धिमान् उपासक देवेश्वर श्रीकृष्णका चिन्तन करते हुए उनके दक्षिणभागमें श्वेतचन्दनचर्चित श्वेत तुलसीको तथा वामभागमें रक्तचन्दनचर्चित लाल तुलसीको समर्पित करे। इसके बाद दो अश्वमार (कनेर) पुष्टोंसे उनके हृदय और मस्तककी पूजा करे। तदनन्तर शीर्षभागमें विधिपूर्वक दो कमलपुष्ट समर्पित करे। तत्पश्चात् उनके सम्पूर्ण अङ्गोंमें दो तुलसीदल, दो कमलपुष्ट और दो अश्वमार (श्वेत-रक्त कनेर) कुसुम चढ़ाकर फिर सब प्रकारके पुष्ट अर्पण करे। गोपाल श्रीकृष्णके दक्षिणभागमें अविनाशी निर्मल चैतन्यस्वरूप भगवान् वासुदेवका तथा वामभागमें रजोगुणस्वरूपा नित्य अनुरक्ता रुक्मणी देवीका पूजन करे। इस प्रकार गोपालका भलीभाँति पूजन करके आवरण देवताओंकी पूजा करे। दाम, सुदाम, वसुदाम और किंकिणी—इनका क्रमशः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तरमें पूजन करे। दाम आदि शब्दोंके आदिमें प्रणव और अन्तमें 'ङे' विभक्ति तथा 'नमः' पद जोड़ने चाहिये। (यथा—ॐ दामाय नमः इत्यादि, यदि दाम शब्द नान्त हो तो 'दामे नमः' यह रूप होगा) अग्नि, नैऋत्य, वायव्य तथा ईशान कोणोंमें क्रमशः हृदय, सिर, शिखा तथा कवचका पूजन करके सम्पूर्ण दिशाओंमें अस्त्रोंका पूजन करे। फिर आठों दलोंमें रुक्मणी आदि पटरानियोंकी पूजा करे। रुक्मणी, सत्यभामा, नागिजिती, सुविन्दा, मित्रविन्दा, लक्ष्मणा, जाम्बवती तथा सुशीला*। ये सब-की-सब सुन्दर, सुरम्य एवं विचित्र वस्त्राभूषणोंसे विभूषित हैं। तदनन्तर अष्टदलोंके

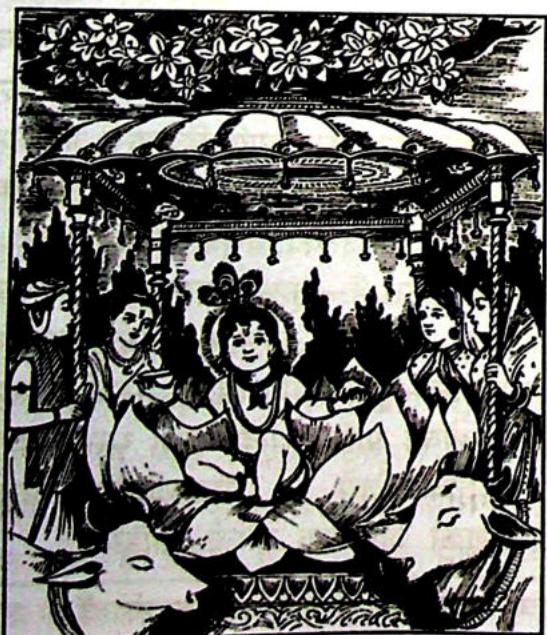
अग्रभागमें वसुदेव-देवकी, नन्द-यशोदा, बलभद्र-सुभद्रा तथा गोप और गोपियोंका पूजन करे। इन सबके मन, बुद्धि तथा नेत्र गोविन्दमें ही लगे हुए हैं। दोनों पिता वसुदेव और नन्द क्रमशः पीत और पाण्डु वर्णके हैं। माताएँ (देवकी और यशोदा) दिव्य हार, दिव्य वस्त्र, दिव्याङ्गराग तथा दिव्य आभूषणोंसे विभूषित हैं। दोनोंने चरु तथा खीरसे भरे हुए पात्र ले रखे हैं। देवकीका रंग लाल है और यशोदाका श्याम। दोनोंने सुन्दर हार और मणिमय कुण्डलोंसे अपनेको विभूषित किया है। बलरामजी शङ्ख तथा चन्द्रमाके समान गौरवर्णके हैं। वे मूसल और हल धारण करते हैं। उनके श्रीअङ्गोंपर नीले रंगका वस्त्र सुशोभित होता है। हलधरके एक कानमें कुण्डल शोभा पाता है। भगवान्‌की जो श्यामला कला है, वही भद्रस्वरूपा सुभद्रा है। उसके आभूषण भी भद्र (मङ्गल)-रूप हैं। सुभद्राजीके एक हाथमें वर और दूसरेमें अभय है। वे पीताम्बर धारण करती हैं। गोपणियोंके हाथमें वेणु, वीणा, सोनेकी छड़ी, शङ्ख और संग आदि हैं। गोपियोंके करकमलोंमें नाना प्रकारके खाद्य पदार्थ हैं। इन सबके बाह्यभागमें मन्दार आदि कल्पवृक्षोंकी पूजा करे। मन्दार, सन्तान, पारिजात, कल्पवृक्ष और हरिचन्दन (ये ही उन वृक्षोंके नाम हैं)। उक्त पाँच वृक्षोंसे चारकी चारों दिशाओंमें और एककी मध्यभागमें पूजा करके उनके बाह्यभागमें इन्द्र आदि दिव्यालों और उनके वज्र आदि अस्त्रोंकी पूजा करे। तत्पश्चात् श्रीकृष्णके आठ नामोंद्वारा उनका यजन करना चाहिये। वे नाम इस प्रकार हैं—कृष्ण, वासुदेव, देवकीनन्दन, नारायण, यदुश्रेष्ठ, वार्ष्णेय, धर्मपालक तथा असुरक्रान्त-भूभारहारी। विद्वान् पुरुषोंको सम्पूर्ण कामनाओंकी प्राप्तिके लिये तथा संसार-सागरसे पार होनेके लिये इन आवरणोंसहित असुरारि श्रीकृष्णकी आराधना करनी चाहिये।

* अन्यत्र सुशीला और सुविन्दाके स्थानमें भद्रा और कालिन्दी—ये दो नाम उपलब्ध होते हैं।

अब मैं भगवान् श्रीकृष्णके त्रिकाल पूजनका वर्णन करता हूँ जो समस्त मनोरथोंकी सिद्धि प्रदान करनेवाला है।

प्रातःकालिक ध्यान

श्रीमद्ब्रह्मानसंवीतहेमभूत्तमण्डपे ॥
लसत्कल्पद्रुमाधःस्थरत्राब्जपीठसंस्थितम् ।
सुत्रामरत्तसंकाशं गुडस्त्रिग्धालकं शिशुम्॥
चलत्कनककुण्डलोल्लसितचारुगण्डस्थलं
सुधोणधरमद्वृतस्मितमुखाम्बुजं सुन्दरम्।
स्फुरद्विमलरत्तयुक्तकनकसूत्रनद्वं दधत्-
सुवर्णपरिमणिडं सुभगपौण्डरीकं नखम्॥
समुद्धूसरोरःस्थले धेनुधूल्या
सुपुष्टाङ्गमष्टापदाकल्पदीसम् ।
कटीरस्थले चारुजङ्घान्तयुगम्
पिनद्वं ववणत्किङ्गिणीजालदाम्ना॥
हसन्तं हसद्वन्धुजीवप्रसून-
प्रभापाणिपादाम्बुजोदारकान्या ।
दधानं करे दक्षिणे पायसानं
सुहैयंगवीनं तथा वामहस्ते॥
लसद्वोपगोपीगवां वृन्दमध्ये
स्थितं वासवाद्यैः सुरर्चिताङ्गधिम्।
महीभारभूतामरारातियूथां-



स्ततः पूतनादीन् निहन्तुं प्रवृत्तम्॥

(ना० पूर्व० ८०। ७५—८०)

‘एक सुन्दर उद्यानसे घिरी हुई सुवर्णमयी भूमिपर रत्नमय मण्डप बना हुआ है। वहाँ शोभायमान कल्पवृक्षके नीचे स्थित रत्ननिर्मित कमलयुक्त पीठपर एक सुन्दर शिशु विराजमान है; जिसकी अङ्गकान्ति इन्द्रनीलमणिके समान श्याम है। उसके काले-काले केश चिकने और धुँधराले हैं। उसके मनोहर कपोल हिलते हुए स्वर्णमय कुण्डलोंसे अत्यन्त सुन्दर लगते हैं, उसकी नासिका बढ़ी सुधड़ है। उस सुन्दर बालकके मुखारविन्दपर मन्द मुसकानकी अद्वृत छटा छा रही है। वह सोनेके तारमें गुँथा और सोनेसे ही मँड़ा हुआ सुन्दर बघनखा धारण करता है, जिसमें परम उज्ज्वल चमकीले रत्न जड़े हुए हैं। गोधूलिसे धूसर वक्षःस्थलपर धारण किये हुए स्वर्णमय आभूषणोंसे उसकी दीसि बहुत बढ़ी हुई है। उसका एक-एक अङ्ग अत्यन्त पुष्ट है। उसकी दोनों पिण्डलियोंका अन्तिम भाग अत्यन्त मनोहर है। उसने अपने कटिभागमें धुँधरूदार करधनीकी लड़ बाँध रखी है, जिससे मधुर झनकार होती रहती है। खिले हुए बन्धुजीव (दुपहरिया)-के फूलकी अरुण प्रभासे युक्त करारविन्द और चरणारविन्दोंकी उदार कान्तिसे सुशोभित वह शिशु मन्द-मन्द हँस रहा है। उसने दाहिने हाथमें खीर और बायें हाथमें तुरन्तका निकाला हुआ माखन ले रखा है। ग्वालों, गोपसुन्दरियों और गौओंकी मण्डलीमें स्थित होकर वह बढ़ी शोभा पा रहा है। इन्द्र आदि देवता उसके चरणोंकी समाराधना करते हैं। वह पृथ्वीके भारभूत दैत्यसमुदाय पूतना आदिका संहार करनेमें लगा है।’

इस प्रकार ध्यान करके पूर्ववत् एकाग्रचित्त हो भगवान्‌का पूजन करे। दही और गुड़का नैवेद्य लगाकर एक हजार मन्त्र-जप करे। इसी प्रकार मध्याह्नकालमें नारदादि मुनिगणों और देवताओंसे

पूजित विशिष्ट रूपधारी भगवान् श्रीकृष्णका
पूजन करे।

मध्याह्नकालिक ध्यान
 लसदोपगोपीगवां वृन्दमध्य-
 स्थितं सान्द्रमेघप्रभं सुन्दराङ्गम्।
 शिखण्डच्छदापीडमब्जायताक्षं
 लसच्चिल्लिकं पूर्णचन्द्राननं च॥
 चलत्कुण्डलोल्लासिगण्डस्थलश्री-
 भरं सुन्दरं मन्दहासं सुनासम्।
 सुकार्तस्वराभाष्वरं दिव्यभूषं
 क्वणत्किङ्किणीजालमात्तानुलेपम् ॥
 वेणुं धमनं स्वकरे दधानं
 सव्ये दरं यष्टिमुदारवेषम्।
 दक्षे तथैवेषितदानदक्षं
 ध्यात्वार्चयेन्नन्दजमिन्दिराप्त्यै ॥

(ना० पूर्व० ८०। ८३—८५)

सुन्दर है, जो मयूरपिच्छका मुकुट धारण करते हैं, जिनके नेत्र कमलदलके समान विशाल हैं, भौंहोंका मध्यभाग शोभासम्पन्न है और मुख पूर्ण चन्द्रमाको भी लज्जित कर रहा है, हिलते और झलमलाते हुए कमनीय कुण्डलोंसे उल्लसित कपोलोंपर जो शोभाकी राशि धारण करते हैं, जिनकी नासिका मनोहर है, जो मन्द-मन्द हँसते हुए बड़े सुन्दर जान पड़ते हैं; जिनका वस्त्र तपाये हुए सुवर्णके समान कान्तिमान् और आभूषण दिव्य हैं, कटिभागमें धारण की हुई जिनकी क्षुद्र घण्टिकाओंसे मधुर झनकार हो रहा है, जिन्होंने दिव्य अङ्गराग धारण किया है, जो अपने हाथमें लेकर मुरली बजा रहे हैं, जिनके बायें हाथमें शङ्ख और दाहिने हाथमें छड़ी है, जिनकी वेश-भूषासे उदारता टपक रही है, जो मनोवाञ्छित वस्तु प्रदान करनेमें दक्ष हैं, उन नन्दनन्दन श्रीकृष्णका ध्यान करके लक्ष्मीप्राप्तिके लिये उनका पूजन करे।'

इस प्रकार ध्यान करके श्रेष्ठ वैष्णव पुरुष पूर्ववत् भगवान् श्रीकृष्णकी पूजा करे। पूआ, खीर तथा अन्य भक्ष्य-भोज्य पदार्थोंका नैवेद्य अर्पण करे। धृतयुक्त खीरकी एक सौ आठ आहुति देकर प्रत्येक दिशामें उसीसे बलि अर्पण करे। तत्पश्चात् आचमन करे। इसके बाद एक हजार आठ बार उत्तम मन्त्र-जप करे। जो उत्तम वैष्णव मध्याह्नकालमें इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्णका पूजन करता है, उसे सब देवता प्रणाम करते हैं और वह मनुष्य सब लोगोंका प्रिय होता है। वह मेधा, आयु, लक्ष्मी तथा सुन्दर कान्तिसे सुशोभित होकर पुत्र-पौत्रोंके साथ अभ्युदयको प्राप्त होता है। तीसरे समयकी पूजामें कौन-सा काल है, इस विषयमें मतभेद है। कुछ विद्वान् इस पूजाको सायंकालमें करने योग्य बताते हैं और कुछ रात्रिमें। दशाक्षर-मन्त्रसे पूजा करनी हो तो रातमें

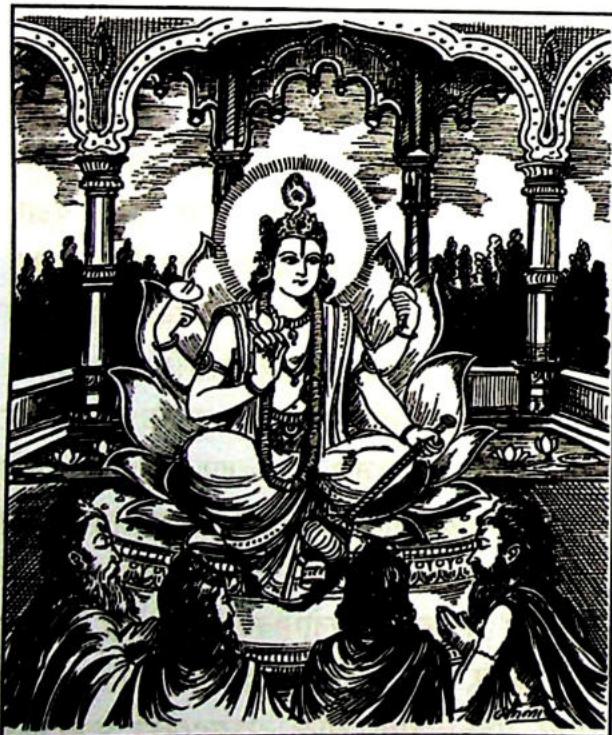


'जो सुन्दर गोप, गोपाङ्गनाओं तथा गौओंके मध्य विराजमान हैं, स्निग्ध मेघके समान जिनकी श्याम छबि है, जिनका एक-एक अङ्ग बहुत

करे। अष्टादशाक्षरसे करनी हो तो सायंकालमें करे। कुछ दूसरे विद्वान् ऐसा भी कहते हैं कि दोनों प्रकारके मन्त्रोंसे दोनों ही समय पूजा करनी चाहिये।

सायंकालिक ध्यान

सायंकालमें भगवान् श्रीकृष्ण द्वारकापुरीमें एक सुन्दर भवनके भीतर विराजमान हैं, जो विचित्र उद्यानसे सुशोभित है। वह श्रेष्ठ भवन आठ हजार गृहोंसे अलंकृत है। उसके चारों ओर निर्मल जलवाले सरोवर सुशोभित हैं। हंस, सारस आदि पक्षियोंसे व्यास कमल और उत्पल आदि पुष्प उन सरोवरोंकी शोभा बढ़ाते हैं। उक्त भवनमें एक शोभासम्पन्न मणिमय मण्डप है, जो उदयकालीन सूर्यदेवके समान अरुण प्रकाशसे प्रकाशित हो रहा है। उस मण्डपके भीतर



सुवर्णमय कमलकी आकृतिका सुन्दर सिंहासन है, जिसपर त्रिभुवनमोहन श्रीकृष्ण बैठे हैं। उनसे आत्मतत्त्वका निर्णय करानेके लिये मुनियोंके समुदायने उन्हें सब ओरसे घेर रखा है। भगवान् श्यामसुन्दर उन मुनियोंको अपने अविनाशी परम धामका उपदेश दे रहे हैं। उनकी अङ्गकान्ति विकसित नीलकमलके समान श्याम है। दोनों नेत्र प्रफुल्ल कमलदलके समान विशाल हैं। सिरपर स्त्रिघ्न अलकावलियोंसे संयुक्त सुन्दर किरीट सुशोभित है। गलेमें वनमाला शोभा पा रही है। प्रसन्न मुखारविन्द मनको मोहे लेता है। कपोलोंपर मकराकृति कुण्डल झलमला रहे हैं। वक्षःस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न है। वर्हीं कौस्तुभमणि अपनी प्रभा बिखेर रही है। उनका स्वरूप अत्यन्त मनोहर है। उनका वक्षःस्थल केसरके अनुलेपसे सुनहली प्रभा धारण करता है। वे रेशमी पीताम्बर पहने हुए हैं, विभिन्न अङ्गोंमें हार, बाजूबंद, कड़े और करधनी आदि आभूषण उन्हें अलंकृत कर रहे हैं। उन्होंने पृथ्वीका भारी भार उतार दिया। उनका हृदय परमानन्दसे परिपूर्ण है तथा उनके चारों हाथ शङ्ख, चक्र, गदा और पद्मसे सुशोभित हैं*।

इस प्रकार ध्यान करके मन्त्रोपासक भगवान्की पूजा करे। हृदय, सिर, शिखा, कवच, नेत्र और अस्त्र—इनके द्वारा प्रथम आवरण बनता है। रुक्मिणी आदि पटरानियोंद्वारा द्वितीय आवरण सम्पन्न होता है। तृतीय आवरणमें नारद, पर्वत, विष्णु, निशठ, उद्धव, दारुक, विष्वक्सेन तथा सात्यकि हैं, इनका आठ दिशाओंमें और विनतानन्दन गरुड़का भगवान्के सम्मुख पूजन करे। चौथे

* सायाहे द्वारवत्यां तु चित्रोद्यानोपशोभिते । अष्टसाहस्रसंख्यातैर्भवनैरुपमण्डिते ॥
हंससारससंकीर्णकमलोत्पलशालिभिः । सरोर्भिर्निर्मलाम्बोभिः परीते भवनोत्तमे ॥
उद्यत्रद्योतनोद्योतद्युतौ श्रीमणिमण्डये । हेमाम्बोजासनासीनं कृष्णं त्रैलोक्यमोहनम् ॥
मुनिवृद्दैः परिवृतमात्मतत्त्वविनिर्णये । तेभ्यो मुनिभ्यः स्वं धाम दिशन्तं परमक्षरम् ॥

आवरणमें लोकपालोंके साथ और पाँचवें आवरणमें वज्र आदि आयुधोंके साथ उत्तम वैष्णव भगवत्पूजनका कार्य सम्पन्न करे। इस प्रकार विधिपूर्वक पूजा करके खीरका नैवेद्य अर्पण करे। फिर जलमें खाँड़मिश्रित दूधकी भावना करके उस जलद्वारा तर्पण करे। उसके बाद मन्त्रोपासक पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्णका ध्यान करते हुए मूलमन्त्रका एक सौ आठ बार जप करे। तीनों कालकी पूजाओंमें अथवा केवल मध्याह्नकालमें ही होम करे। आसनसे लेकर विशेषार्घ्यपर्यन्त सम्पूर्ण पूजा पूरी करके विद्वान् पुरुष भगवान्की स्तुति और नमस्कार करे। फिर भगवान्को आत्मसमर्पण करके उनका विसर्जन करनेके पश्चात् अपने हृदयकमलमें उनकी स्थापना करे और तन्मय होकर पुनः आत्मस्वरूप भगवान्की पूजा करे। जो प्रतिदिन इस प्रकार सायंकालमें भगवान् वासुदेवकी पूजा करता है, वह सम्पूर्ण कामनाओंको पाकर अन्तमें परम गतिको प्राप्त होता है।

रात्रिकालिक ध्यान

रात्रौ चेन्मदनाक्रान्तचेतसं नन्दनन्दनम्।
यजेद्रासपरिश्रान्तं गोपीमण्डलमध्यगम्॥
विकसत्कुन्दकहारमल्लिकाकुसुमोद्धृतैः ।
रजोधीर्धूसरैर्मन्दमारुतैः शिशिरीकृतै॥
उन्मीलन्नवकैरवालिविगलन्माध्वीकलब्धान्तर-
भ्राम्यन्मत्तमिलिन्दगीतललिते सन्मल्लिकोजृभिते।
पीयूषांशुकरैर्विशालितहरित्यान्ते स्मरोद्धीपने
कालिन्दीपुलिनाङ्गणे स्मितमुखं वेणुं रणन्तं मुहुः॥
अन्तस्तोयलसन्नवाम्बुदघटासंघटुकारत्विषं

चञ्चल्लिकमम्बुजायतदृशं बिष्वाधरं सुन्दरम्।
मायूरच्छदबद्धमौलिविलसद्धग्निलमालं चलद-
दीप्यत्कुण्डलरत्नरश्मिविलसद्धण्डद्वयोद्धासितम् ॥
काञ्जीनूपुरहारकङ्गणलसत्केयूरभूषान्वितं
गोपीनां द्वितयान्तरे सुललितं वन्यप्रसूनस्वजम्।
अन्योन्यं विनिबद्धगोपदयितादोर्वल्लिवीतं लस-
द्रासक्रीडनलोलुपं मनसिजाक्रान्तं मुकुन्दं भजेत्॥
विविधश्रुतिभिन्नमनोज्ञतरस्वरसमकमूर्छनतानगणैः ।
भ्रममाणममूर्भिरुदारमणिस्फुटमण्डनशिङ्गितचारुतनुम्॥
इतरेतरबद्धकरप्रमदागणकल्पितरासविहारविधौ ।
मणिशङ्कुगमव्यमुना वपुषाबहुधा विहितस्वकदिव्यतनुम्॥

(ना० पूर्व० ८०। १०७—११३)

‘रात्रिमें पूजन करना हो तो भगवान्का ध्यान इस प्रकार करे—भगवान् नन्दनन्दनने अपने हृदयमें प्रेमको आश्रय दे रखा है। वे रासक्रीडामें संलग्न हो मानो थक गये हैं और गोपाङ्गनाओंकी मण्डलीके मध्यभागमें विराज रहे हैं। उस समय यमुनाजीका पुलिन-प्राङ्गण अमृतमय किरणोंवाले चन्द्रदेवकी धवल ज्योत्स्नासे उद्धासित हो रहा है। वहाँका प्रान्त अत्यन्त हरा-भरा एवं भगवत्प्रेमका उद्दीपक हो रहा है। खिले हुए कुन्द, कहार और मल्लिका आदि कुसुमोंके परागपुञ्जसे धूसरित मन्द-मन्द वायु प्रवाहित होकर उस पुलिन-प्राङ्गणको शीतल बना रही है। खिले हुए नूतन कुमुदोंके मादक मकरन्दका पान करके उन्मत्त हृदयवाले भ्रमर इधर-उधर भ्रमण करते हुए मधुर गुआरव फैला रहे हैं; जिससे वह वनप्रान्त अत्यन्त मनोहर प्रतीत होता है। वहाँ सब ओर सुन्दर चमेलीकी

उत्तिन्द्रेन्दीवरश्यामं पद्मपत्रायतेक्षणम् । स्त्रिगधकुन्तलसम्भिन्नकिरीटवनमालिनम् ॥
चारुप्रसन्नवदनं स्फुरन्मकरकुण्डलम् । श्रीवत्सवक्षसं भ्राजत्कौस्तुभं सुमनोहरम्॥
काश्मीरकपिशोरसं पीतकौशेयवाससम् । हारकेयूरकटककटिसूत्रैरलङ्घतम् ॥
हतविश्वभराभूरिभारं मुदितमानसम् । शङ्कुचक्रगदापद्मराजद्वुजतुष्टयम् ॥

(ना० पूर्व० ८०। ९२—९९)

सुगन्धि फैल रही है। ऐसे मनोहर कालिन्दीतटपर श्यामसुन्दर मुखसे मन्द-मन्द मुसकानकी प्रभा बिखेरते हुए बारम्बार मुरली बजा रहे हैं। उनकी अङ्गकान्ति भीतर जलसे भरे हुए नूतन मेघोंकी श्याम घटासे टक्कर ले रही है। भौंहोंका मध्यभाग कुछ चञ्चल हो उठा है। दोनों नेत्र विकसित कमलदलके समान विशाल हैं। लाल-लाल अधर बिम्बफलको लजा रहे हैं। भगवान्‌की वह झाँकी बड़ी ही सुन्दर है। माथेपर मोरपंखका मुकुट है, जिससे उनके बँधे हुए केशोंकी चोटी बड़ी सुहावनी लग रही है। उनके दोनों कपोल हिलते हुए चमकीले कुण्डलोंमें जटित रत्नोंकी किरणोंसे उद्घासित हो रहे हैं और उन कपोलोंसे श्यामसुन्दरका सौन्दर्य और भी बढ़ गया है। वे करधनी, नूपुर, हार, कंगन और सुन्दर भुजबंद आदि आभूषणोंसे विभूषित हो प्रत्येक दो गोपीके बीचमें खड़े होकर अपनी मनमोहिनी झाँकी दिखा रहे हैं। गलेमें वन्यपुष्पोंका हार सुशोभित है। एक-दूसरीसे अपनी बाँहोंको मिलाये हुए नृत्य करनेवाली गोपाङ्गनाओंकी बाहु-वल्लरियोंसे वे धिरे हुए हैं। इस प्रकार परम सुन्दर शोभामयी दिव्य रासलीलाके लिये सदा उत्सुक

रहनेवाले प्रेमके आश्रयभूत भगवान् मुकुन्दका भजन करे। वे नाना प्रकारकी श्रुतियोंके भेदसे युक्त परम मनोहर सात स्वरोंकी मूर्च्छना^१ और तीनोंके^२ साथ-साथ गोपाङ्गनाओंसहित थिरक रहे हैं। सुन्दर मणिमय स्वच्छ आभूषणोंके मधुर शिखनसे भगवान्‌का सम्पूर्ण मनोहर अङ्ग ही झनकारमय हो उठा है। एक-दूसरीसे हाथ बाँधकर मण्डलाकार खड़ी हुई गोपाङ्गनाओंके समूहसे कल्पित रासलीलामण्डलकी रचनामें यद्यपि भगवान् श्यामसुन्दर बीचमें मणिमय मेखकी भाँति स्थित हैं तथापि इसी शरीरसे उन्होंने अपने बहुत-से दिव्य स्वरूप प्रकट कर लिये हैं (और उन स्वरूपोंसे प्रत्येक दो गोपीके बीचमें स्थित हैं)।'

इस प्रकार ध्यान करके मन्त्रोपासक भगवान्‌की पूजा करे। हृदयादि अङ्गोंद्वारा प्रथम आवरणकी पूजा होती है। धन-सम्पत्तिकी इच्छा रखनेवाला श्रेष्ठ वैष्णव पूर्वोक्त केशव-कीर्ति आदि सोलह जोड़ोंकी कमलपुष्पोंद्वारा पूजा करे। उन सबके नामके आदिमें क्रमशः सोलह स्वरोंको संयुक्त करें। तदनन्तर इन्द्र आदि दिक्पालों और वज्र आदि आयुधोंकी पूजा करे। एक मोटा, गोल

१. संगीतमें किसी सप्तकके बाईस भागोंमेंसे एक भाग अथवा किसी स्वरके एक अंशको श्रुति कहते हैं। स्वरका आरम्भ और अन्त इसीसे होता है। षड्जमें चार, त्रृष्णभमें तीन, गान्धारमें दो, मध्यम और पञ्चममें चार-चार, धैवतमें तीन और निषादमें दो श्रुतियाँ होती हैं।

२. संगीतमें एक ग्रामसे दूसरे ग्रामतक जानेमें सातों स्वरोंका जो आरोहावरोह होता है, उसीका नाम मूर्च्छना है। ग्रामके सातवें भागको ही मूर्च्छना कहते हैं। भरत मुनिके मतसे गाते समय गलेकी कँपकँपीसे ही मूर्च्छना होती है। किसी-किसीके मतसे स्वरके सूक्ष्म विरामका नाम मूर्च्छना है। तीन ग्राम होनेके कारण इक्कीस मूर्च्छनाएँ होती हैं।

३. मूर्च्छना आदिद्वारा राग या स्वरके विस्तारको तान कहते हैं। संगीत दामोदरके मतसे स्वरोंसे उत्पन्न तान ४९ हैं। इन ४९ तानोंसे भी ८,३०० कूट तान निकलते हैं। किसी-किसीके मतसे कूट तीनोंकी संख्या ५०४० भी मानी गयी है।

१. केशव-कीर्ति, नारायण-कान्ति, माधव-तुष्टि, गोविन्द-पुष्टि, विष्णु-धृति, मधुसूदन-शान्ति, त्रिविक्रम-क्रिया, वामन-दया, श्रीधर-मेधा, हृषीकेश-हर्षा, पद्मनाभ-त्रद्वा, दामोदर-लज्जा, वासुदेव-लक्ष्मी, संकरण-सरस्वती, प्रद्युम्न-प्रीति और अनिरुद्ध-रति—ये सोलह जोड़े हैं। इनके आदिमें क्रमशः 'अ आ इ ई उ ऊ ऋ लृ लृ लृ ए ऐ ओ औ अं अः' इन सोलह स्वरोंको अनुस्वार युक्त करके जोड़ना चाहिये। यथा—'अं केशवकीर्तिभ्यां नमः, अं नारायणकान्तिभ्यां कान्त्यै नमः' इत्यादि। इन्हीं मन्त्रोंसे इनकी पूजा करनी चाहिये।

और चिकना खूँटा जिसकी ऊँचाई एक बितेकी हो, पृथ्वीमें गाड़ दे और उसे पैरोंसे दबाकर एक-दूसरेसे हाथ मिलाकर उसके चारों ओर चक्कर देना रासगोष्ठी कही गयी है। इस प्रकार पूजा करके दूध, धी और मिश्री मिलाकर भगवान्‌को नैवेद्य अर्पण करे और सोलह प्याले लेकर उनमें मिश्री मिलायी हुई खीर परोसे और पूर्वोक्त जोड़ोंको क्रमशः अर्पण करे। फिर शेष कार्य पूर्ववत् करके मन्त्रोपासक एक हजार मन्त्र-जप करे। तत्पश्चात् स्तुति, नमस्कार और प्रार्थना करके पूजनका शेष कार्य भी समाप्त करे। इस प्रकार जो उपासक भगवान् श्रीकृष्णका पूजन करता है, वह समृद्धिका आश्रय होता है तथा अणिमा आदि आठ सिद्धियोंका स्वामी हो जाता है; इसमें संशय नहीं है। इहलोकमें वह विविध भोगोंका उपभोग करके अन्तमें भगवान् विष्णुके धाममें जाता है। इस तरह पूजा आदिके द्वारा मन्त्रके सिद्ध होनेपर अभीष्ट मनोरथोंकी सिद्धि करे। अथवा विद्वान् पुरुष अद्वाईस बार मन्त्र-जपपूर्वक तीनों समय भगवान्‌की पूजा करे। उस-उस कालमें कथित परिवारों (आवरण देवताओं)-का भी तर्पण करे। प्रातःकाल गुड़मिश्रित दहीसे, मध्याह्नकालमें मक्खनयुक्त दूधसे और सायंकालमें मिश्री मिलाये हुए दूधसे श्रेष्ठ वैष्णव तर्पण करे। मन्त्रके अन्तमें तर्पणीय देवताओंके नामोंमें द्वितीया विभक्ति जोड़कर अन्तमें 'तर्पयामि' पदका प्रयोग करे। तत्पश्चात् शेष पूजा पूरी करे। भगवत्प्रसादस्वरूप जलसे अपने-आपको सींचकर उस जलको पीये। उससे तृप्त होकर देवताका विसर्जन करके तन्मय हो मन्त्र-जप करे।

अब सकामभावसे किये जानेवाले तर्पणोंमें आवश्यक द्रव्य बताये जाते हैं। शास्त्रोक्त विधानसम्बन्धी उन वस्तुओंका आश्रय लेकर उनमेंसे किसी एकका भी सेवन करे। खीर,

दही बड़ा, धी, गुड़ मिला हुआ अन्न, खिचड़ी, दूध, दही, केला, मोचा, चिंचा (इमली), चीनी, पूआ, मोदक, खील (लाजा), चावल, मक्खन—ये सोलह द्रव्य ब्रह्मा आदिके द्वारा तर्पणोपयोगी बताये गये हैं। जो प्रातःकाल अन्तमें लाजा और पहले चावल तथा मिश्री अर्पित करके चौहत्तर बार तर्पण करता है, साथ ही भगवान् श्रीकृष्णके चरणोंका ध्यान करता रहता है, वह मन्त्रोपासक अभीष्ट वस्तुको प्राप्त कर लेता है। धारोष्ण तथा पके हुए दूधसे—मक्खन, दही, दूध और आमके रस, धी, मोटी चीनी, मधु और कीलल (शर्वत)—इन नौ द्रव्योंमेंसे प्रत्येकके द्वारा बारह बार तर्पण करे। इस प्रकार जो श्रेष्ठ वैष्णव एक सौ आठ बार तर्पण करता है, वह पूर्वोक्त फलका भागी होता है। बहुत कहनेसे क्या लाभ? वह तर्पण सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको देनेवाला है। मिश्री मिलाये हुए धारोष्ण दुग्धकी भावनासे जलद्वारा श्रीकृष्णका तर्पण करके गाँवको जानेवाला साधक वहाँ अपने पारिवारिक लोगोंके साथ धन, वस्त्र एवं भोज्य पदार्थ प्राप्त कर लेता है। मन्त्रोपासक जितनी बार तर्पण करे, उतनी ही संख्यामें जप करे। वह तर्पणसे ही सम्पूर्ण कार्य सिद्ध कर लेता है।

अब मैं साधकोंके हितके लिये सकाम होमका वर्णन करता हूँ। उत्तम श्रीकी अभिलाषा रखनेवाला मन्त्रोपासक बेलके फूलोंसे होम करे। घृत और अन्नकी वृद्धिके लिये घृतयुक्त अन्नकी आहुति दे।

अब मैं एक उत्तम रहस्यका वर्णन करता हूँ जो मनुष्योंको मोक्ष प्रदान करनेवाला है। साधक अपने हृदयकमलमें भगवान् देवकीनन्दनका इस प्रकार ध्यान करे—

श्रीमत्कुन्देन्दुगौरं सरसिजनयनं शङ्खचक्रं गदाढ्ये विभाणं हस्तपद्मैर्नवनलिनलसन्मालया दीप्यमानम्॥

वन्दे वेद्यं मुनीन्द्रैः कणिकमणिलसहिव्यभूषाभिरामं
दिव्याङ्गलेपभासं सकलभयहरं पीतवस्त्रं मुरारिम्॥

(ना० पूर्व० ८०। १५०)



‘जो कुन्द और चन्द्रमाके समान सुन्दर गौरवणके हैं, जिनके नेत्र कमलकी शोभाको लज्जित कर रहे हैं, जो अपने करारविन्दोंमें शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण करते हैं, नूतन कमलोंकी सुन्दर मालासे सुशोभित हैं, छोटी-छोटी मणियोंसे जटित सुन्दर दिव्य आभूषण जिनके अनुपम सौन्दर्य-माधुर्यको और बढ़ा रहे हैं तथा जिनके श्रीअङ्गोंमें दिव्य अङ्गराग शोभा पा रहा है, उन मुनीन्द्रवेद्य, सकल भयहारी, पीताम्बरधारी मुरारिकी मैं वन्दना करता हूँ।’

इस प्रकार ध्यान करके आदिपुरुष श्रीकृष्णको अपने विकसित हृदयकमलके आसनपर विराजमान देखे और यह भावना करे कि वे घनीभूत मेघोंकी श्याम घटा तथा अद्भुत सुवर्णकी-सी नील एवं पीत प्रभा धारण करते हैं। इस चिन्तनके साथ साधक बारह लाख मन्त्रका जप

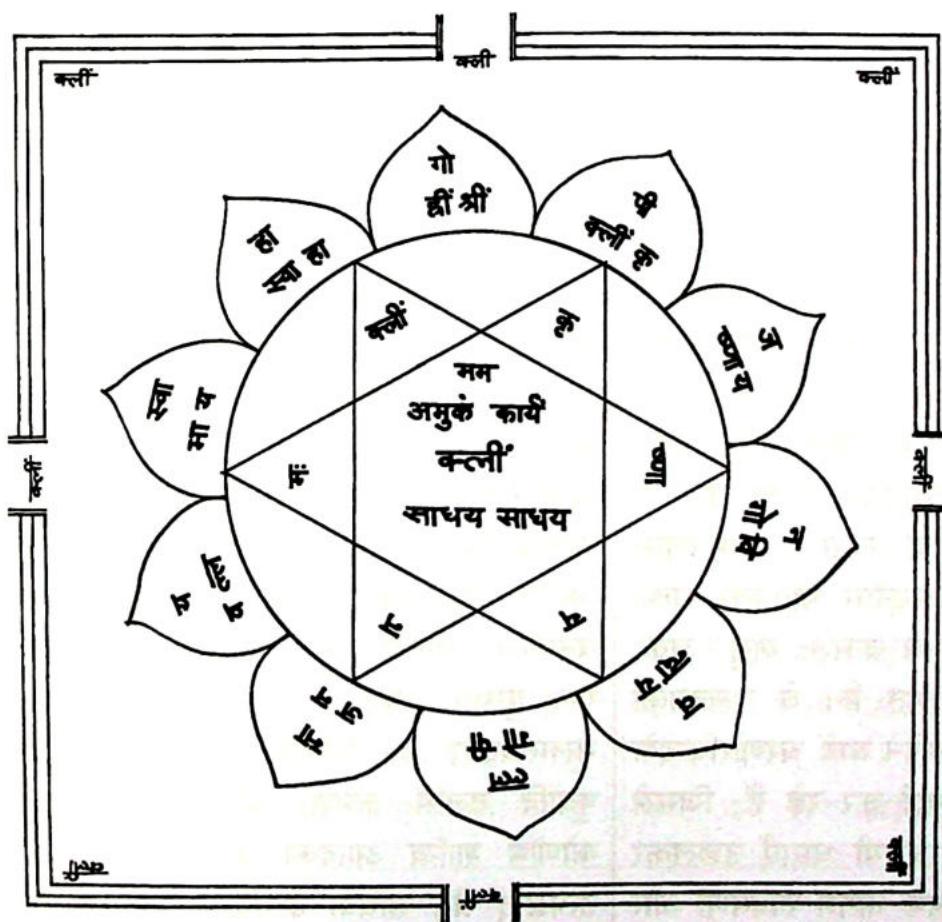
करे। दो प्रकारके मन्त्रोंमेंसे एकका, जो प्रणवसम्पुटित है, जप करना चाहिये। फिर दूधवाले वृक्षोंकी समिधाओंसे बारह हजार आहुति दे अथवा मधु-घृत एवं मिश्रीमिश्रित खीरसे होम करे। इस प्रकार मन्त्रोपासक अपने हृदयकमलमें लोकेश्वरोंके भी आराध्यदेव भगवान् श्रीकृष्णका ध्यान करते हुए प्रतिदिन तीन हजार मन्त्रका जप करे। फिर सायंकालके लिये बतायी हुई विधिसे भलीभाँति पूजा करके साधक भगवत्-चिन्तनमें संलग्न हो पुनः पूर्वोक्त रीतिसे हवन करे। जो विद्वान् इस तरह गोपालनन्दन श्रीकृष्णका नित्य भजन करता है, वह भवसागरसे पार हो परमपदको प्राप्त होता है।

पहले दो त्रिभुज अङ्कित करे; जिसमें एक ऊर्ध्वमुख और दूसरा अधोमुख हो। एकके ऊपर दूसरा त्रिकोण होना चाहिये। इस प्रकार छः कोण हो जायेंगे। कोण बाह्य भागमें होंगे। उनके बीचमें जो षट्कोण चक्र होगा, उसे अग्निपुर कहते हैं। उस अग्निपुरकी कर्णिका (मध्यभाग)-में ‘कलीं’ यह बीजमन्त्र अङ्कित करे। उसके साथ साध्य पुरुष एवं कार्यका भी उल्लेख करे। बहिर्गत कोणोंके विवरमें षडक्षर-मन्त्र लिखे। छः कोणोंके ऊपर एक गोलाकार रेखा खींचकर उसके बाह्यभागमें दस-दल कमल अङ्कित करे। उन दस दलोंके केसरोंमें एक-एकमें दो-दो अक्षरके क्रमसे ‘ह्रीं’ और ‘श्रीं’ पूर्वक अष्टादशाक्षर-मन्त्रके अक्षरोंका उल्लेख करे। तदनन्तर दलोंके मध्यभागमें दशाक्षर-मन्त्रके एक-एक अक्षरोंको लिखे। इस प्रकार लिखे हुए दस-दल चक्रको भूपुरसे (चौकोर रेखासे) आवृत करे। भूपुरमें अस्त्रोंके स्थानमें कामबीज (कलीं)- का उल्लेख करे। इस यन्त्रको सोनेके पत्रपर सोनेकी ही शलाकासे गोरोचनद्वारा लिखकर उसकी गुटिका बना ले। यही गोपाल-यन्त्र है। यह सम्पूर्ण

मनोरथोंको देनेवाला कहा गया है। जो रक्षा, यश, पुत्र, पृथ्वी, धन-धान्य, लक्ष्मी और सौभाग्यकी इच्छा रखनेवाले हों उन श्रेष्ठ पुरुषोंको निरन्तर यह यन्त्र धारण करना चाहिये। इसका अभिषेक करके मन्त्र-जपपूर्वक इसे धारण करना उचित है। यह तीनों लोकोंको वशमें करनेके लिये एकमात्र कुशल (अमोघ) उपाय है। इसकी महती शक्ति अवर्णनीय है।

स्मर (क्ली), त्रिविक्रम (ऋ) युक्त चक्री (क्) अर्थात् कृ, इसके पश्चात् ऋष्याय तथा हृत्

मायाबीज 'ह्री' कहे गये हैं। मृत्यु (श), वह्नि (र), गोविन्द (ई) और चन्द्र (-अनुस्वार)-से युक्त हो तो श्रीबीज—'श्री' कहा गया है। इन दोनों बीजोंसे युक्त होनेपर अष्टादशाक्षर-मन्त्र (ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा) बीस अक्षरोंका हो जाता है। शालग्राममें, मणिमें, यन्त्रमें, मण्डलमें तथा प्रतिमाओंमें ही सदा श्रीहरिकी पूजा करनी चाहिये; केवल भूमिपर नहीं। जो इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना करता है, वह परमगतिको प्राप्त होता है। बीस अक्षरवाले मन्त्रके ब्रह्मा ऋषियहैं।



(नमः)— यह (क्लीं कृष्णाय नमः) षडक्षर-मन्त्र कहा गया है, जो सम्पूर्ण मनोरथोंको सिद्ध करनेवाला है। वाराह (ह), अग्नि (र), शान्ति (ई) और इन्दु (अनुस्वार) —ये सब मिलकर

(इष्टदेवके साथ तन्मयता) प्राप्त करनेके लिये मन्त्र-न्यास करे। मूर्तिपञ्चर नामक न्यास पूर्ववत् करे। फिर षडङ्ग-न्यास करके हृदयकमलमें भगवान् श्रीकृष्णका इस प्रकार ध्यान करे।

द्वारकापुरीमें सहस्रों सूर्योंके समान प्रकाशमान सुन्दर महलों और बहुतेरे कल्पवृक्षोंसे घिरा हुआ एक मणिमय मण्डप है, जिसके खंभे अग्निके समान जाज्वल्यमान रत्नोंके बने हुए हैं। उसके द्वार, तोरण और दीवारें सभी प्रकाशमान मणियोंद्वारा निर्मित हैं। वहाँ खिले हुए सुन्दर पुष्पोंके चित्रोंसे सुशोभित चँदोवोंमें मोतियोंकी झालों लटक रही हैं। मण्डपका मध्यभाग अनेक प्रकारके रत्नोंसे निर्मित हुआ है, जो पद्मराग मणिमयी भूमिसे सुशोभित है। वहाँ एक कल्पवृक्ष है, जिससे निरन्तर दिव्य रत्नोंकी धारावाहिक वृष्टि होती रहती है। उस वृक्षके नीचे प्रज्वलित रत्नमय प्रदीपोंकी पद्मक्षियोंसे चारों ओर दिव्य प्रकाश छाया रहता है। वहाँ मणिमय सिंहासनपर दिव्य कमलका आसन है, जो उदयकालीन सूर्यके समान अरुण प्रभासे उद्भासित हो रहा है। उस आसनपर विराजमान भगवान् श्रीकृष्णका चिन्तन करे, जो तपाये हुए सुवर्णके समान तेजस्वी हैं। उनका प्रकाश समानरूपसे सदा उदित रहनेवाले कोटि-कोटि चन्द्रमा, सूर्य और विद्युतके समान है। वे सर्वाङ्गसुन्दर, सौम्य तथा समस्त आभूषणोंसे विभूषित हैं। उनके श्रीअङ्गोंपर पीताम्बर शोभा पाता है। उनके चार हाथ क्रमशः शङ्ख, चक्र, गदा और पद्मसे सुशोभित हैं। वे पल्लवकी छविको छीन लेनेवाले अपने बायें चरणारविन्दके अग्रभागसे कलशका स्पर्श कर रहे हैं; जिससे बिना किसी आघातके रत्नमयी धाराएँ उछलकर गिर रही हैं। उनके दाहिने भागमें रुक्मिणी और वामभागमें सत्यभामा खड़ी होकर अपने हाथोंमें दिव्य कलश ले उनसे निकलती हुई रत्नरशिमयी जलधाराओंसे उन (भगवान् श्रीकृष्ण)-के मस्तकपर अभिषेक कर रही हैं। नाग्रजिती (सत्य) और सुनन्दा ये उक्त देवियोंके समीप खड़ी हो उन्हें

एकके बाद दूसरा कलश अर्पण कर रही हैं। इन दोनोंको क्रमशः दायें और वामभागमें खड़ी हुई मित्रविन्दा और लक्ष्मणा कलश दे रही हैं और इनके भी दक्षिण वामभागमें खड़ी जाम्बवती और सुशीला रत्नमयी नदीसे रत्नपूर्ण कलश भरकर उनके हाथोंमें दे रही हैं। इनके बाह्यभागमें चारों ओर खड़ी हुई सोलह सहस्र श्रीकृष्णवल्लभाओंका ध्यान करे, जो सुवर्ण एवं रत्नमयी धाराओंसे युक्त कलशोंसे सुशोभित हो रही हैं। उनके बाह्यभागमें आठ निधियाँ हैं, जो धनसे वहाँ वसुधाको भरपूर किये देती हैं। उनके बाह्यभागमें सब वृष्णिवंशी विद्यमान हैं और पहलेकी भाँति स्वर आदि भी हैं।

इस प्रकार ध्यान करके पाँच लाख जप करे और लाल कमलोंद्वारा दशांश होम करके पूर्वोक्त वैष्णवपीठपर भगवान्का पूजन करे।

पूर्ववत् पीठकी पूजा करनेके पश्चात् मूलमन्त्रसे मूर्तिकी कल्पना करके उसमें भक्तिपूर्वक भगवान् श्रीकृष्णका आवाहन करे और उसमें पूर्णताकी भावनासे पूजा करे। आसनसे लेकर आभूषणतक भगवान्को अर्पण करके फिर न्यासक्रमसे आराधना करे। सृष्टि, स्थिति, षडङ्ग, किरीट, कुण्डलद्वय, शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, वनमाला, श्रीवत्स तथा कौस्तुभ—इन सबका गन्ध-पुष्पसे पूजन करके श्रेष्ठ वैष्णव मूलमन्त्रद्वारा छः कोणोंमें छः अङ्गोंका और पूर्वादि दलोंमें क्रमशः वासुदेव आदि तथा कोणोंमें शान्ति आदिका क्रमशः पूजन करे। तत्पश्चात् श्रेष्ठ साधक दलोंके अग्रभागमें आठों पटरानियोंका पूजन करे। तदनन्तर सोलह हजार श्रीकृष्णपत्रियोंकी एक ही साथ पूजा करे। इसके बाद इन्द्र, नील, मुकुन्द, कराल, आनन्द, कच्छप, शङ्ख और पद्म—इन आठ निधियोंका क्रमशः पूजन करे। उनके बाह्यभागमें इन्द्र आदि

लोकपालों तथा वज्र आदि आयुधोंकी पूजा करे। इस प्रकार सात आवरणोंसे घिरे हुए श्रीकृष्णका आदरपूर्वक पूजन करके दही, खाँड़ और धी मिले हुए दुग्धमिश्रित अन्नका नैवेद्य लगाकर उन्हें तृप्त करे। तदनन्तर दिव्योपचार समर्पित करके स्तुति और नमस्कारके पश्चात् परिवारगणों (आवरण देवताओं)-के साथ भगवान् केशवका अपने हृदयमें विसर्जन करे। भगवान्‌को अपनेमें बिठाकर भगवत्स्वरूप आत्माका पूजन करके विद्वान् पुरुष तन्मय होकर विचरे। रत्नाभिषेकयुक्त ध्यानमें वर्णित भगवत्स्वरूपकी पूजा बीस अक्षरवाले मन्त्रके आश्रित है। इस प्रकार जो मन्त्रकी आराधना करता है, वह समृद्धिका आश्रय होता है। जो जप, होम, पूजन और ध्यान करते हुए उक्त मन्त्रका जप करता है, उसका घर रलों, सुवर्णों तथा धन-धान्योंसे निरन्तर परिपूर्ण होता रहता है। यह विशाल पृथ्वी उसके हाथमें आ जाती है और वह सब प्रकारके शस्योंसे सम्पन्न होती है। साधक पुत्रों और मित्रोंसे भरा-पूरा रहता है और अन्तमें परमगतिको प्राप्त होता है। उक्त मन्त्रसे साधक इस प्रकारके अनेक प्रयोगोंका साधन कर सकता है। अब मैं सम्पूर्ण सिद्धियोंको देनेवाले मन्त्रराज दशाक्षरका वर्णन करता हूँ।

स्मृति (ग) यह सद्य (ओ)-से युक्त हो और लोहित (प) वामनेत्र (ई)-से संलग्न हो। इसके बाद 'जनवल्लभा' ये अक्षरसमुदाय हों।

तत्पश्चात् पवन (य) हो और अन्तमें अग्निप्रिया (स्वाहा) हो तो यह (गोपीजनवल्लभाय स्वाहा) दशाक्षर मन्त्र कहा गया है। इसके नारद ऋषि, विराट् छन्द, श्रीकृष्ण देवता, कलीं बीज और स्वाहा शक्ति है। यह बात मनीषी पुरुषोंने बतायी है। आचक्र, विचक्र, सुचक्र, त्रैलोक्यरक्षणचक्र तथा असुरान्तकचक्र—इन शब्दोंके अन्तमें 'डें' विभक्ति और स्वाहा पद जोड़कर इन पञ्चविध चक्रोंद्वारा पञ्चाङ्ग-न्यास करें। तदनन्तर प्रणव-सम्पुटित मन्त्र पढ़कर तीन बार दोनों हाथोंमें व्यापक-न्यास करे। तत्पश्चात् मन्त्रके प्रत्येक अक्षरको अनुस्वारयुक्त करके उनके आदिमें प्रणव और अन्तमें नमः जोड़कर उनका दाहिने अंगूठेसे लेकर बायें अंगूठेतक अंगुलि-पर्वोंमें न्यास करें। यह सृष्टिन्यास बताया गया है। अब स्थितिन्यास कहा जाता है। विद्वान् पुरुष स्थितिन्यासमें बायीं कनिष्ठासे लेकर दाहिनी कनिष्ठातक पूर्वोक्तरूपसे मन्त्राक्षरोंका न्यास करे। संहारन्यासमें बायें अंगूठेसे दाहिने अंगूठेतक उक्त मन्त्राक्षरोंका न्यास करना चाहिये। यह संहारन्यास दोषसमुदायका नाश करनेवाला कहा गया है। शुद्धचेता ब्रह्मचारियोंको चाहिये कि वे स्थिति और संहारन्यास पहले करके अन्तमें सृष्टिन्यास करें; क्योंकि वह विद्या प्रदान करनेवाला है। गृहस्थोंके लिये अन्तमें स्थितिन्यास करना उचित है। (उन्हें सृष्टि और संहारन्यास पहले कर लेना चाहिये।) क्योंकि स्थितिन्यास

१. न्यास-वाक्यका प्रयोग इस प्रकार है—

ॐ आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः।

ॐ विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा।

ॐ सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्।

ॐ त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुम्।

ॐ असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्।

२. यथा—३० गों नमः, दक्षिणाङ्गुष्ठपर्वसु। ३० पीं नमः, दक्षिणतर्जनीपर्वसु। ३० जं नमः, दक्षिणमध्यमापर्वसु। ३० नं नमः, दक्षिणानामिकापर्वसु। ३० वं नमः, दक्षिणकनिष्ठिकापर्वसु। ३० ल्लं नमः, वामकनिष्ठिकापर्वसु। ३० भां नमः, वामानामिकापर्वसु। ३० यं नमः, वाममध्यमापर्वसु। ३० स्वां नमः, वामतर्जनीपर्वसु। ३० हां नमः, वामाङ्गुष्ठपर्वसु।

काम्यादिस्वरूप (कामनापूरक) है। विरक्त मुनीश्वरोंको सर्वदा अन्तमें संहारन्यास करना चाहिये। तदनन्तर साधक पुनः स्थितिक्रमसे मन्त्राक्षरोंका अंगुलियोंमें न्यास करे। तत्पश्चात् पुनः पूर्वोक्त चक्रोद्घारा हाथोंमें पञ्चाङ्ग-न्यास करे। (यथा—ॐ आचक्राय स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ विचक्राय स्वाहा तर्जनीभ्यां नमः। ॐ सुचक्राय स्वाहा मध्यमाभ्यां नमः। ॐ त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा अनामिकाभ्यां नमः। ॐ असुरान्तकचक्राय स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां नमः) तदनन्तर विद्वान् पुरुष मूलमन्त्रसे सम्पुटित अनुस्वारयुक्त मातृका वर्णोंका मातृकान्यासके स्थलोंमें विनीतभावसे न्यास करे। उसके बाद प्रणवसम्पुटित मूलमन्त्रका उच्चारण करके व्यापक न्यास करे। तत्पश्चात् पूर्वोक्त मूर्तिपञ्चर नामक न्यास करे। उसके बाद क्रमशः दशाङ्ग-न्यास और पञ्चाङ्ग-न्यास करे। दशाङ्ग-न्यासकी विधि इस प्रकार है—हृदय, मस्तक, शिखा, सर्वाङ्ग, सम्पूर्ण दिशा, दक्षिणापार्श्व, वामपार्श्व, कटि, पृष्ठ तथा मूर्धा—इन अङ्गोंमें श्रेष्ठ वैष्णवमन्त्रके एक-एक अक्षरका न्यास करे। फिर एकाग्रचित्त हो पूर्वोक्त चक्रोद्घारा पुनः पूर्ववत् पञ्चाङ्ग-न्यास करे। इसके सिवा अष्टादशाक्षरमन्त्रके लिये बताये हुए अन्य प्रकारके न्यासोंका भी यहाँ संग्रह कर लेना चाहिये। तदनन्तर विद्वान् पुरुष किरीट

मन्त्रसे व्यापक-न्यास करे। फिर श्रेष्ठ साधक वेणु और बिल्व आदिकी मुद्रा दिखाये। फिर सुदर्शन मन्त्रसे दिग्बन्ध करे। अङ्गुष्ठको छोड़कर शेष अंगुलियाँ यदि सीधी रहें तो यह हृदयमुद्रा कही गयी है। शिरोमुद्रा भी ऐसी ही होती है। अङ्गुष्ठको नीचे करके जो मुट्ठी बाँधी जाती है, उसका नाम शिखामुद्रा है। हाथकी अंगुलियोंको फैलाना यह वरुणमुद्रा कही गयी है। बाणकी मुट्ठीकी तरह उठी हुई दोनों भुजाओंके अङ्गुष्ठ और तर्जनीसे चुटकी बजाकर उसकी ध्वनिको सब ओर फैलाना, इसे अस्त्रमुद्रा कहा गया है। तर्जनी और मध्यमा—ये दो अंगुलियाँ नेत्रमुद्रा हैं। (जहाँ तीन नेत्रका न्यास करना हो, वहाँ तर्जनी, मध्यमाके साथ अनामिका अंगुलिको भी लेकर नेत्रत्रयका प्रदर्शन कराया जाता है।) बायें हाथका अँगूठा ओष्ठमें लगा हो। उसकी कनिष्ठिका अंगुली दाहिने हाथके अँगूठेसे सटी हो, दाहिने हाथकी कनिष्ठिका फैली हुई हो और उसकी तर्जनी, मध्यमा और अनामिका अंगुलियाँ कुछ सिकोड़कर हिलायी जाती हों तो यह वेणुमुद्रा कही गयी है। यह अत्यन्त गुप्त होनेके साथ ही भगवान् श्रीकृष्णको बहुत प्रिय है। वनमाला, श्रीवत्स और कौस्तुभ नामक मुद्राएँ प्रसिद्ध हैं; अतः उनका वर्णन नहीं किया जाता है*। बायें अँगूठेको ऊर्ध्वमुख खड़ा करके उसे दाहिने

*वनमाला आदि मुद्राओंका लक्षण इस प्रकार है—

स्पृशेत्कण्ठादिपादान्तं तर्जन्याङ्गुष्ठनिष्ठया । करद्वयेन तु भवेन्मुद्रेण वनमालिका ॥

दोनों हाथोंकी तर्जनी और अँगूठेको सटाकर उनके द्वारा कण्ठसे लेकर चरणतकका स्पर्श करे। इसे वनमाला नामक मुद्रा कहा गया है।

अन्योन्यस्पृष्टकरयोर्मध्यमानामिकाङ्गुली । अङ्गुष्ठेन तु बधीयात् कनिष्ठामूलसंत्रिते ॥

तर्जन्यौ कारयेदेषा मुद्रा श्रीवत्ससङ्गिका ।

आपसमें सटे हुए दोनों हाथोंकी मध्यमा और अनामिका अंगुलियोंको अँगूठेसे बाँधे और तर्जनी अंगुलियोंको कनिष्ठा अंगुलियोंके मूल-भागसे संलग्न करे। इसका नाम श्रीवत्समुद्रा है।

दक्षिणस्यानामिकाङ्गुष्ठसंलग्नं कनिष्ठिकाम् । कनिष्ठान्यया बद्ध्वा तर्जन्या दक्षया तथा ॥
वामानामां च बधीयादक्षाङ्गुष्ठस्य मूलके । अङ्गुष्ठमध्यमे वामे संयोज्य सरलाः पराः ॥

हाथके अंगुठेसे बाँध ले और उसके अग्रभागको दाहिने हाथकी अंगुलियोंसे दबाकर फिर उन अंगुलियोंको बायें हाथकी अंगुलियोंसे खूब कसकर बाँध ले और उसे अपने हृदयकमलमें स्थापित करे। साथ ही कामबीज (कलीं)-का उच्चारण करता रहे। मुनीश्वरोंने उसे परम गोपनीय बिल्वमुद्रा कहा है। यह सम्पूर्ण सुखोंकी प्राप्ति करानेवाली है। मन, वाणी और शरीरसे जो पाप किया गया हो, वह सब इस मुद्राके ज्ञानमात्रसे नष्ट हो जायगा। मन्त्रका ध्यान, जप और पूर्वोक्तरूपसे त्रिकाल पूजन करना चाहिये। दशाक्षर तथा अष्टादशाक्षर आदि सब मन्त्रोंमें एक ही क्रम बताया गया है। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध होनेपर मन्त्रोपासक उससे नाना प्रकारके लौकिक अथवा पारलौकिक प्रयोग कर सकता है।

चेचक, फोड़े या ज्वर आदिसे जब जलन और मूर्छा हो रही हो तो उक्तरूपसे ही श्रीकृष्णका ध्यान करके रोगीके मस्तकके समीप मन्त्र-जप करे। इससे ज्वरग्रस्त मनुष्य निश्चय ही उस ज्वरसे मुक्त हो जाता है। इसी प्रकार पूर्वोक्त ध्यान करके अग्रिमें भगवान्‌की पूजा करे और गुरुचिके चार-चार अंगुलके दुकड़ोंद्वारा दस हजार आहुति दे तो ज्वरकी शान्ति हो जाती है। ज्वरसे पीड़ित मनुष्यके ज्वरसे शान्तिके लिये बाणोंसे छिदे हुए भीष्मपितामहका तथा संताप दूर करनेवाले श्रीहरिका ध्यान करके रोगीका स्पर्श करते हुए मन्त्रजप करे। सान्दीपनि मुनिको पुत्र देते हुए श्रीकृष्णका ध्यान करके पूर्वोक्त रूपसे गुरुचिके दुकड़ेसे दस हजार आहुति दे।

इससे अपमृत्युका निवारण होता है। जिसके पुत्र मर गये थे ऐसे ब्राह्मणको उसके पुत्र अर्पण करते हुए अर्जुनसहित श्रीकृष्णका ध्यान करके एक लाख मन्त्र-जप करे। इससे पुत्र-पौत्र आदिकी वृद्धि होती है। घी, चीनी और मधुमें मिलाये हुए पुत्रजीवके फलोंसे उसीकी समिधाद्वारा प्रज्वलित हुई अग्निमें दस हजार आहुति देनेपर मनुष्य दीर्घायु पुत्र पाता है। दुधैले वृक्षके काढ़ेसे भरे हुए कलशकी रातमें पूजा करके प्रातःकाल दस हजार मन्त्र जपे और उसके रसके जलसे स्त्रीका अभिषेक करे। बारह दिनोंतक ऐसा करनेपर वन्ध्या स्त्री भी दीर्घायु पुत्र प्राप्त कर लेती है। पुत्रकी इच्छा रखनेवाली स्त्री प्रातःकाल मौन होकर पीपलके पत्तेके दोनोंमें रखे हुए जलको एक सौ आठ बार मन्त्रके जपसे अभिमन्त्रित कराकर पीये। एक मासतक ऐसा करके वन्ध्या स्त्री भी समस्त शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न पुत्र प्राप्त कर लेती है। बेरके वृक्षोंसे भरे हुए शुभ एवं दिव्य आश्रममें स्थित हो अपने करकमलोंसे घंटाकर्णके शरीरका स्पर्श करते हुए श्रीकृष्णका ध्यान करके घी, चीनी और मधु मिलाये हुए तिलोंसे एक लाख आहुति दे। ऐसा करनेसे महान् पापी भी तत्काल पवित्र हो जाता है। पारिजात-हरण करनेवाले भगवान् श्रीकृष्णका ध्यान करके एक लाख मन्त्र जपे। जो ऐसा करता है, उसकी सर्वत्र विजय होती है। पराजय कभी नहीं होती है। श्रेष्ठ मनुष्यको चाहिये कि वह पार्थको गीताका उपदेश करते हुए हाथमें व्याख्यानकी मुद्रासे युक्त रथारूढ़

चतुर्थप्यग्रसंलग्ना मुद्रा कौस्तुभसंज्ञिका ।

दाहिने हाथकी अनामिका और अङ्गुष्ठसे सटी हुई कनिष्ठिका अंगुलिको बायें हाथकी कनिष्ठिकासे बाँध ले। दाहिनी तर्जनीसे बायीं अनामिकाको बाँधे, दाहिने अंगुठेके मूलभागमें बायें अङ्गुष्ठ और मध्यमाको संयुक्त करे। शेष अंगुलियोंको सीधी रखे। चारों अंगुलियोंके अग्रभाग परस्पर मिले हों, यह कौस्तुभमुद्रा है।

श्रीकृष्णका ध्यान करे। उस ध्यानके साथ मन्त्र जपे। इससे धर्मकी वृद्धि होती है। मधुमें सने हुए पलाशके फूलोंसे एक लाख आहुति दे। इससे विद्याकी प्राप्ति होती है। राष्ट्र, पुर, ग्राम, वस्तु तथा शरीरकी रक्षाके लिये विश्वरूपधारी श्रीकृष्णका ध्यान करे—उनकी कान्ति उदयकालीन करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशमान है। वे अग्नि एवं सोमस्वरूप हैं, सच्चिदानन्दमय हैं, उनका तेज तपाये हुए स्वर्णके समान है, उनके मुख और चरणारविन्द सूर्य और अग्निके सदृश प्रकाशित हो रहे हैं, वे दिव्य आभूषणोंसे विभूषित हैं। उन्होंने नाना प्रकारके आयुध

धारण कर रखे हैं। सम्पूर्ण आकाशको वे ही अवकाश दे रहे हैं। इस प्रकार ध्यान करके एकाग्रचित्त हो एक लाख मन्त्र-जप करे। इससे पूर्वोक्त सब वस्तुओंकी रक्षा होती है। जो श्रेष्ठ वैष्णव सदगुरुसे दीक्षा लेकर उक्त विधिसे श्रीकृष्णका पूजन करता है, वह अणिमा आदि आठ सिद्धियोंका स्वामी होता है। उसके दर्शनमात्रसे वादी हस्तप्रतिभ हो जाते हैं। वह घरमें हो या सभामें उसके मुखमें सदा सरस्वती निवास करती हैं। वह इस लोकमें नाना प्रकारके भोगोंका उपभोग करके अन्तमें श्रीकृष्णधामको जाता है। (ना० पूर्व० अध्याय ८०)

श्रीकृष्णसम्बन्धी विविध मन्त्रों तथा व्याससम्बन्धी मन्त्रकी अनुष्ठानविधि

श्रीसनत्कुमारजी कहते हैं—मुनीश्वर! अब मैं श्रीकृष्णसम्बन्धी मन्त्रोंके भेद बतलाता हूँ, जिनकी आराधना करके मनुष्य अपना अभीष्ट सिद्ध कर लेते हैं। दशाक्षर मन्त्रके तीन नूतन भेद हैं—‘ह्रीं श्रीं क्लीं’—इन तीन बीजोंके साथ ‘गोपीजनवल्लभाय स्वाहा’ यह प्रथम भेद है। ‘श्रीं ह्रीं क्लीं’—इस क्रमसे बीज जोड़नेपर दूसरा भेद होता है। ‘क्लीं ह्रीं श्रीं’—इस क्रमसे बीज-मन्त्र जोड़नेपर तीसरा भेद बनता है। इसके नारद ऋषि और गायत्री छन्द हैं तथा मनुष्योंकी सम्पूर्ण कामनाओंको पूर्ण करनेवाले गोविन्द श्रीकृष्ण इसके देवता हैं। इन तीनों मन्त्रोंका अङ्गन्यास पूर्ववत् चक्रोद्वारा करना चाहिये। तत्पश्चात् किरीटमन्त्रसे व्यापक-न्यास करे, फिर सुदर्शन-मन्त्रसे दिग्बन्ध करे। आदि मन्त्रमें बीस अक्षरवाले मन्त्रकी ही भाँति ध्यान-पूजन आदि करे। द्वितीय मन्त्रमें दशाक्षर-मन्त्रके लिये कहे हुए ध्यान-पूजन आदिका आश्रय ले। तृतीय मन्त्रमें विद्वान् पुरुष एकाग्रचित्त होकर श्रीहरिका इस प्रकार

ध्यान करे—भगवान् अपनी छः भुजाओंमें क्रमशः शङ्ख, चक्र, धनुष, बाण, पाश तथा अंकुश धारण करते हैं और शेष दो भुजाओंमें वेणु लेकर बजा रहे हैं। उनका वर्ण लाल है। वे श्रीकृष्ण साक्षात् सूर्यरूपसे प्रकाशित होते हैं। इस प्रकार ध्यान करके बुद्धिमान् पुरुष पाँच लाख जप करे और घृतयुक्त खीरसे दशांश आहुति दे। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जानेपर मन्त्रोपासक पुरुष उसके द्वारा पूर्ववत् सकाम प्रयोग कर सकता है। ‘श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय स्वाहा’ यह बारह अक्षरोंका मन्त्र है। इसके ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द और श्रीकृष्ण देवता हैं। पृथक्-पृथक् तीन बीजों तथा तीन, चार एवं दो मन्त्राक्षरोंसे षडङ्ग-न्यास करे। बीस अक्षरवाले मन्त्रकी भाँति इसके भी ध्यान, होम और पूजन आदि करने चाहिये। यह मन्त्र सम्पूर्ण अभीष्ट फलोंको देनेवाला है।

दशाक्षर मन्त्र (गोपीजनवल्लभाय स्वाहा)—के आदिमें श्रीं ह्रीं क्लीं तथा अन्तमें क्लीं ह्रीं श्रीं जोड़नेसे षोडशाक्षर-मन्त्र बनता है। इसी प्रकार

केवल आदिमें ही श्रीं जोड़नेसे बारह अक्षरोंका मन्त्र होता है। पूर्वोक्त चक्रोंद्वारा इनका अङ्गन्यास करे, फिर भगवान्का ध्यान करके दस लाख जप करे और घीसे दशांश होम करे। इससे ये दोनों मन्त्रराज सिद्ध हो जाते हैं। सिद्ध होनेपर ये मनुष्योंके लिये सम्पूर्ण कामनाओं, समस्त सम्पदाओं तथा सौभाग्यको देनेवाले हैं। अष्टादशाक्षर-मन्त्रके अन्तमें क्लीं जोड़ दिया जाय तो वह पुत्र तथा धन देनेवाला होता है। इस मन्त्रके नारद ऋषि, गायत्री छन्द और श्रीकृष्ण देवता हैं। क्लीं बीज कहा गया है और स्वाहा शक्ति मानी गयी है। छः दीर्घ स्वरोंसे युक्त बीजमन्त्रद्वारा षडङ्ग-न्यास करे। 'दायें हाथमें खीर और बायें हाथमें मक्खन लिये हुए दिगम्बर गोपीपुत्र श्रीकृष्ण मेरी रक्षा करें।' इस प्रकार ध्यान करके बत्तीस लाख मन्त्र जपे और प्रज्वलित अग्निमें मिश्री मिलायी हुई खीरसे दशांश आहुति दे, तत्पश्चात् पूर्वोक्त वैष्णवपीठपर अष्टादशाक्षर-मन्त्रकी भाँति पूजन करे। कमलके आसनपर विराजमान श्रीकृष्णकी पूजा करके उनके मुखारविन्दमें खीर, पके केले, दही और तुरंतका निकाला हुआ माखन देकर तर्पण करे। पुत्रकी इच्छा रखनेवाला पुरुष यदि इस प्रकार तर्पण करे तो वह वर्षभरमें पुत्र प्राप्त कर लेता है। वह जिस-जिस वस्तुकी इच्छा करता है, वह सब उसे तर्पणसे ही प्राप्त हो जाती है।

वाक् (ऐं), काम (क्लीं) डे विभक्त्यन्त कृष्ण शब्द (कृष्णाय) तत्पश्चात् माया (हीं), उसके बाद 'गोविन्दाय' फिर रमा (श्रीं) तदनन्तर दशाक्षर मन्त्र (गोपीजनवल्लभाय स्वाहा) उद्धृत करे, फिर ह् और स् ये दोनों ओकार और विसर्गसे संयुक्त होकर अन्तमें जुड़ जायें तो (ऐं क्लीं कृष्णाय हीं गोविन्दाय श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा हसों) बाईस अक्षरका मन्त्र होता है, जो

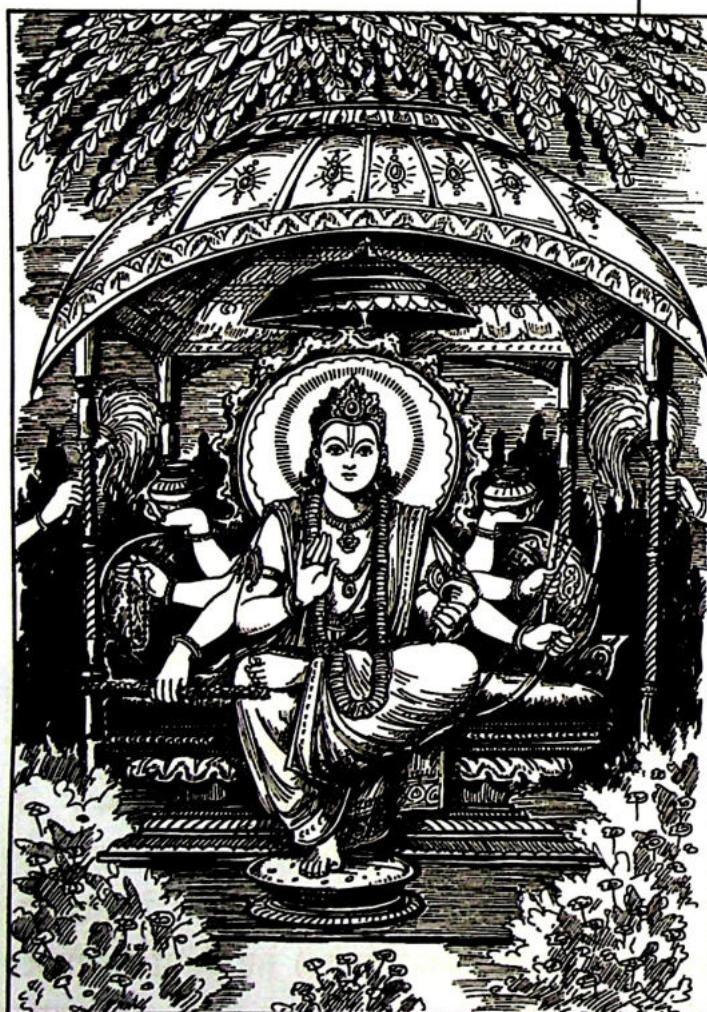
वागीशत्व प्रदान करनेवाला है। इसके नारद ऋषि, गायत्री छन्द, विद्यादाता गोपाल देवता, क्लीं बीज और ऐं शक्ति है। विद्याप्राप्तिके लिये इसका विनियोग किया जाता है। इसका ध्यान इस प्रकार है—जो वाम भागके ऊपरवाले हाथोंमें उत्तम विद्यापुस्तक और दाहिने भागके ऊपरवाले हाथमें स्फटिक मणिकी मातृकामयी अक्षमाला धारण करते हैं। इसी प्रकार नीचेके दोनों शब्दब्रह्ममयी मुरली लेकर बजाते हैं, जिनके श्रीअङ्गोंमें गायत्री-छन्दमय पीताम्बर सुशोभित है, जो श्याम वर्ण कोमल कान्तिमान् मयूरपिच्छमय मुकुट धारण करनेवाले, सर्वज्ञ तथा मुनिवरोंद्वारा सेवित हैं, उन श्रीकृष्णका चिन्तन करे। इस प्रकार लीला करनेवाले भुवनेश्वर श्रीकृष्णका ध्यान करके चार लाख मन्त्र जप करे और पलाशके फूलोंसे दशांश आहुति देकर मन्त्रोपासक बीस अक्षरवाले मन्त्रके लिये कहे हुए विधानके अनुसार पूजन करे। इस प्रकार जो मन्त्रकी उपासना करता है, वह वागीश्वर हो जाता है। उसके बिना देखे हुए शास्त्र भी गङ्गाकी लहरोंके समान स्वतः प्रस्तुत हो जाते हैं।

'ॐ कृष्ण कृष्ण महाकृष्ण सर्वज्ञ त्वं प्रसीद मे। रमारमण विद्येश विद्यामाशु प्रयच्छ मे॥' (हे कृष्ण! हे कृष्ण! हे महाकृष्ण! आप सर्वज्ञ हैं। मुझपर प्रसन्न होइये। हे रमारमण! हे विद्येश्वर! मुझे शीघ्र विद्या दीजिये।) यह तीनीस अक्षरोंवाला महाविद्याप्रद मन्त्र है। इसके नारद ऋषि, अनुष्टुप् छन्द और श्रीकृष्ण देवता हैं। मन्त्रके चारों चरणों और सम्पूर्ण मन्त्रसे पञ्चाङ्ग-न्यास करके श्रीहरिका ध्यान करे।

ध्यान

दिव्योद्याने विवस्वत्प्रतिममणिमये मण्डपे योगपीठे
मध्ये यः सर्ववेदान्तमयसुरतरोः संन्निविष्टो मुकुन्दः।

वेदैः कल्पद्रुस्तैः शिखरिशतसमालम्बिकोषैश्चतुर्भि-
न्यायैस्तकैः पुराणैः स्मृतिभिरभिवृतस्तादूशश्चामरादैः ॥
दद्याद्विभृत्करागैरपि दरमुरलीपुष्पबाणेक्षुचापा-
नक्षस्पृक्षपूर्णकुम्भौ स्मरललितवपुर्दिव्यभूषाङ्गरागः ॥
व्याख्यां वामे वितन्वन् स्फुटरुचिरपदो वेणुना विश्वमात्रे
शब्दब्रह्मोद्भवेन श्रियमरुणरुचिर्वल्लवीवल्लभो नः ॥
(ना० पूर्व० ८। ३४-३५)



एक दिव्य उद्यान है, उसके भीतर सूर्यके समान प्रकाशमान मणिमय मण्डप है, जहाँ सर्व वेदान्तमय कल्पवृक्षके नीचे योगपीठ नामक दिव्य सिंहासन है, जिसके मध्यभागमें भगवान् मुकुन्द विराजमान हैं। कल्पवृक्षरूपी चार वेद जिसके कोष सौ पर्वतोंको सहारा देनेवाले हैं,

उन्हें घेरकर स्थित है। छत्र, चँवर आदिके रूपमें सुशोभित न्याय, तर्क, पुराण तथा स्मृतियोंसे भगवान् आवृत हैं। वे अपने हाथोंके अग्रभागमें शङ्ख, मुरली, पुष्पमय बाण और ईखके धनुष धारण करते हैं। अक्षमाला और भरे हुए दो कलश उन्होंने ले रखे हैं; उनका दिव्य विग्रह कामदेवसे भी अधिक मनोहर है। वे दिव्य आभूषण तथा दिव्य अङ्गराग धारण करते हैं। शब्दब्रह्मसे प्रकट हुई तथा बायें हाथमें ली हुई वेणुद्वारा स्पष्ट एवं रुचिर पदका उच्चारण करते हुए विश्वमात्रमें विशद व्याख्याका विस्तार करते हैं। उनकी अङ्ग-कान्ति अरुण वर्णकी है, ऐसे गोपीवल्लभ श्रीकृष्ण हमें लक्ष्मी प्रदान करें।

इस प्रकार ध्यान करके एक लाख जप करे और खीरसे दशांश आहुति दे। मन्त्रज्ञ पुरुष इसका पूजन आदि अष्टादशाक्षर मन्त्रकी भाँति करे।

'ॐ नमो भगवते नन्दपुत्राय आनन्दवपुषे गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।' यह अद्वाईस अक्षरोंका मन्त्र है। जो सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको देनेवाला है।

'नन्दपुत्राय श्यामलाङ्गाय बालवपुषे कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।' यह बत्तीस अक्षरोंका मन्त्र है। इन दोनों मन्त्रोंके नारद ऋषि हैं, पहलेका उष्णिक, दूसरेका अनुष्टुप् छन्द है। देवता नन्दनन्दन श्रीकृष्ण हैं। समस्त कामनाओंकी प्राप्तिके लिये इसका विनियोग किया जाता है। चक्रोंद्वारा पञ्चाङ्ग-न्यास करे तथा हृदयादि अङ्गों, इन्द्रादि दिक्षालों और उनके वज्र आदि आयुधोंसहित भगवान्की पूजा करनी चाहिये। फिर ध्यान करके एक लाख मन्त्र-जप और खीरसे दशांश हवन करे। इन सिद्ध मन्त्रोंद्वारा मन्त्रोपासक अपने

अभीष्टकी सिद्धि कर सकता है।

'लीलादण्ड गोपीजनसंसक्तदोर्दण्ड बालरूप
मेघश्याम भगवन् विष्णो स्वाहा' यह उन्नीस
अक्षरोंका मन्त्र है। इसके नारद ऋषि, अनुष्टप्
छन्द और 'लीलादण्ड हरि' देवता कहे गये हैं।
चौदह, चार, चार, तीन तथा चार मन्त्राक्षरोंद्वारा
क्रमशः पञ्चाङ्ग-न्यास करे।

ध्यान

सम्मोहयंश्च निजवामकरस्थलीला-
दण्डेन गोपयुवतीः परसुन्दरीश्च।
दिश्यान्निजप्रियसखांसगदक्षहस्तो
देवः श्रियं निहतकंस उरुक्रमो नः ॥
(ना० पूर्व० ८१। ५५)



'जो अपने बायें हाथमें लिये हुए लीलादण्डसे
भाँति-भाँतिके खेल दिखाकर परम सुन्दरी
गोपाङ्गनाओंका मन मोहे लेते हैं, जिनका
दाहिना हाथ अपने प्रिय सखाके कंधेपर है, वे
कंसविनाशक महापराक्रमी भगवान् श्रीकृष्ण हमें
लक्ष्मी प्रदान करें।'

इस प्रकार ध्यान करके एक लाख जप और
घी, चीनी तथा मधुमें सने हुए तिल और
चावलोंसे दशांश होम करे। तत्पश्चात् पूर्वोक्त
पीठपर अङ्ग, दिक्पाल तथा आयुधोंसहित श्रीहरिका
पूजन करे। जो प्रतिदिन आदरपूर्वक 'लीलादण्ड
हरि'की आराधना करता है, वह सम्पूर्ण लोकोंद्वारा
पूजित होता है और उसके घरमें लक्ष्मीका स्थिर
निवास होता है। सद्य (ओ)-पर स्थित स्मृति
(ग) अर्थात् 'गो', केशव (अ) युक्त तोय (व)
अर्थात् 'व', धरायुग (ल्ल), 'भाय', अग्निवल्लभा
(स्वाहा)—यह (गोवल्लभाय स्वाहा) मन्त्र
सात अक्षरोंका है और सम्पूर्ण सिद्धियोंको
देनेवाला है। इसके नारद ऋषि, उष्णिक् छन्द
तथा गोवल्लभ श्रीकृष्ण देवता हैं। पूर्ववत् चक्र-
मन्त्रोंद्वारा पञ्चाङ्ग-न्यास करे।

ध्यान

ध्येयो हरिः स कपिलागणमध्यसंस्थ-
स्ता आह्यन् दधददक्षिणदोःस्थवेणुम्।
पाशं सयष्टिमपरत्र पयोदनीलः
पीताम्बरोऽहिरपुष्पिच्छकृतावतंसः ॥
(ना० पूर्व० ८१। ६०)



'जो कपिला गायोंके बीचमें खड़े हो उनको पुकारते हैं, बायें हाथमें मुरली और दायें हाथमें रस्सी और लाठी लिये हुए हैं, जिनकी अङ्गकान्ति मेघके समान श्याम है, जो पीतवस्त्र और मोर-पंखका मुकुट धारण करते हैं, उन श्यामसुन्दर श्रीहरिका ध्यान करना चाहिये।'

ध्यानके बाद, सात लाख मन्त्र-जप और गोदुग्धसे दशांश हवन करे। पूर्वोक्त वैष्णवपीठपर पूजन करे। अङ्गोद्धारा प्रथम आवरण होता है। द्वितीय आवरणमें—सुवर्ण-पिङ्गला, गौर-पिङ्गला, रक्त-पिङ्गला, गुड-पिङ्गला, वधु-वर्णा, उत्तमा कपिला, चतुष्क-पिङ्गला तथा शुभ एवं उत्तम पीत-पिङ्गला—इन आठ गायोंके समुदायकी पूजा करके तीसरे और चौथे आवरणोंमें इन्द्रादि लोकेशों तथा वत्र आदि आयुधोंका पूजन करे।

इस प्रकार पूजन करके मन्त्र सिद्ध कर लेनेपर मन्त्रज्ञ पुरुष उसके द्वारा कामना-पूर्तिके लिये प्रयोग करे। जो प्रतिदिन गोदुग्धसे एक सौ आठ आहुति देता है, वह पंद्रह दिनमें ही गोसमुदायसहित मुक्त हो जाता है। दशाक्षर मन्त्रमें भी यह विधि है। 'ॐ नमो भगवते श्रीगोविन्दाय' यह द्वादशाक्षर मन्त्र कहा गया है। इसके नारद ऋषि माने गये हैं। छन्द गायत्री है और गोविन्द देवता कहे गये हैं। एक, दो, चार और पाँच अक्षरों तथा सम्पूर्ण मन्त्रसे पञ्चाङ्ग-न्यास करे।

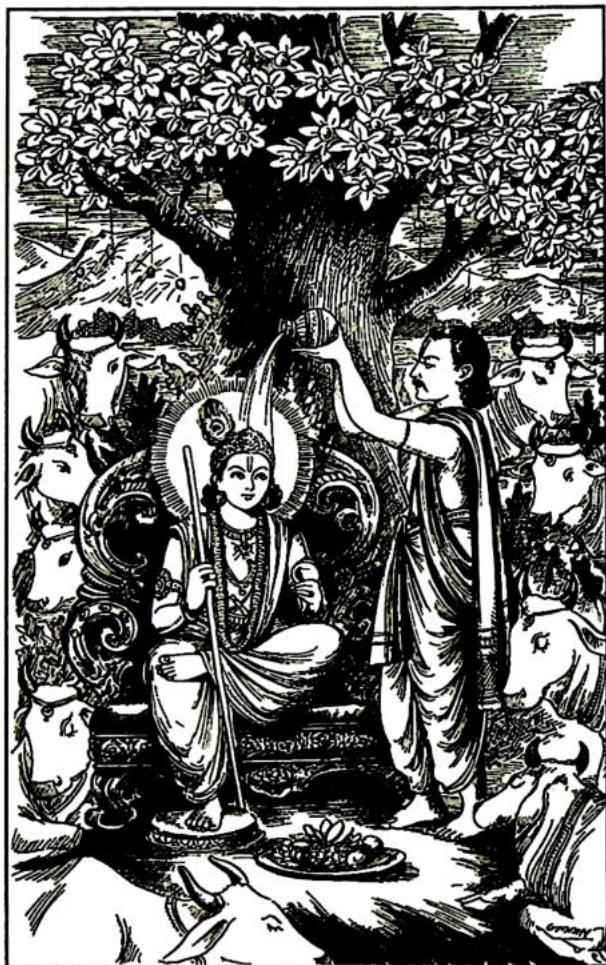
ध्यान

ध्यायेत् कल्पद्रुमूलाश्रितमणिविलसहिव्यसिंहासनस्थं

मेघश्यामं पिशङ्गांशुकमतिसुभर्गं शङ्खवेत्रे कराभ्याम्।
बिभाणं गोसहस्रैर्वृतममरपतिं प्रौढहस्तैककुर्भ-

प्रश्च्योतत्सौधारास्तपितमभिनवाष्मोजपत्राभनेत्रम् ॥

'दिव्य कल्पवृक्षके नीचे मूलभागके समीप नाना प्रकारकी मणियोंसे सुशोभित दिव्य



सिंहासनपर भगवान् श्रीकृष्ण विराज रहे हैं। उनकी अङ्गकान्ति मेघके समान श्याम है, वे पीताम्बर धारण किये अत्यन्त सुन्दर लग रहे हैं। अपने दोनों हाथोंमें शङ्ख और बेंत ले रखे हैं। सहस्रों गायें उन्हें घेरकर खड़ी हैं। वे सम्पूर्ण देवताओंके प्रतिपालक हैं। एक प्रौढ़ व्यक्तिके हाथोंमें एक कलश है, उससे अमृतकी धारा झर रही है और उसीसे भगवान् स्नान कर रहे हैं; उनके नेत्र नूतन विकसित कमल-दलके समान विशाल एवं सुन्दर हैं। ऐसे श्रीहरिका ध्यान करना चाहिये।

तत्पश्चात् बारह लाख मन्त्र जपे। फिर गोदुग्धसे दशांश होम करके पूर्वत् गोशालामें स्थित भगवान्का पूजन करे। अथवा प्रतिमा

आदिमें भी पूजा कर सकते हैं। पूर्वोक्त वैष्णवपीठपर मूलमन्त्रसे मूर्तिनिर्माण करके उसमें भगवान्‌का आवाहन और प्रतिष्ठा करे। तत्पश्चात् पहले गुरुदेवकी पूजा करके भगवान् श्रीकृष्णकी पूजा करे। भगवान्‌के पार्श्वभागमें रुक्मिणी और सत्यभामाका, सामने इन्द्रका तथा पृष्ठभागमें सुरभिदेवीका पूजन करके केसरोंमें अङ्गपूजा करे। फिर आठ दलोंमें कालिन्दी आदि आठ पटरानियोंकी पूजा करके पीठके कोणोंमें किंकिणी और दाम* (रस्सी) की अर्चना करे। पृष्ठभागोंमें वेणुकी तथा समुख श्रीवत्स एवं कौस्तुभकी पूजा करे। आगेकी ओर वनमाला आदि अलंकारोंका पूजन करे। आठ दिशाओंमें स्थित पाञ्चजन्य, गदा, चक्र, वसुदेव, देवकी, नन्दगोप, यशोदा तथा गौओं और ग्वालोंसहित गोपिका—इन सबकी पूजा करे। उनके बाह्यभागमें इन्द्र आदि दिव्यपाल तथा उनके भी बाह्यभागमें वत्र आदि आयुध हैं। फिर पूर्व आदि दिशाओंमें क्रमशः कुमुद, कुमुदाक्ष, पुण्डरीक, वामन, शंकुकर्ण, सर्वनेत्र, सुमुख तथा सुप्रतिष्ठित—इन दिग्गजोंका पूजन करके विष्वक्सेन तथा आत्माका पूजन करना चाहिये। जो मनुष्य एक या तीनों समय श्रीगोविन्दका पूजन करता है, वह चिरायु, निर्भय तथा धन-धान्यका स्वामी होता है।

सद्य (ओ) सहित स्मृति (ग) अर्थात् 'गो', दक्षिण कर्ण (उ) युक्त चक्री (क) अर्थात् 'कु', धरा (ल)—इन अक्षरोंके पश्चात् 'नाथाय' पद और अन्तमें हृदय (नमः) यह—'गोकुलनाथाय नमः' महामन्त्र आठ अक्षरोंका है। इसके ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द तथा श्रीकृष्ण देवता हैं। इसके दो-दो अक्षरों तथा सम्पूर्ण मन्त्रसे पञ्चाङ्गन्यास करे।

ध्यान

पञ्चवर्षमतिलोलमङ्ग्ने
धावमानमतिचञ्चलेक्षणम् ।

किङ्किणीबलयहारनूपैर
रञ्जितं नमत गोपबालकम् ॥ ८० ॥

'बाल गोपालकी पाँच वर्षकी अवस्था है, वे



अत्यन्त चपल गतिसे आँगनमें दौड़ रहे हैं, उनके नेत्र भी बड़े चञ्चल हैं, किंकिणी, बलय, हार और नूपुर आदि आभूषण विभिन्न अङ्गोंकी शोभा बढ़ा रहे हैं, ऐसे सुन्दर गोपबालको नमस्कार करो।'

इस प्रकार ध्यान करके मन्त्रोपासक आठ लाख जप और पलाशकी समिधाओं अथवा खीरसे दशांश हवन करे। पूर्वोक्त वैष्णवपीठपर मूलमन्त्रसे मूर्तिका संकल्प करके उसमें मन्त्रसाधक स्थिरचित्त हो भगवान् श्रीकृष्णका आवाहन और पूजन करे। चारों दिशा-

* यशोदा मैयाने रस्सीसे उन्हें बाँधा था, इसीसे कमरमें किंकिणीके साथ दाम (रस्सी)-की पूजाका विधान है।

विदिशाओंमें जो केसर हैं, उनमें अङ्गोंकी पूजा करे। फिर दिशाओंमें वासुदेव, बलभद्र, प्रद्युम्न और अनिरुद्धका तथा कोणोंमें रुक्मिणी, सत्यभामा, लक्ष्मणा और जाम्बवतीका पूजन करे। इनके बाह्यभागोंमें लोकेशों और आयुधोंकी पूजा करनी चाहिये। ऐसा करनेसे मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

तार (ॐ), श्री (श्रीं), भुवना (ह्रीं), काम (क्लीं), डे विभक्त्यन्त श्रीकृष्ण शब्द अर्थात् 'श्रीकृष्णाय' ऐसा ही गोविन्द पद (गोविन्दाय), फिर 'गोपीजनवल्लभाय' तत्पश्चात् तीन पद्मा (श्रीं श्रीं श्रीं) —यह (ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं श्रीकृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय श्रीं श्रीं श्रीं) तेर्इस अक्षरोंका मन्त्र है। इसके ऋषि आदि भी पूर्वोक्त ही हैं। सिद्ध गोपालका स्मरण करना चाहिये।

ध्यान

माधवीमण्डपासीनौ गरुडेनाभिपालितौ।
दिव्यक्रीडासु निरतौ रामकृष्णौ स्मरञ्जपेत्॥ ८७॥

जो माधवीलतामय मण्डपमें बैठकर दिव्य क्रीडाओंमें तत्पर हैं, श्रीगरुडजी जिनकी रक्षा कर रहे हैं, उन श्रीबलराम तथा श्रीकृष्णका चिन्तन करते हुए मन्त्र-जप करना चाहिये।

श्रेष्ठ वैष्णवोंको पूर्ववत् पूजन करना चाहिये। चक्री (कृ) आठवें स्वर (ऋ)-से युक्त हो और उसके साथ विसर्ग भी हो तो 'कृः' यह एकाक्षर मन्त्र होता है। 'कृष्ण' यह दो अक्षरोंका मन्त्र है। इसके आदिमें क्लीं जोड़नेपर 'क्लीं कृष्ण' यह तीन अक्षरोंका मन्त्र बनता है। वही डे विभक्त्यन्त होनेपर चार अक्षरोंका 'क्लीं कृष्णाय' मन्त्र होता है। 'कृष्णाय नमः' यह पञ्चाक्षर-मन्त्र है। 'क्लीं' सम्पुटित कृष्ण पद भी अपर पञ्चाक्षर-मन्त्र है; यथा—क्लीं

कृष्णाय क्लीं। 'गोपालाय स्वाहा' यह षडक्षर-मन्त्र कहा गया है। 'क्लीं कृष्णाय स्वाहा'



यह भी दूसरा षडक्षर-मन्त्र है। 'कृष्णाय गोविन्दाय' यह सप्ताक्षर-मन्त्र सम्पूर्ण सिद्धियोंको देनेवाला है। 'श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय क्लीं' यह दूसरा सप्ताक्षर-मन्त्र है। 'कृष्णाय गोविन्दाय नमः' यह दूसरा नवाक्षर-मन्त्र है। 'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय क्लीं' यह भी इतर नवाक्षर-मन्त्र है। 'क्लीं ग्लीं क्लीं श्यामलाङ्गाय नमः' यह दशाक्षर सम्पूर्ण सिद्धियोंको देनेवाला है। 'बालवपुषे कृष्णाय स्वाहा' यह दूसरा दशाक्षर मन्त्र है। तदनन्तर गोपीजनमनोहर श्रीकृष्णका इस प्रकार ध्यान करे—

श्रीवृन्दाविपिनप्रतोलिषु नमत्संफुल्लवल्लीतति-
स्वन्तर्जालविघट्टनैः सुरभिणा वातेन संसेविते।
कालिन्दीपुलिने विहारिणमथो राधैकजीवातुकं
वन्दे नदकिशोरमिन्दुवदनं स्त्रिग्राम्बुदाडम्बरम्॥

(ना० पूर्व० ८१। ९६)

श्रीवृन्दावनकी गलियोंमें झुकी और फूली हुई लतावेलोंकी पद्धतियाँ फैली हुई हैं। उनके



भीतर घुसकर लोट-पोट करनेसे शीतल-मन्द वायु सुगन्धसे भर गयी है। वह सुगन्धित वायु उस यमुना-पुलिनको सब ओरसे सुवासित कर रही है, जहाँ श्रीराधारानीके एकमात्र जीवनधन नागर नन्दकिशोर विचरण कर रहे हैं। उनका मुख चन्द्रमासे भी अधिक मनोहर है और उनकी अङ्गकान्ति स्त्रियोंमें से श्याम मनोहर छविको छीने लेती है। मैं उन्होंने नटवर नन्दकिशोरकी वन्दना करता हूँ।

मुनीश्वर! इन मन्त्रोंकी पूजा पूर्वोक्त पद्धतिसे ही होती है, यह जानना चाहिये।

देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥*

(ना० पूर्व० ८१। ९७-९८)

यह बत्तीस अक्षरोंका मन्त्र है। इसके नारद ऋषि, गायत्री और अनुष्टुप् छन्द तथा पुत्रप्रदाता श्रीकृष्ण देवता हैं। चारों पादों तथा सम्पूर्ण मन्त्रसे इसका अङ्ग-न्यास करे।

ध्यान

विजयेन युतो रथस्थितः प्रसमानीय समुद्रमध्यतः ।
प्रददत्तनयान् द्विजन्मने स्मरणीयो वसुदेवनन्दनः ॥

(ना० पूर्व० ८१। १००)

‘जो अर्जुनके साथ रथपर बैठे हैं और क्षीरसागरसे लाकर ब्राह्मणके मरे पुत्रको उन्हें वापस दे रहे हैं, उन वसुदेवनन्दन श्रीकृष्णका चिन्तन करना चाहिये।’

इसका एक लाख जप और घी, चीनी तथा मधु-मेवा आदि मधुर पदार्थोंमें सने हुए तिलोंसे दस हजार होम करे। पूर्वोक्त वैष्णवपीठपर अङ्ग, दिक्षाल तथा आयुधोंसहित श्रीकृष्णकी पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध कर लेनेपर वन्ध्या स्त्रीके भी पुत्र उत्पन्न हो सकता है। ‘ॐ ह्रीं हंसः सोऽहं स्वाहा’ यह दूसरा अष्टाक्षर-मन्त्र है। इस पञ्चब्रह्मात्मक मन्त्रके ब्रह्मा ऋषि, परमा गायत्री छन्द तथा परम ज्योतिःस्वरूप परब्रह्म देवता कहे गये हैं। प्रणव बीज है और स्वाहा शक्ति कही गयी है। ‘स्वाहा’ हृदयाय नमः। सोऽहं शिरसे स्वाहा। हंसः शिखायै वषट्। हृल्लेखा कवचाय हुम्। अङ्ग नेत्राभ्यां वौषट्। ‘हरिहर’ अस्त्राय फट्। इस प्रकार अङ्ग-न्यास करे।

स ब्रह्मा स शिवो विप्र स हरिः सैव देवराद्।

स सर्वरूपः सर्वाख्यः सोऽक्षरः परमः स्वराद्॥

(ना० पूर्व० ८१। १०७)

‘विप्रवर! वे श्रीकृष्ण ही ब्रह्मा हैं, वे ही

* ‘देवकीपुत्र! गोविन्द! वासुदेव! जगदीश्वर! श्रीकृष्ण! मैं तुम्हारी शरणमें आया हूँ, मुझे पुत्र प्रदान करो।’



शिव हैं, वे ही विष्णु और वे ही देवराज इन्द्र हैं। वे ही सब रूपोंमें हैं तथा सब नाम उन्हींके हैं। वे ही स्वयं प्रकाशमान अविनाशी परमात्मा हैं।'

इस प्रकार ध्यान करके आठ लाख जप और दशांश होम करे। इनकी पूजा प्रणवात्मक पीठपर अङ्ग और आवरणदेवताओंके साथ करनी चाहिये। नारद! इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जानेपर साधक-शिरोमणि पुरुषको 'तत्त्वमसि' आदि महावाक्योंका विकल्परहित ज्ञान प्राप्त होता है।

'कर्लीं हृषीकेशाय नमः' यह अष्टाक्षर-मन्त्र है। इसके ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द और हृषीकेश देवता हैं। सम्पूर्ण मनोरथोंकी प्राप्तिके लिये इसका विनियोग किया जाता है। 'कर्लीं' बीज है तथा 'आय' शक्ति कही गयी है। बीजमन्त्रसे ही षडङ्ग-न्यास करके ध्यान करे। अथवा पुरुषोत्तम मन्त्रके लिये कही हुई सब

बातें इसके लिये भी समझनी चाहिये। इसका एक लाख जप तथा घृतसे दस हजार होम करे। संमोहिनी कुसुमोंसे तर्पण करना सम्पूर्ण कामनाओंकी प्राप्ति करनेवाला कहा गया है। 'श्रीं श्रीधराय त्रैलोक्यमोहनाय नमः' यह चौदह अक्षरोंका मन्त्र है। इसके ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द, श्रीधर देवता, श्रीं बीज और 'आय' शक्ति है। बीजसे ही षडङ्ग-न्यास करे। इसमें भी पुरुषोत्तम मन्त्रकी ही भाँति ध्यान-पूजन आदि कहे गये हैं। एक लाख जप और घीसे ही दशांश होमका विधान है। सुगच्छित श्वेत पुष्पोंसे पूजा और होम आदि करे। विप्रेन्द्र! ऐसा करनेपर वह साक्षात् श्रीधरस्वरूप हो जाता है। 'अच्युतानन्तगोविन्दाय नमः' यह एक मन्त्र है और 'अच्युताय नमः', अनन्ताय नमः', गोविन्दाय नमः'—ये तीन मन्त्र हैं। प्रथमके शौनक ऋषि और विराट् छन्द है। शेष तीन मन्त्रोंके क्रमशः पराशर, व्यास और

नारद ऋषि हैं। छन्द इनका भी विराट ही है। परब्रह्मस्वरूप श्रीहरि इन सब मन्त्रोंके देवता हैं। साधक इनके बीज और शक्ति भी पूर्वोक्त ही समझे।

ध्यान

शङ्खचक्रधरं देवं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ॥
सर्वैरप्यायुधैर्युक्तं गरुडोपरि संस्थितम् ।
सनकादिमुनीन्द्रैस्तु सर्वदेवैरुपासितम् ॥
श्रीभूमिसहितं देवमुदयादित्यसन्निभम् ।
प्रातरुद्यत्सहस्रांशुमण्डलोपमकुण्डलम् ॥
सर्वलोकस्य रक्षार्थमनन्तं नित्यमेव हि ।
अभयं वरदं देवं प्रयच्छन्तं मुदान्वितम् ॥

(ना० पूर्व० ८१। १२०—१२३)

'भगवान् अच्युत शङ्ख और चक्र धारण करते हैं। वे द्युतिमान् होनेसे 'देव' कहे गये हैं। उनके चार बाँहें हैं। वे किरीटसे सुशोभित हैं। उनके हाथोंमें सब प्रकारके आयुध हैं। वे

उनके उभय पार्श्वमें श्रीदेवी तथा भूदेवी हैं। वे उदयकालीन सूर्यके समान तेजस्वी हैं। उनके कानोंके कमनीय कुण्डल प्रातःकाल उगते हुए सूर्यदेवके मण्डलके समान अरुण प्रकाशसे सुशोभित हैं। वे वरदायक देवता हैं, सदा परमानन्दसे परिपूर्ण रहते हैं और सम्पूर्ण विश्वकी रक्षाके लिये सदा ही सबको अभय प्रदान करते हैं। उनका कहीं किसी कालमें भी अन्त नहीं होता।'

इस प्रकार ध्यान करके एकाग्रचित्त हो वैष्णवपीठपर भगवान्की पूर्ववत् पूजा करें। इनका प्रथम आवरण अङ्गोद्धारा सम्पन्न होता है। चक्र, शङ्ख, गदा, खड्ग, मुसल, धनुष, पाश तथा अंकुश—इनसे द्वितीय आवरण बनता है। सनकादि चार महात्मा तथा पराशर, व्यास, नारद और शौनकसे तृतीय आवरण होता है। लोकपालोद्धारा चौथा आवरण पूरा होता है।



गरुड़की पीठपर बैठे हैं। सनक आदि मुनीश्वर तथा सम्पूर्ण देवता उनकी उपासना करते हैं। (पाँचवें आवरणमें वज्र आदि आयुधोंकी पूजा होती है।) इस मन्त्रका एक लाख जप और

घृतसे दशांश हवन किया जाता है। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जानेपर मन्त्रोपासक कामनापूर्तिके लिये मन्त्रका प्रयोग भी कर सकता है। बेलके पेड़के नीचे उसकी जड़के समीप बैठकर देवेश्वर भगवान् विष्णुका ध्यान करते हुए रोगीका स्मरण करे और उसका स्पर्श करके दस हजार मन्त्र जपे। ब्रह्मन्! वह स्पर्श करके, जप करके अथवा साध्यका मन-ही-मन स्मरण करके या मण्डल बनाकर रोगियोंको रोगसे मुक्त कर सकता है।

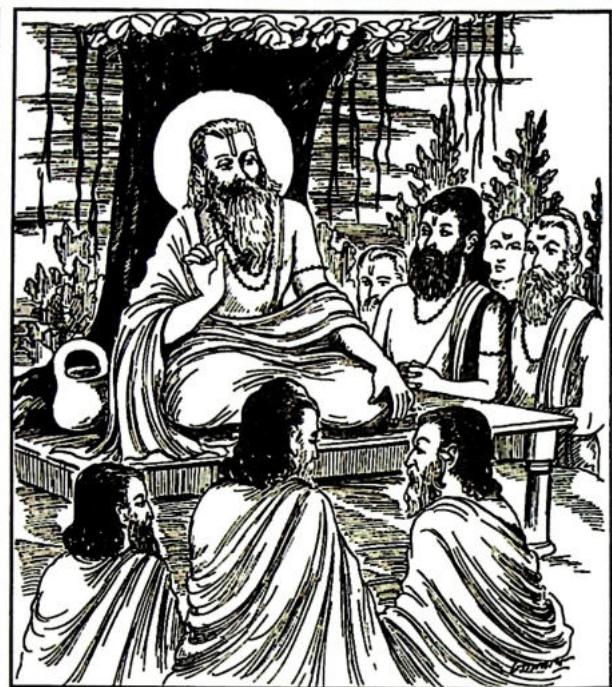
बाल (व), पवन (य) ये दोनों अक्षर दीर्घ आकार और अनुस्वारसे युक्त हों और ज़िंटीश (एकार)-से युक्त जल (ब) हो, तत्पश्चात् अत्रि अर्थात् दकार हो और उसके बाद 'व्यासाय' पदके अन्तमें हृदय (नमः)-का प्रयोग हो तो यह (व्यां वेदव्यासाय नमः) अष्टाक्षर-मन्त्र बनता है। यह मन्त्र सबकी रक्षा करे। इसके ब्रह्मा ऋषि, अनुष्टूप् छन्द, सत्यवतीनन्दन व्यास देवता, व्यां बीज और नमः शक्ति है। दीर्घस्वरोंसे युक्त बीजाक्षर (व्यां व्यां व्यूं व्यैं व्याँ व्यः)-द्वारा अङ्ग-न्यास करना चाहिये।

ध्यान

व्याख्यामुद्रिकया लसत्करतलं सद्योगपीठस्थितं
वामे जानुतले दधानमपरं हस्तं सुविद्यानिधिम्।
विप्रद्रातवृतं प्रसन्नमनसं पाथोरुहाङ्गद्युतिं
पाराशर्यमतीव पुण्यचरितं व्यासं स्मरेत्सिद्धये॥

(ना० पूर्व० ८१। १३६)

'जिनका दाहिना हाथ व्याख्याकी मुद्रासे सुशोभित है, जो उत्तम योगपीठासनपर विराजमान हैं, जिन्होंने अपना बायाँ हाथ बायें घुटनेपर



रख छोड़ा है, जो उत्तम विद्याके भण्डार, ब्राह्मणसमूहसे धिरे हुए तथा प्रसन्नचित्त हैं, जिनकी अङ्गकान्ति कमलके समान तथा चरित्र अत्यन्त पुण्यमय है, उन पराशरनन्दन वेदव्यासका सिद्धिके लिये चिन्तन करे। आठ हजार मन्त्र-जप और खीरसे दशांश होम करे। पूर्वोक्त पीठपर व्यासका पूजन करे। पहले अङ्गोंकी पूजा करनी चाहिये। पूर्व आदि चार दिशाओंमें क्रमशः पैल, वैशम्पायन, जैमिनि और सुमन्तका तथा ईशान आदि कोणोंमें क्रमशः श्रीशुकदेव, रोमहर्षण, उग्रश्रवा तथा अन्य मुनियोंका पूजन करे। इनके बाह्यभागमें इन्द्र आदि दिक्षालों और वज्र आदि आयुधोंकी पूजा करे। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध कर लेनेपर मन्त्रोपासक पुरुष कवित्वशक्ति, सुन्दर संतान, व्याख्यान-शक्ति, कीर्ति तथा सम्पदाओंकी निधि प्राप्त कर लेता है।

श्रीनारदजीको भगवान् शङ्करसे प्राप्त हुए युगलशरणागति-मन्त्र तथा राथाकृष्ण-युगलसहस्रनामस्तोत्रका वर्णन

सनत्कुमारजी कहते हैं—नारद! क्या तुम जानते हो कि पूर्व-जन्ममें तुमने साक्षात् भगवान् शङ्करसे युगल-मन्त्रका उपदेश प्राप्त किया था। श्रीकृष्ण-मन्त्रका रहस्य, जिसे तुम भूल चुके हो, स्मरण तो करो।

सूतजी कहते हैं—ब्राह्मणो! परम बुद्धिमान् सनत्कुमारजीके द्वारा ऐसा कहनेपर देवर्षि नारदने ध्यानमें स्थित हो अपने पूर्व-जन्मके चिरन्तन चरित्रिको शीघ्र जान लिया। तब उन्होंने मुखसे आन्तरिक प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा—‘भगवन्! पूर्व-कल्पका और वृत्तान्त तो मुझे स्मरण हो आया है; परंतु युगल-मन्त्रका लाभ किस प्रकार हुआ, यह याद नहीं आता।’ महात्मा नारदका यह वचन सुनकर भगवान् सनत्कुमारने सब बातें यथावत्-रूपसे बतलाना आरम्भ किया।

सनत्कुमारजी बोले—ब्रह्मन्! सुनो, इस सारस्वत कल्पसे पच्चीसवें कल्प पूर्वकी बात है, तुम कश्यपजीके पुत्र होकर उत्पन्न हुए थे। उस समय भी तुम्हारा नाम नारद ही था। एक दिन तुम भगवान् श्रीकृष्णका परम तत्त्व पूछनेके लिये कैलास पर्वतपर भगवान् शिवके समीप गये। वहाँ तुम्हारे प्रश्न करनेपर, महादेवजीने स्वयं जिसका साक्षात्कार किया था, श्रीहरिकी नित्य-लीलासे सम्बन्ध रखनेवाले उस परम रहस्यका तुमसे यथार्थरूपमें वर्णन किया। तब तुमने श्रीहरिकी नित्य-लीलाका दर्शन करनेके लिये भगवान् शङ्करसे पुनः प्रार्थना की। तब भगवान् सदाशिव इस प्रकार बोले—‘गोपीजनवल्लभचरणाञ्छरणं* प्रपदो’ यह मन्त्र

है। इस मन्त्रके सुरभि त्रृष्णि, गायत्री छन्द और गोपीवल्लभ भगवान् श्रीकृष्ण देवता कहे गये हैं, ‘प्रपन्नोऽस्मि’ ऐसा कहकर भगवान्की शरणागतिरूप भक्ति प्राप्त करनेके लिये इसका विनियोग बताया गया है। विप्रवर! इसका सिद्धादि-शोधन नहीं होता है। इसके लिये न्यासकी कल्पना भी नहीं की गयी है। केवल इस मन्त्रका चिन्तन ही भगवान्की नित्य लीलाको तत्काल प्रकाशित कर देता है। गुरुसे मन्त्र ग्रहण करके उनमें भक्तिभाव रखते हुए अपने धर्मपालनमें संलग्न हो गुरुदेवकी अपने ऊपर पूर्ण कृपा समझे और सेवाओंसे गुरुको संतुष्ट करे। साधुपुरुषोंके धर्मोंकी, जो शरणागतोंके भयको दूर करनेवाले हैं, शिक्षा ले। इहलोक और परलोककी चिन्ता छोड़कर उन सिद्धिदायक धर्मोंको अपनावे। ‘इहलोकका सुख, भोग और आयु पूर्वकर्मोंके अधीन हैं, कर्मानुसार उनकी व्यवस्था भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं ही करेंगे।’ ऐसा दृढ़ विचार कर अपने मन और बुद्धिके द्वारा निरन्तर नित्यलीलापरायण श्रीकृष्णका चिन्तन करे। दिव्य अर्चाविग्रहोंके रूपमें भी भगवान्का अवतार होता है। अतः उन विग्रहोंकी सेवा-पूजा-द्वारा सदा श्रीकृष्णकी आराधना करे। भगवान्की शरण चाहनेवाले प्रपञ्च भक्तोंको अनन्यभावसे उनका चिन्तन करना चाहिये और विद्वानोंको भगवान्का आश्रय रखकर देह-गेह आदिकी ओरसे उदासीन रहना चाहिये। गुरुकी अवहेलना, साधु-महात्माओंकी निन्दा, भगवान् शिव और विष्णुमें भेद करना, वेदनिन्दा, भगवन्नामके बलपर पापाचार करना, भगवन्नामकी

* गोपीजनवल्लभ श्रीकृष्णके चरणोंकी शरण लेता है।

महिमाको अर्थवाद समझना, नाम लेनेमें पाखण्ड फैलाना, आलसी और नास्तिकको भगवन्नामका उपदेश देना, भगवन्नामको भूलना अथवा नाममें आदरबुद्धि न होना—ये (दस) बड़े भयानक दोष हैं। वत्स! इन दोषोंको दूरसे ही त्याग देना चाहिये*। मैं भगवान्‌की शरणमें हूँ, इस भावसे सदा हृदयस्थित श्रीहरिका चिन्तन करे और यह विश्वास रखे कि वे भगवान् ही सदा मेरा पालन करते हैं और करेंगे। भगवान्‌से यह प्रार्थना करे—‘राधानाथ! मैं मन, वाणी और क्रियाद्वारा आपका हूँ। श्रीकृष्णवल्लभे! मैं तुम्हारा ही हूँ। आप ही दोनों मेरे आश्रय हैं।’ मुनिश्रेष्ठ! श्रीहरिके दास, सखा, पिता-माता और प्रेयसियाँ—सब-के-सब नित्य हैं; ऐसा महात्मा पुरुषोंको चिन्तन करना चाहिये। भगवान् श्यामसुन्दर प्रतिदिन वृन्दावन तथा ब्रजमें आते-जाते और सखाओंके साथ गौएँ चराते हैं। केवल असुर-विधंसकी लीला सदा नहीं होती। श्रीहरिके श्रीदामा आदि बारह सखा कहे गये हैं तथा श्रीराधा-रानीकी सुशीला आदि बत्तीस सखियाँ बतायी गयी हैं। वत्स! साधकको चाहिये वह अपनेको श्यामसुन्दरकी सेवाके सर्वथा अनुरूप समझे और श्रीकृष्णसेवाजनित सुख एवं आनन्दसे अपनेको अत्यन्त संतुष्ट अनुभव करे। प्रातःकाल ब्राह्ममुहूर्तसे लेकर आधी राततक समयानुरूप सेवाके द्वारा दोनों प्रिया-प्रियतमकी परिचर्या करे। प्रतिदिन एकाग्रचित होकर उन युगल सरकारके सहस्र नामोंका पाठ भी करे। मुनीश्वर! यह प्रपन्न भक्तोंके लिये साधन बताया गया है। यह मैंने

तुम्हारे समक्ष गूढ़ तत्त्व प्रकाशित किया है। सनत्कुमारजी कहते हैं—नारद! तब तुमने पुनः भगवान् सदाशिवसे पूछा—‘प्रभो! युगलसहस्रनाम कौन-से हैं? महामुने! तुम्हारे पूछनेपर भगवान् शिवने युगलसहस्रनाम भी बतलाया। वह सब मुझसे सुनो। रमणीय वृन्दावनमें यमुनाजीके तटसे लगे हुए कल्पवृक्षका सहारा लेकर श्यामसुन्दर श्रीराधारानीके साथ खड़े हैं। महामुने! ऐसा ध्यान करके युगलसहस्रनामका पाठ करे।

१. देवकीनन्दनः=देवकीको आनन्दित करनेवाले, २. शौरिः=शूरसेनके वंशज, ३. वासुदेवः=वसुदेव-पुत्र अथवा सबके भीतर निवास करनेवाले देवता, ४. बलानुजः=बलरामजीके छोटे भाई, ५. गदाग्रजः=गदके बड़े भाई, ६. कंसमोहः=अपनी अलौकिक शौर्यपूर्ण लीलाओंसे कंसको मोहित करनेवाले, ७. कंससेवकमोहनः=कंसकी सेवामें तत्पर असुर वीरोंको मोहित करनेवाले।

८. भिन्नार्गालः=जन्म लेनेके पश्चात् गोकुल-गमनकी इच्छासे कंसके कारागारमें लगे हुए किंवाङ्गोंकी अर्गाला (सिटकिनी)-का भेदन करनेवाले, ९. भिन्नलोहः=पिताके हाथों और पैरोंमें बँधी हुई लोहेकी हथकड़ी और बेड़ीको संकल्पमात्रसे तोड़ देनेवाले, १०. पितृवाह्यः=पिता वसुदेवके द्वारा सिरपर वहन करने योग्य शिशुरूप श्रीकृष्ण, ११. पितृस्तुतः=अवतारकालमें पिताके द्वारा जिनकी स्तुति की गयी, वे श्रीकृष्ण, १२. मातृस्तुतः=माता देवकीके द्वारा जिनकी स्तुति की गयी वे, १३. शिवध्येयः=भगवान् शङ्करके ध्यानके विषय, १४. यमुनाजलभेदनः=

* गुरोरवज्ञां साधूनां निन्दां भेदं हरे हरौ। वेदनिन्दां हरेनामिबलात्पापसमीहनम्॥
अर्थवादं हरेनाम्नि पाखण्डं नामसंग्रहे। अलसे नास्तिके चैव हरिनामोपदेशनम्॥
नामविस्मरणं चापि नाम्यनादरमेव च। संत्यजेद् दूरतो वत्स दोषानेतान्सुदारुणान्॥
(ना० पूर्व० ८२। २२—२४)

गोकुल जाते समय वसुदेवजीको मार्ग देनेके लिये यमुनाजीके जलका भेदन करनेवाले।

१५. ब्रजवासी=ब्रजमें निवास करनेवाले, १६. ब्रजानन्दी=अपने शुभागमनसे सम्पूर्ण ब्रजका आनन्द बढ़ानेवाले, १७. नन्दबालः=नन्दजीके पुत्र, १८. दयानिधिः=दयाके समुद्र, १९. लीलाबालः=लीलाके लिये बालरूपमें प्रकट, २०. पद्मनेत्रः=कमलसदृश नेत्रवाले, २१. गोकुलोत्सवः=गोकुलके लिये उत्सवरूप अथवा अपने जन्मसे गोकुलमें आनन्दोत्सवको बढ़ानेवाले, २२. ईश्वरः=सब प्रकारसे समर्थ।

२३. गोपिकानन्दनः=अपनी शैशवसुलभ चेष्टाओंसे यशोदा आदि गोपियोंको आनन्दित करनेवाले, २४. कृष्णः=सच्चिदानन्दस्वरूप अथवा सबको अपनी ओर खींचनेवाले, २५. गोपानन्दः=गोपोंके लिये मूर्तिमान् आनन्द, २६. सताङ्गतिः=साधु-महात्माओं तथा भक्तजनोंके आश्रय, २७. वकप्राणहरः=वकासुरके प्राण लेनेवाले, २८. विष्णुः=सर्वत्र व्यापक, २९. वकमुक्तिप्रदः=वकासुरको मोक्ष देनेवाले, ३०. हरिः=पाप, दुःख और अज्ञानको हर लेनेवाले।

३१. बलदोलाशयशयः=शेषस्वरूप बलरामरूपी हिंडोलेपर शयन करनेवाले, ३२. श्यामलः=श्यामवर्ण, ३३. सर्वसुन्दरः=पूर्ण सौन्दर्यके आश्रय, ३४. पद्मनाभः=जिनकी नाभिसे कमल प्रकट हुआ वे भगवान् विष्णु, ३५. हृषीकेशः=इन्द्रियोंके नियन्ता और प्रेरक, ३६. क्रीडामनुजबालकः=लीलाके लिये मनुष्य-बालकका रूप धारण किये हुए।

३७. लीलाविध्वस्तशकटः=अनायास ही चरणोंके स्पर्शसे छकड़ेको उलटकर उसमें स्थित असुरका नाश करनेवाले, ३८. वेदमन्त्राभिषेचितः=यशोदा मैयाकी प्रेरणासे बालारिष्टनिवारणके लिये ब्राह्मणोंद्वारा वेद-मन्त्रसे

अभिषिक्त, ३९. यशोदानन्दनः=यशोदा मैयाको आनन्द देनेवाले, ४०. कान्तः=कमनीय स्वरूप, ४१. मुनिकोटिनिषेवितः=करोड़ों मुनियोंद्वारा सेवित।

४२. नित्यं मधुवनवासी=मधुवनमें नित्य निवास करनेवाले, ४३. वैकुण्ठः=वैकुण्ठधामके अधिपति विष्णु, ४४. सम्भवः=सबकी उत्पत्तिके स्थान, ४५. क्रतुः=यज्ञस्वरूप, ४६. रमापतिः=लक्ष्मीपति, ४७. यदुपतिः=यदुवंशियोंके स्वामी, ४८. मुरारिः=मुर दैत्यके नाशक, ४९. मधुसूदनः=मधु नामक दैत्यको मारनेवाले।

५०. माधवः=यदुवंशान्तर्गत मधुकुलमें प्रकट, ५१. मानहारी=अभिमान और अहंकारका नाश करनेवाले, ५२. श्रीपतिः=लक्ष्मीके स्वामी, ५३. भूधरः=शेषनागरूपसे पृथ्वीको धारण करनेवाले, ५४. प्रभुः=सर्वसमर्थ, ५५. बृहद्वन्महालीलः=महावनमें बड़ी-बड़ी लीलाएँ करनेवाले, ५६. नन्दसूनः=नन्दजीके पुत्र, ५७. महासनः=अनन्त शेषरूपी महान् आसनपर विराजनेवाले।

५८. तृणावर्तप्राणहारी=तृणावर्त नामक दैत्यको मारनेवाले, ५९. यशोदाविस्मयप्रदः=अपनी अद्भुत लीलाओंसे यशोदा मैयाको आश्रयमें डाल देनेवाले, ६०. त्रैलोक्यवक्त्रः=अपने मुखमें तीनों लोकोंको दिखानेवाले, ६१. पद्माक्षः=विकसित कमलदलके समान विशाल नेत्रोंवाले, ६२. पद्महस्तः=हाथमें कमल धारण करनेवाले, ६३. प्रियङ्कः=सबका प्रिय कार्य करनेवाले।

६४. ब्रह्मण्यः=ब्राह्मण-हितकारी, ६५. धर्मगोसा=धर्मकी रक्षा करनेवाले, ६६. भूपतिः=पृथ्वीके स्वामी, ६७. श्रीधरः=वक्षःस्थलमें लक्ष्मीको धारण करनेवाले, ६८. स्वराट्=स्वयंप्रकाश, ६९. अजाघ्यक्षः=ब्रह्माजीके स्वामी, ७०. शिवाघ्यक्षः=भगवान् शिवके स्वामी, ७१. धर्माघ्यक्षः=धर्मके अधिपति, ७२. महेश्वरः=परमेश्वर।

७३. वेदान्तवेद्यः=उपनिषदोंद्वारा जानने योग्य परमात्मा, ७४. ब्रह्मस्थः=वेदमें स्थित, ७५. प्रजापतिः=सम्पूर्ण जीवोंके पालक, ७६. अमोघदृक्=जिनकी दृष्टि कभी चूकती नहीं ऐसे सर्वसाक्षी, ७७. गोपीकरावलम्बी=गोपियोंके हाथको पकड़कर नाचनेवाले, ७८. गोपबालकसुप्रियः=गोपबालकोंके अत्यन्त प्रियतम।

७९. बलानुयायी=बलरामजीका अनुकरण करनेवाले, ८०. बलवान्=बली, ८१. श्रीदामप्रियः=श्रीदामाके प्रिय सखा, ८२. आत्मवान्=मनको वशमें करनेवाले, ८३. गोपीगृहाङ्गणरतिः=गोपियोंके घर और आँगनमें खेलनेवाले, ८४. भद्रः=कल्याणस्वरूप, ८५. सुश्लोकमङ्गलः=अपने लोकपावन सुयशसे सबका मङ्गल करनेवाले।

८६. नवनीतहरः=माखनका हरण करनेवाले, ८७. बालः=बाल्यावस्थासे विभूषित, ८८. नवनीत-प्रियाशनः=मक्खन जिनका प्यारा भोजन है, ८९. बालवृन्दी=गोप-बालकोंके समुदायको साथ रखनेवाले, ९०. मर्कवृन्दी=वानरोंके झुंडके साथ खेलनेवाले, ९१. चकिताक्षः=आश्र्वयुक्त चञ्चल नेत्रोंसे देखनेवाले, ९२. पलायितः=मैयाकी साँटीके भयसे भाग जानेवाले।

९३. यशोदातर्जितः=यशोदा मैयाकी डाँट सहनेवाले, ९४. कम्पी=मैया मारेगी इस भयसे काँपनेवाले, ९५. मायारुदितशोभनः=लीलाकृत रुदनसे सुशोभित, ९६. दामोदरः=मैयाद्वारा रस्सीसे कमरमें बाँधे जानेवाले, ९७. अप्रमेयात्मा=जिसकी कोई माप नहीं ऐसे स्वरूपसे युक्त, ९८. दयालुः=सबपर दया करनेवाले, ९९. भक्तवत्सलः=भक्तोंसे प्यार करनेवाले।

१००. उलूखले सुबद्धः=ऊखलमें अच्छी तरह बँधे हुए, १०१. नग्नशिरा=झुके मस्तकवाले, १०२. गोपीकर्दर्थितः=गोपियोंद्वारा यशोदा मैयाके पास जिनके बालचापल्यकी शिकायत की गयी

है वे, १०३. वृक्षभङ्गी=यमलार्जुन नामक वृक्षोंको भङ्ग करनेवाले, १०४. शोकभङ्गी=स्वयं सुरक्षित रहकर स्वजनोंका शोक भङ्ग करनेवाले, १०५. धनदात्मजमोक्षणः=कुबेरपुत्रोंका उद्धार करनेवाले।

१०६. देवर्षिवचनश्लाघी=देवर्षि नारदके वचनका आदर करनेवाले, १०७. भक्तवात्सल्यसागरः=भक्तवत्सलताके समुद्र, १०८. ब्रजकोलाहलकरः=अपनी बालोचित क्रीड़ाओंसे ब्रजमें कोलाहल मचा देनेवाले, १०९. ब्रजानन्दविवर्धनः=ब्रजवासियोंके आनन्दकी वृद्धि करनेवाले।

११०. गोपात्मा=गोपस्वरूप, १११. प्रेरकः=इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदिको प्रेरणा देनेवाले, ११२. साक्षी=अनन्त विश्वके सम्पूर्ण पदार्थों और भावोंके द्रष्टा, ११३. वृन्दावननिवासकृत्=वृन्दावनमें निवास करनेवाले, ११४. वत्सपालः=बछड़ोंको पालनेवाले, ११५. वत्सपतिः=बछड़ोंके स्वामी एवं रक्षक, ११६. गोपदारकमण्डनः=गोपबालकोंकी मण्डलीको सुशोभित करनेवाले।

११७. बालक्रीडः=बालोचित खेल खेलनेवाले, ११८. बालरतिः=गोपबालकोंसे प्रेम करनेवाले, ११९. बालकः=बालरूपधारी गोपाल, १२०. कनकाङ्गदी=सोनेका बाजूबंद पहननेवाले, १२१. पीताम्बरः=पीताम्बर पहननेवाले, १२२. हेममाली=सुवर्णमालाधारी, १२३. मणिमुक्ताविभूषणः=मणियों और मोतियोंके आभूषण धारण करनेवाले।

१२४. किङ्किणीकटकी=कटिमें क्षुद्र घण्टिका और हाथोंमें कड़े पहननेवाले, १२५. सूत्री=बाल्यावस्थामें सूतकी करधनी और बड़े होनेपर यज्ञोपवीत धारण करनेवाले; १२६. नूपुरी=पैरोंमें नूपुर पहननेवाले, १२७. मुद्रिकान्वितः=हाथकी अंगुलियोंमें अंगूठी धारण करनेवाले, १२८. वत्सासुरप्रतिध्वंसी=वत्सासुरका विनाश

करनेवाले, १२९. वकासुरविनाशनः= वकासुरका विनाश करनेवाले।

१३०. अघासुरविनाशी=अघासुर नामक सर्परूपधारी दैत्यका विनाश करनेवाले, १३१. विनिद्रीकृतबालकः=सर्पके विषसे मूर्च्छित गोपबालकोंको अपनी अमृतमयी दृष्टिसे जीवित करके जगानेवाले, १३२. आद्यः=सबके आदिकारण; १३३. आत्मप्रदः=प्रेमी भक्तोंके लिये अपने आत्मातकको दे डालनेवाले, १३४. सङ्गी=गोपबालकोंके सङ्ग रहनेवाले, १३५. यमुनातीरभोजनः=यमुनाजीके तटपर ग्वालबालोंके साथ भोजन करनेवाले।

१३६. गोपालमण्डलीमध्यः=ग्वालबालोंकी मण्डलीके बीचमें बैठनेवाले, १३७. सर्वगोपालभूषणः=सम्पूर्ण ग्वालबालोंको विभूषित करनेवाले, १३८. कृतहस्ततलग्रासः=हथेलीमें अन्नका ग्रास लेनेवाले, १३९. व्यञ्जनाश्रितशाखिकः=वृक्षोंपर भोजन-सामग्री एवं व्यञ्जन रखनेवाले।

१४०. कृतबाहुशृङ्खयष्टिः=हाथोंमें सींग और छड़ी धारण करनेवाले, १४१. गुञ्जालंकृतकण्ठकः=गुञ्जाकी मालासे अपने कण्ठको विभूषित करनेवाले, १४२. मयूरपिच्छमुकुटः=मोरपंखका मुकुट धारण करनेवाले, १४३. वनमालाविभूषितः=वनमालासे अलंकृत।

१४४. गैरिकाचित्रितवपुः=गेरूसे अपने शरीरमें चित्रोंकी रचना करनेवाले, १४५. नवमेघवपुः=नवीन मेघ-घटाके समान श्याम शरीरवाले, १४६. स्मरः= कामदेवस्वरूप, १४७. कोटिकन्दर्पलावण्यः=करोड़ों कामदेवोंके समान सौन्दर्यशाली, १४८. लसन्मकरकुण्डलः=सुन्दर मकराकृति कुण्डल धारण करनेवाले।

१४९. आजानुबाहुः=घुटनेतक लंबी भुजावाले, १५०. भगवान्=ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य—इन छहों ऐश्वर्योंसे पूर्णतया युक्त,

१५१. निद्रागहितलोचनः=निद्राशून्य नेत्रोंवाले, १५२. कोटिसागरगाम्भीर्यः=करोड़ों समुद्रोंके समान गम्भीर, १५३. कालकालः=कालके भी महाकाल, १५४. सदाशिवः=नित्य कल्याणस्वरूप।

१५५. विरञ्चिमोहनवपुः=अपने अद्भुतरूपसे ब्रह्माजीको भी मोहमें डालनेवाले, १५६. गोपवत्सवपुर्धरः=ग्वालबालों और बछड़ोंका रूप धारण करनेवाले, १५७. ब्रह्माण्डकोटिजनकः=करोड़ों ब्रह्माण्डोंके उत्पादक, १५८. ब्रह्मोहविनाशकः=ब्रह्माजीके मोहका नाश करनेवाले।

१५९. ब्रह्मा=स्वयं ही ब्रह्माजीके रूपमें प्रकट, १६०. ब्रह्मेडितः=ब्रह्माजीके द्वारा स्तुत, १६१. स्वामी=सबके अधिपति, १६२. शक्रदर्पादिनाशनः=इन्द्रके घमंड आदिको नष्ट करनेवाले, १६३. गिरिपूजोपदेष्टा=गोवर्धन पर्वतकी पूजाका उपदेश देनेवाले, १६४. धृतगोवर्धनाचलः=गोवर्धन पर्वतको धारण करनेवाले।

१६५. पुरन्दरेडितः=इन्द्रके द्वारा स्तुत, १६६. पूज्यः=सबके लिये पूजनीय, १६७. कामधेनुप्रपूजितः=कामधेनुद्वारा पूजित, १६८. सर्वतीर्थाभिषिक्तः=सुरभिद्वारा सम्पूर्ण तीर्थोंकी जलसे इन्द्रपदपर अभिषिक्त, १६९. गोविन्दः=गौओंके इन्द्र होनेपर गोविन्द नामसे प्रसिद्ध, १७०. गोपरक्षकः= गोपोंकी रक्षा करनेवाले।

१७१. कालियार्तिकरः=कालिय नागका दमन करनेवाले, १७२. क्रूरः=दुष्टोंको दण्ड देनेके लिये कठोर, १७३. नागपत्नीरितः=नागपत्नियोंद्वारा स्तुत, १७४. विराट=विराट पुरुष, १७५. धेनुकारिः=धेनुकासुरके शत्रु, १७६. प्रलभ्मारिः=बलभद्ररूपसे प्रलभ्म नामक असुरका नाश करनेवाले, १७७. वृषासुरविमर्दनः=वृषभरूपधारी अरिष्टासुरका मर्दन करनेवाले।

१७८. मयासुरात्मजघ्वसी=मयासुरके पुत्र

व्योमासुरका नाश करनेवाले, १७९. केशिकण्ठविदारकः=केशीका कण्ठ विदीर्ण करनेवाले, १८०. गोपगोसा=गवालोंके रक्षक, १८१. दावाग्निपरिशोषकः=दावानलका शोषण करनेवाले ।

१८२. गोपकन्यावस्त्रहारी=गोपकुमारियोंके चीर हरण करनेवाले, १८३. गोपकन्यावरप्रदः=गोपकन्याओंको वर देनेवाले, १८४. यज्ञपत्न्यन्नभोजी=यज्ञपत्नियोंके अन्न भोजन करनेवाले, १८५. मुनिमानापहारकः=अपनेको मुनि माननेवाले ब्राह्मणोंके अभिमानको दूर करनेवाले ।

१८६. जलेशमानमथनः=जलके स्वामी वरुणका मान मर्दन करनेवाले, १८७. नन्दगोपालजीवनः=अजगरसे छुड़ाकर नन्दगोपको जीवन देनेवाले, १८८. गन्धर्वशापमोक्ता=अजगररूपमें आये हुए गन्धर्व (विद्याधर)-को शापसे छुड़ानेवाले, १८९. शङ्खचूडशिरोहरः=शङ्खचूड नामक गुह्यकका मस्तक काट लेनेवाले ।

१९०. वंशीवटी=वंशीवटके समीप लीला करनेवाले, १९१. वेणुवादी=वंशी बजानेवाले, १९२. गोपीचिन्तापहारकः=गोपियोंकी चिन्ताको दूर करनेवाले, १९३. सर्वगोसा=सबके रक्षक, १९४. समाह्नानः=सबके द्वारा पुकारे जानेवाले, १९५. सर्वगोपीमनोरथः=सम्पूर्ण गोपाङ्गनाओंके अभीष्ट ।

१९६. व्यङ्ग्यधर्मप्रवक्ता=व्यङ्ग्योक्तिद्वारा धर्मका उपदेश देनेवाले, १९७. गोपीमण्डलमोहनः=गोपसुन्दरियोंके समुदायको मोहित करनेवाले, १९८. रासक्रीडारसास्वादी=रासक्रीडाके रसका आस्वादन करनेवाले, १९९. रसिकः=रसका अनुभव करनेवाले, २००. राधिकाधवः=श्रीराधाके प्राणनाथ ।

२०१. किशोरीप्राणनाथः=श्रीकिशोरीजीके प्राणवल्लभ, २०२. वृषभानुसुताप्रियः=वृषभानु-नन्दिनीके प्यारे, २०३. सर्वगोपीजनानन्दी=सम्पूर्ण

गोपीजनोंको आनन्द देनेवाले, २०४. गोपीजन-विमोहनः=गोपाङ्गनाओंके मनको मोह लेनेवाले ।

२०५. गोपिकागीतचरितः=गोपाङ्गनाओंद्वारा गाये हुए पावन चरित्रवाले, २०६. गोपीनर्तनलालसः=गोपियोंके रासनृत्यकी अभिलाषा रखनेवाले, २०७. गोपीस्कन्धाश्रितकरः=गोपीके कंधेपर हाथ रखकर चलनेवाले, २०८. गोपिकाचुम्बनप्रियः=यशोदा आदि मातृस्थानीया वात्सल्यवती गोपियोंके द्वारा किया जानेवाला मुखचुम्बन जिन्हें प्रिय है वे श्यामसुन्दर ।

२०९. गोपिकामार्जितमुखः=गोपाङ्गनाएँ अपने अञ्चलसे जिनका मुख पोंछती हैं वे, २१०. गोपीव्यजनवीजितः=गोपियाँ जिन्हें पंखा छुलाकर आराम पहुँचाती हैं वे, २११. गोपिकाकेशसंस्कारी=गोपिकाके केशोंको सँवारनेवाले, २१२. गोपिकापुष्पसंस्तरः=गोपिकाका फूलोंसे शृङ्गार करनेवाले ।

२१३. गोपिकाहृदयालम्बी=गोपीके हृदयका आश्रय लेनेवाले, २१४. गोपीवहनतत्परः=गोपी (श्रीराधा)-को कंधेपर बिठाकर ढोनेके लिये प्रस्तुत, २१५. गोपिकामदहारी=गोपाङ्गनाओंके अभिमानको चूर्ण करनेवाले, २१६. गोपिकापरमार्जितः=गोपाङ्गनाओंको परम फलके रूपमें प्राप्त ।

२१७. गोपिकाकृतसल्लीलः=रासलीलामें अन्तर्धान हो जानेपर गोपिकाओंने जिनकी पवित्र लीलाओंका अनुकरण किया था वे श्रीकृष्ण, २१८. गोपिकासंस्मृतप्रियः=गोपिकाओंद्वारा निरन्तर चिन्तन किये जानेवाले प्रियतम, २१९. गोपिकावन्दितपदः=गोपाङ्गनाओंद्वारा वन्दित चरणोंवाले, २२०. गोपिकावशर्वर्तनः=गोपसुन्दरियोंके वशमें रहनेवाले ।

२२१. राधापराजितः=श्रीराधारानीसे हार मान लेनेवाले, २२२. श्रीमान्=शोभाशाली,

२२३. निकुञ्जेसुविहारवान्=वृन्दावनके कुञ्जमें सुन्दर लीला करनेवाले, २२४. कुञ्जप्रियः=निकुञ्जके प्रेमी, २२५. कुञ्जवासी=कुञ्जमें निवास करनेवाले, २२६. वृन्दावनविकाशनः=वृन्दावनको प्रकाशित करनेवाले।

२२७. यमुनाजलसिक्ताङ्गः=यमुनाजीके जलसे अभिषिक्त अङ्गोंवाले, २२८. यमुनासौख्यदायकः=यमुनाजीको सुख देनेवाले, २२९. शशिसंस्तम्भनः=रासलीलाकी रात्रिमें चन्द्रमाकी गतिको रोक देनेवाले, २३०. शूरः=अखण्ड शौर्यसम्पन्न, २३१. कामी=प्रेमी भक्तोंसे मिलनेकी कामनावाले, २३२. कामविमोहनः=अपनी दिव्य लीलाओंसे कामदेवको विमोहित कर देनेवाले।

२३३. कामाद्यः=कामदेवके आदिकारण, २३४. कामनाथः=कामके स्वामी, २३५. काममानसभेदनः=कामदेवके भी हृदयका भेदन करनेवाले, २३६. कामदः=इच्छानुरूप भोग देनेवाले, २३७. कामरूपः=भक्तजनोंकी कामनाके अनुरूप रूप धारण करनेवाले, २३८. कामिनीकामसंचयः=गोपकामिनियोंके प्रेमका संग्रह करनेवाले।

२३९. नित्यक्रीडः=नित्य खेल करनेवाले, २४०. महालीलः=महती लीला करनेवाले, २४१. सर्वः=सर्वस्वरूप, २४२. सर्वगतः=सर्वत्र व्यापक, २४३. परमात्मा=परब्रह्मस्वरूप, २४४. पराधीशः=परमेश्वर, २४५. सर्वकारणकारणः=समस्त कारणोंके भी कारण।

२४६. गृहीतनारदवचाः=नारदजीके वचन माननेवाले, २४७. अक्रूरपरिचिन्तितः=व्रजमें जाते हुए अक्रूरजीके द्वारा मार्गमें जिनका विशेषरूपसे चिन्तन किया गया, वे श्रीकृष्ण, २४८. अक्रूरवन्दितपदः=अक्रूरजीके द्वारा वन्दित चरणोंवाले, २४९. गोपिकातोषकारकः=भावी विरहसे व्याकुल हुई गोपाङ्गनाओंको सान्त्वना देनेवाले।

२५०. अक्रूरवाक्यसंग्रही=अक्रूरजीके वचनोंको स्वीकार करनेवाले, २५१. मधुरावासकारणः=मथुरामें निवास करनेवाले, २५२. अक्रूरतापशमनः=अक्रूरजीका दुःख दूर करनेवाले, २५३. रजकायुः=प्रणाशनः=कंसके धोबीकी आयुको नष्ट करनेवाले।

२५४. मथुरानन्ददायी=मथुरावासियोंको आनन्द देनेवाले, २५५. कंसवस्त्रविलुण्ठनः=कंसके कपड़ोंको लूट लेनेवाले, २५६. कंसवस्त्रपरीथानः=कंसके वस्त्र पहननेवाले, २५७. गोपवस्त्रप्रदायकः=ग्वालबालोंको वस्त्र देनेवाले।

२५८. सुदामगृहगामी=सुदामा मालीके घर जानेवाले, २५९. सुदामपरिपूजितः=सुदामा मालीके द्वारा पूजित, २६०. तन्तुवायकसम्प्रीतः=दर्जीके ऊपर प्रसन्न, २६१. कुञ्जाचन्दनलेपनः=कुञ्जाके घिसे हुए चन्दनको अपने श्रीअङ्गोंमें लगानेवाले।

२६२. कुञ्जारूपप्रदः=कुञ्जाको सुन्दर रूप देनेवाले, २६३. विज्ञः=विशिष्ट ज्ञानवान्, २६४. मुकुन्दः=मोक्ष देनेवाले, २६५. विष्टरश्रवाः=विस्तृत सुयश एवं कानोंवाले, २६६. सर्वज्ञः=सब कुछ जाननेवाले, २६७. मथुरालोकी=मथुरानगरीका दर्शन करनेवाले, २६८. सर्वलोकाभिनन्दनः=सब लोगोंसे अभिनन्दन (सम्मान) पानेवाले।

२६९. कृपाकटाक्षदर्शी=कृपापूर्ण कटाक्षसे सबकी ओर देखनेवाले, २७०. दैत्यारिः=दैत्योंके शत्रु, २७१. देवपालकः=देवताओंके रक्षक, २७२. सर्वदुःखप्रशमनः=सबके सम्पूर्ण दुःखोंका नाश करनेवाले, २७३. धनुर्भङ्गी=धनुष तोड़नेवाले, २७४. महोत्सवः=महान् उत्सवरूप।

२७५. कुवलयापीडहन्ता=कुवलयापीड नामक हाथीका वध करनेवाले, २७६. दन्तस्कन्धः=हाथीके तोड़े हुए दाँतोंको कंधेपर धारण करनेवाले, २७७. बलाग्रणी=बलरामजीको आगे करके चलनेवाले, २७८. कल्परूपधरः=विभिन्न लोगोंके

लिये उनकी भावनाके अनुसार रूप धारण करनेवाले, २७९. थीरः=अविचल धैर्यसे सम्पन्न, २८०. दिव्यवस्त्रानुलेपनः=दिव्य वस्त्र तथा दिव्य अङ्गराग धारण करनेवाले।

२८१. मङ्गरूपः=कंसके अखाड़ेमें पहलवानके रूपमें उपस्थित, २८२. महाकालः=महान् कालरूप, २८३. कामरूपी=इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले, २८४. बलान्वितः=अनन्त बलसम्पन्न, २८५. कंसत्रासकरः=कंसको भयभीत कर देनेवाले, २८६. भीमः=कंसके लिये भयंकर, २८७. मुष्टिकान्तः=बलभद्ररूपसे मुष्टिकके जीवनका अन्त कर देनेवाले, २८८. कंसहा=कंसका वध करनेवाले।

२८९. चाणूरघः=चाणूरका नाश करनेवाले, २९०. भयहरः=भय हर लेनेवाले, २९१. शलारिः=शलके शत्रु, २९२. तोशलान्तकः=तोशलका अन्त करनेवाले, २९३. वैकुण्ठवासी=विष्णुरूपसे वैकुण्ठधाममें निवास करनेवाले, २९४. कंसारिः=कंसके शत्रु, २९५. सर्वदुष्टनिषूदनः=सब दुष्टोंका संहार करनेवाले।

२९६. देवदुन्दुभिनिर्घोषी=देव-दुन्दुभिघोषके कारण, २९७. पितृशोकनिवारणः=पिता-माता (वसुदेव-देवकी)-का शोक दूर करनेवाले, २९८. यादवेन्द्रः=यदुकुलके स्वामी, २९९. सतां नाथः=सत्पुरुषोंके रक्षक, ३००. यादवारिप्रमर्दनः=यादवोंके शत्रुओंका मर्दन करनेवाले।

३०१. शौरिशोकविनाशी=वसुदेवजीके शोकका नाश करनेवाले, ३०२. देवकीतापनाशनः=देवकीका संताप नष्ट करनेवाले, ३०३. उग्रसेनपरित्राता=उग्रसेनके रक्षक, ३०४. उग्रसेनाभिपूजितः=उग्रसेनद्वारा पूजित।

३०५. उग्रसेनाभिषेकी=उग्रसेनका राज्याभिषेक करनेवाले, ३०६. उग्रसेनदयापरः=उग्रसेनके प्रति दयाभाव बनाये रखनेवाले, ३०७. सर्वसात्त्वतसाक्षी=

सम्पूर्ण यदुवंशियोंकी देख-भाल करनेवाले, ३०८. यदूनामभिनन्दनः=यदुवंशियोंको आनन्दित करनेवाले।

३०९. सर्वमाथुरसंसेव्यः=सम्पूर्ण मथुरावासियोंद्वारा सेवन करने योग्य, ३१०. करुणः=दयालु, ३११. भक्तबान्धवः=भक्तोंके भाई-बन्धु, ३१२. सर्वगोपालधनदः=सम्पूर्ण ग्वालोंको धन देनेवाले, ३१३. गोपीगोपाललालसः=गोपियों और ग्वालोंसे मिलनेके लिये उत्सुक रहनेवाले।

३१४. शौरिदत्तोपवीती=वसुदेवजीके द्वारा उपनयन-संस्कारमें दिये हुए यज्ञोपवीतको धारण करनेवाले, ३१५. उग्रसेनदयाकरः=उग्रसेनपर दया करनेवाले, ३१६. गुरुभक्ताः=गुरु सान्दीपिनिके प्रति भक्तिभावसे युक्त, ३१७. ब्रह्मचारी=गुरुकुलमें रहकर ब्रह्मचर्यका पालन करनेवाले, ३१८. निगमाध्ययने रतः=वेदाध्ययनपरायण।

३१९. संकर्षणसहाध्यायी=बलरामजीके सहपाठी, ३२०. सुदामसुहृत्=सुदामा ब्राह्मणके सखा, ३२१. विद्यानिधिः=विद्याके भण्डार, ३२२. कलाकोषः=सम्पूर्ण कलाओंके कोषागार, ३२३. मृतपुत्रप्रदः=मरे हुए गुरुपुत्रोंको यमलोकसे जीवित लाकर गुरुकी सेवामें अर्पित करनेवाले।

३२४. चक्री=सुदर्शन चक्रधारी, ३२५. पाञ्चजनी=पाञ्चजन्य शङ्ख धारण करनेवाले, ३२६. सर्वनारकिमोचनः=सम्पूर्ण नरकवासियोंका उद्धार करनेवाले, ३२७. यमार्चितः=यमराजद्वारा पूजित, ३२८. परः=सर्वोत्कृष्ट, ३२९. देवः=द्युतिमान्, ३३०. नामोच्चारवशः=अपने नामके उच्चारणमात्रसे वशमें हो जानेवाले, ३३१. अच्युतः=अपनी महिमासे कभी च्युत न होनेवाले।

३३२. कुञ्जाविलासी=कुञ्जाके कुबड़ेपनको मिटानेकी लीला करनेवाले, ३३३. सुभगः=पूर्ण सौभाग्यशाली, ३३४. दीनबन्धुः=दीन-दुःखियों

और असहायोंके बन्धु, ३३५. अनूपमः=जिनके समान दूसरा कोई नहीं, ३३६. अक्रूरगृहगोसाः=अक्रूरके गृहकी रक्षा करनेवाले, ३३७. प्रतिज्ञापालकः=प्रतिज्ञाका पालन करनेवाले, ३३८. शुभः=शुभस्वरूप।

३३९. जरासन्धजयी=सत्रह बार जरासन्धको जीतनेवाले, ३४०. विद्वान्=सर्वज्ञ, ३४१. यवनान्तः=कालयवनका अन्त करनेवाले, ३४२. द्विजाश्रयः=द्विजोंके आश्रय, ३४३. मुचुकुन्दप्रियकरः=मुचुकुन्दका प्रिय करनेवाले, ३४४. जरासन्धपलायितः=अठारहवीं बारके युद्धमें जरासन्धके सामनेसे युद्ध छोड़कर भाग जानेवाले।

३४५. द्वारकाजनकः=द्वारकापुरीको प्रकट करनेवाले, ३४६. गूढः=मानवरूपमें छिपे हुए परमात्मा, ३४७. ब्रह्मण्यः=ब्राह्मणभक्त, ३४८. सत्यसंगरः=सत्यप्रतिज्ञ, ३४९. लीलाधरः=लीलाधारी, ३५०. प्रियकरः=सबका प्रिय करनेवाले, ३५१. विश्वकर्मा=बहुत प्रकारके कर्म करनेवाले, ३५२. यशप्रदः=दूसरोंको यश देनेवाले।

३५३. रुक्मणीप्रियसंदेशः=रुक्मणीको प्रिय संदेश देनेवाले, ३५४. रुक्मिशोकविवर्धनः=रुक्मीका शोक बढ़ानेवाले, ३५५. चैद्यशोकालयः=शिशुपालके लिये शोकके भण्डार, ३५६. श्रेष्ठः=उत्तम गुणसम्पन्न, ३५७. दुष्टराजन्यनाशनः=दुष्ट राजाओंका नाश करनेवाले।

३५८. रुक्मिवैरुप्यकरणः=रुक्मीके आधे बाल मुड़ाकर उसे कुरुप बना देनेवाले, ३५९. रुक्मणीवचने रतः=रुक्मणीके वचनका पालन करनेमें तत्पर, ३६०. बलभद्रवचोग्राही=बलभद्रजीकी आज्ञा माननेवाले, ३६१. मुक्तरुक्मी=रुक्मीको जीवित छोड़ देनेवाले, ३६२. जनार्दनः=भक्तोंद्वारा याचित।

३६३. रुक्मणीप्राणनाथः=रुक्मणीके प्राणवल्लभ, ३६४. सत्यभामापतिः=सत्यभामाके

स्वामी, ३६५. स्वयं भक्तपक्षी=स्वयं ही भक्तोंका पक्ष लेनेवाले, ३६६. भक्तिवश्यः=भक्तिसे वशमें हो जानेवाले, ३६७. अक्रूरमणिदायकः=अक्रूरजीको स्यमन्तकमणि देनेवाले।

३६८. शतधन्वप्राणहारी=शतधन्वाके प्राण लेनेवाले, ३६९. ऋक्षराजसुताप्रियः=रीछोंके राजा जाम्बवान्की पुत्रीके प्रियतम पति, ३७०. सत्राजित्तनयाकान्तः=सत्राजित्की सुपुत्री सत्यभामाके प्राणवल्लभ, ३७१. मित्रविन्दापहारकः=मित्रविन्दाका अपहरण करनेवाले।

३७२. सत्यापतिः=नग्रजित्की पुत्री सत्याके स्वामी, ३७३. लक्ष्मणाजित्=स्वयंवरमें लक्ष्मणाको जीतनेवाले, ३७४. पूज्यः=पूजाके योग्य, ३७५. भद्राप्रियङ्करः=भद्राका प्रिय करनेवाले, ३७६. नरकासुरघाती=नरकासुरका वध करनेवाले, ३७७. लीलाकन्याहरः=लीलापूर्वक षोडश सहस्र कन्याओंको नरकासुरकी कैदसे छुड़ाकर अपने साथ ले जानेवाले, ३७८. जयी=विजयशील।

३७९. मुरारि=मुर दैत्यका नाश करनेवाले, ३८०. मदनेशः=कामदेवपर भी शासन करनेवाले, ३८१. धरित्रीदुःखनाशनः=धरतीका दुःख दूर करनेवाले, ३८२. वैनतेयी=गरुड़के स्वामी, ३८३. स्वर्गगामी=पारिजातके लिये स्वर्गलोककी यात्रा करनेवाले, ३८४. अदित्याः कुण्डलप्रदः=अदितिको कुण्डल देनेवाले।

३८५. इन्द्रार्चितः=इन्द्रके द्वारा पूजित, ३८६. रमाकान्तः=लक्ष्मीके प्रियतम, ३८७. वज्रिभार्याप्रपूजितः=इन्द्रपत्नी शचीके द्वारा पूजित, ३८८. पारिजातापहारी=पारिजात वृक्षका अपहरण करनेवाले, ३८९. शक्रमानापहारकः=इन्द्रका अभिमान चूर्ण करनेवाले।

३९०. प्रद्युम्नजनकः=प्रद्युम्नके पिता, ३९१. साम्बतातः=साम्बके पिता, ३९२. बहुसुतः=अधिक पुत्रोंवाले, ३९३. विष्णु=विष्णुस्वरूप,

३९४. गर्गचार्यः=गर्गमुनिको आचार्य बनानेवाले,
३९५. सत्यगतिः=सत्यसे ही प्राप्त होनेवाले,
३९६. धर्माधारः=धर्मके आश्रय, ३९७. धराधरः=पृथ्वीको धारण करनेवाले।

३९८. द्वारकामण्डनः=द्वारकाको सुशोभित करनेवाले, ३९९. इलोक्यः=यशोगानके योग्य, ४००. सुश्लोकः=उत्तम यशवाले, ४०१. निगमालयः=वेदोंके आश्रय, ४०२. पौण्ड्रकप्राणहारी=मिथ्या वासुदेवनामधारी पौण्ड्रकके प्राण लेनेवाले, ४०३. काशिराजशिरोहरः=काशिराजका सिर काटनेवाले।

४०४. अवैष्णवविप्रदाही=अवैष्णव ब्राह्मणोंको, जो यदुवंशियोंके प्रति मारणका प्रयोग कर रहे थे, दग्ध करनेवाले, ४०५. सुदक्षिणभयावहः=काशिराजके पुत्र सुदक्षिणको भय देनेवाले, ४०६. जरासन्धविदारी=भीमसेनके द्वारा जरासन्धको चीर डालनेवाले, ४०७. धर्मनन्दनयज्ञकृत्=धर्मपुत्र युधिष्ठिरका यज्ञ पूर्ण करनेवाले।

४०८. शिशुपालशिरश्छेदी=शिशुपालका सिर काटनेवाले, ४०९. दन्तवक्त्रविनाशनः=दन्तवक्त्रका नाश करनेवाले, ४१०. विदूरथान्तकः=विदूरथके काल, ४११. श्रीशः=लक्ष्मीके स्वामी, ४१२. श्रीदः=सम्पत्ति देनेवाले, ४१३. द्विविदनाशनः=बलभद्ररूपसे द्विविद वानरका नाश करनेवाले।

४१४. रुक्मिणीमानहारी=रुक्मिणीका अभिमान दूर करनेवाले, ४१५. रुक्मिणीमानवर्धनः=रुक्मिणीका सम्मान बढ़ानेवाले, ४१६. देवर्षिशापहर्ता=देवर्षि नारदका शाप दूर करनेवाले, ४१७. द्रौपदीवाक्यपालकः=द्रौपदीके वचनोंका पालन करनेवाले।

४१८. दुर्वासोभयहारी=दुर्वासाका भय दूर करनेवाले, ४१९. पाञ्चालीस्मरणागतः=द्रौपदीके स्मरण करते ही आ पहुँचनेवाले, ४२०. पार्थदूतः=कुन्तीपुत्रोंके दूत, ४२१. पार्थमन्त्री=कुन्तीपुत्रोंके

मन्त्री (सलाहकार), ४२२. पार्थदुःखौघनाशनः=कुन्तीपुत्रोंके दुःखसमुदायका नाश करनेवाले।

४२३. पार्थमानापहारी=कुन्तीपुत्रोंका अभिमान दूर करनेवाले, ४२४. पार्थजीवनदायकः=कुन्तीपुत्रोंकी जीवन देनेवाले, ४२५. पाञ्चालीवस्त्रदाता=कौरवोंकी सभामें द्रौपदीको वस्त्रराशि अर्पण करनेवाले, ४२६. विश्वपालकपालकः=विश्वकी रक्षा करनेवाले देवताओंके भी रक्षक।

४२७. श्वेताश्वसारथिः=श्वेत घोड़ोंवाले अर्जुनके सारथि, ४२८. सत्यः=सत्यस्वरूप,

४२९. सत्यसाध्यः=सत्यसे ही प्राप्त होने योग्य, ४३०. भयापहः=भक्तोंके भयका नाश करनेवाले, ४३१. सत्यसन्धः=सत्यप्रतिज्ञ, ४३२. सत्यरतिः=सत्यमें रत, ४३३. सत्यप्रियः=सत्य जिनको प्यारा है, ४३४. उदारधीः=उदार बुद्धिवाले।

४३५. महासेनजयी=शोणितपुरमें बाणासुरके पक्षमें युद्धके लिये आये हुए स्वामिकार्तिकेयको भी परास्त करनेवाले, ४३६. शिवसैन्यविनाशनः=भगवान् शिवकी सेनाको मार भगानेवाले, ४३७. बाणासुरभुजच्छेत्ता=बाणासुरकी भुजाओंको काटनेवाले, ४३८. बाणबाहुवरप्रदः=बाणासुरको चार भुजाओंसे युक्त रहनेका वर देनेवाले।

४३९. ताक्ष्यर्मानापहारी=गरुड़का अभिमान चूर्ण करनेवाले, ४४०. ताक्ष्यतेजोविवर्धनः=गरुड़के तेजको बढ़ानेवाले, ४४१. रामस्वरूपधारी=श्रीरामका स्वरूप धारण करनेवाले, ४४२. सत्यभामामुदावहः=सत्यभामाको आनन्द देनेवाले।

४४३. रत्नाकरजलक्रीडः=समुद्रके जलमें क्रीड़ा करनेवाले, ४४४. व्रजलीलाप्रदर्शकः=अधिकारी भक्तोंको व्रजलीलाका दर्शन करानेवाले,

४४५. स्वप्रतिज्ञापरिष्वंसी=भीष्मजीकी प्रतिज्ञा रखनेके लिये अपनी प्रतिज्ञा तोड़ देनेवाले, ४४६. भीष्मज्ञापरिपालकः=भीष्मकी आज्ञाका पालन करनेवाले।

४४७. वीरायुधहरः=वीरोंके अस्त्र-शस्त्र हर लेनेवाले, ४४८. कालः=कालस्वरूप, ४४९. कालि-केशः=कालिकाके स्वामी, ४५०. महावलः=महाशक्तिसम्पन्न, ४५१. बर्बरीकशिरोहारी=बर्बरीकका सिर काटनेवाले, ४५२. बर्बरीकशिरप्रदः=बर्बरीकका सिर देनेवाले।

४५३. धर्मपुत्रजयी=धर्मपुत्र युधिष्ठिरको जय दिलानेवाले, ४५४. शूरदुर्योधनमदान्तकः=शूरवीर दुर्योधनके मदका नाश करनेवाले, ४५५. गोपिकाप्रीतिनिर्बन्धनित्यक्रीडः=गोपाङ्गनाओंके प्रेमपूर्ण आग्रहसे वृन्दावनमें नित्य लीला करनेवाले, ४५६. ब्रजेश्वरः=ब्रजके स्वामी।

४५७. राधाकुण्डरतिः=राधाकुण्डमें खेल करनेवाले, ४५८. धन्यः=धन्यवादके योग्य, ४५९. सदान्दोलसमाश्रितः=सदा झूलेपर झूलनेवाले, ४६०. सदामधुवनानन्दी=सदा मधुवनमें आनन्द लेनेवाले, ४६१. सदावृन्दावनप्रियः=वृन्दावनके शाश्वत प्रेमी।

४६२. अशोकवनसन्नद्धः=अशोकवनमें लीलाके लिये सदा प्रस्तुत, ४६३. सदातिलकसङ्गतः=सदैव तिलक लगानेवाले, ४६४. सदागोवर्धनरतिः=गिरिराज गोवर्धनपर सदा क्रीड़ा करनेवाले, ४६५. सदागोकुलवल्लभः=सदैव गोकुल ग्राम एवं गो-समुदायके प्रिय।

४६६. भाण्डीरवटसंवासी=भाण्डीर वटके नीचे निवास करनेवाले, ४६७. नित्यं वंशीवटस्थितः=वंशीवटपर सदा स्थित रहनेवाले, ४६८. नन्दग्रामकृतावासः=नन्दगाँवमें निवास करनेवाले, ४६९. वृषभानुगृहप्रियः=वृषभानुजीके गृहको प्रिय माननेवाले।

४७०. गृहीतकामिनीरूपः=मोहिनीका रूप धारण करनेवाले, ४७१. नित्यं रासविलासकृत्=नित्य रासलीला करनेवाले, ४७२. वल्लवीजनसंगोमा=गोपाङ्गनाओंके रक्षक, ४७३. वल्लवीजनवल्लभः=

गोपीजनोंके प्रियतम।

४७४. देवशर्मकृपाकर्ता=देवशर्मापर कृपा करनेवाले, ४७५. कल्पपादपरसंस्थितः=कल्पवृक्षके नीचे रहनेवाले, ४७६. शिलानुगन्धनिलियः=शिलामय सुगन्धित भवनमें निवास करनेवाले, ४७७. पादचारी=पैदल चलनेवाले, ४७८. घनच्छविः=मेघके समान श्यामकान्तिवाले।

४७९. अतसीकुसुमप्रख्यः=तीसीके फूलके-से वर्णवाले, ४८०. सदा लक्ष्मीकृपाकरः=लक्ष्मीजीपर सदा कृपा करनेवाले, ४८१. त्रिपुरारिप्रियकरः=महादेवजीका प्रिय करनेवाले, ४८२. उग्रथन्वा=भयङ्कर धनुषवाले, ४८३. अपराजितः=किसीसे भी परास्त न होनेवाले।

४८४. षड्धुरध्वंसकर्ता=षड्धुरका नाश करनेवाले, ४८५. निकुम्भप्राणहारकः=निकुम्भके प्राणोंको हरनेवाले, ४८६. वज्रनाभपुरध्वंसी=वज्रनाभपुरका ध्वंस करनेवाले, ४८७. पौण्ड्रकप्राणहारकः=पौण्ड्रकके प्राणोंका अन्त करनेवाले।

४८८. बहुलाश्वप्रीतिकर्ता=मिथिलाके राजा बहुलाश्वपर प्रेम करनेवाले, ४८९. द्विजवर्यप्रियङ्कः=श्रेष्ठ ब्राह्मण भक्तशिरोमणि श्रुतदेवका प्रिय करनेवाले, ४९०. शिवसंकटहारी=भगवान् शिवका संकट टालनेवाले, ४९१. वृकासुरविनाशनः=वृकासुरका नाश करनेवाले।

४९२. भृगुसत्कारकारी=भृगुजीका सत्कार करनेवाले, ४९३. शिवसात्त्विकताप्रदः=भगवान् शिवको सात्त्विकता देनेवाले, ४९४. गोकर्णपूजकः=गोकर्णकी पूजा करनेवाले, ४९५. साम्बकुष्ठविद्यंस-कारणः=साम्बकी कोढ़का नाश करनेवाले।

४९६. वेदस्तुतः=वेदोंके द्वारा स्तुत, ४९७. वेदवेत्ता=वेदज्ञ, ४९८. यदुवंशावर्धनः=यदुकुलको बढ़ानेवाले, ४९९. यदुवंशविनाशी=यदुकुलका संहार करनेवाले, ५००. उद्धवोद्धारकारकः=उद्धवका उद्धार करनेवाले।

५०१. राधा=श्रीकृष्णकी आराध्या देवी, उन्हींकी आहादिनी शक्ति, ५०२. राधिका=श्रीकृष्णकी आराधना करनेवाली वृषभानुपुत्री, ५०३. आनन्दा=आनन्दस्वरूपा, ५०४. वृषभानुजा=वृषभानुगोपकी कन्या, ५०५. वृन्दावनेश्वरी=वृन्दावनकी स्वामिनी, ५०६. पुण्या=पुण्यमयी, ५०७. कृष्णमानसहारिणी= श्रीकृष्णका चित्त चुरानेवाली।

५०८.प्रगल्भा=प्रतिभा, साहस, निर्भयता और उदार बुद्धिसे सम्पन्न, ५०९. चतुरा=चतुराईसे युक्त, ५१०. कामा=प्रेमस्वरूपा, ५११. कामिनी=एकमात्र श्रीकृष्णको चाहनेवाली, ५१२. हरिमोहिनी=श्रीकृष्णको मोहित करनेवाली, ५१३.ललिता=मनोहर सौन्दर्यसे सुशोभित, ५१४.मधुरा=माधुर्यभावसे युक्त, ५१५.माध्वी=मधुमयी, ५१६. किशोरी= नित्यकिशोरावस्थासे युक्त, ५१७.कनकप्रभा:=सुवर्णके समान कान्तिवाली।

५१८. जितचन्द्रा=मुखके सौन्दर्यसे चन्द्रमाको भी परास्त करनेवाली, ५१९. जितमृगा=चञ्चल चकित नेत्रोंकी शोभासे मृगको भी मात करनेवाली, ५२०. जितसिंहा=सूक्ष्म कटि-भागकी कमनीयतासे मृगराज सिंहके भी मदको चूर्ण करनेवाली, ५२१. जितद्विपा=मन्द-मन्द गतिसे गजेन्द्रका भी गर्व खर्व करनेवाली, ५२२. जितरम्भा=ऊरुओंकी स्निग्धतासे कदलीको भी तिरस्कृत करनेवाली, ५२३. जितपिका=अपने मधुर कण्ठस्वरसे कोयलको भी तिरस्कृत करनेवाली, ५२४. गोविन्दहृदयोद्धवा=श्रीकृष्णके हृदयसे प्रकट हुई।

५२५. जितविष्वा=अपने अधरकी अरुणिमासे विष्वफलको भी तिरस्कृत करनेवाली, ५२६. जितशुका= नुकीली नासिकाकी शोभासे तोतेको भी लजा देनेवाली, ५२७. जितपद्मा=अपने अनिर्वचनीय रूप-लावण्यसे लक्ष्मीको भी लजित

करनेवाली, ५२८. कुमारिका=नित्य कुमारी, ५२९. श्रीकृष्णाकर्षणा=श्रीकृष्णको अपनी ओर खींचनेवाली, ५३०. देवी=दिव्यस्वरूपा, ५३१. नित्ययुग्मस्वरूपिणी=नित्य युगलरूपा।

५३२. नित्यं विहारिणी=श्यामसुन्दरके साथ नित्य लीला करनेवाली, ५३३. कान्ता=नन्दनन्दनकी प्रियतमा, ५३४. रसिका=प्रेमरसका आस्वादन करनेवाली, ५३५. कृष्णवल्लभा=श्रीकृष्णप्रिया, ५३६. आमोदिनी=श्रीकृष्णको आमोद प्रदान करनेवाली, ५३७. मोदवती=मोदमयी, ५३८. नन्दनन्दनभूषिता=नन्दनन्दन श्रीकृष्णके द्वारा जिनका शृङ्गार किया गया है।

५३९. दिव्याम्बरा=दिव्य वस्त्र धारण करनेवाली, ५४०. दिव्यहारा=दिव्य हार धारण करनेवाली, ५४१. मुक्तामणिविभूषिता=दिव्य मुक्तामणियोंसे विभूषित, ५४२. कुञ्जप्रिया=वृन्दावनके कुञ्जोंसे प्यार करनेवाली, ५४३. कुञ्जवासा=कुञ्जमें निवास करनेवाली, ५४४. कुञ्जनायकनायिका= कुञ्जनायक श्रीकृष्णकी नायिका।

५४५.चारुरूपा=मनोहर रूपवाली, ५४६. चारुवक्त्रा=परम सुन्दर मुखवाली, ५४७. चारुहेमाङ्गदा= सुन्दर सुवर्णके भुजबंद धारण करनेवाली, ५४८. शुभा=शुभस्वरूपा, ५४९. श्रीकृष्णवेणुसङ्गीता= श्रीकृष्णद्वारा मुरलीमें जिनके नाम और यशका गान किया जाता है, ५५०. मुरलीहारिणी=विनोदके लिये श्रीकृष्णकी मुरलीका हरण करनेवाली, ५५१. शिवा=कल्याणस्वरूप।

५५२. भद्रा=मङ्गलमयी, ५५३. भगवती=षड्विध ऐश्वर्यसे सम्पन्न, ५५४. शान्ता=शान्तिमयी, ५५५. कुमुदा=पृथ्वीपर आनन्दोल्लास वितीर्ण करनेवाली, ५५६. सुन्दरी=अनन्त सौन्दर्यकी निधि, ५५७. प्रिया=सखियों तथा श्यामसुन्दरको अत्यन्त

प्रिय, ५५८. कृष्णक्रीडा=श्रीकृष्णके साथ लीला करनेवाली, ५५९. कृष्णरति=श्रीकृष्णके प्रति प्रगाढ़ प्रेमवाली, ५६०. श्रीकृष्णसहचारिणी=वृन्दावनमें श्रीकृष्णके साथ विचरनेवाली।

५६१. वंशीवटप्रियस्थाना=वंशीवट जिनका प्रिय स्थान है, ५६२. युग्मायुग्मस्वरूपिणी=युगलरूपा और एक रूपा, ५६३. भाण्डीरवासिनी=भाण्डीर वनमें निवास करनेवाली, ५६४. शुभ्रा=गौरवर्णा, ५६५. गोपीनाथप्रिया=गोपीवल्लभ श्रीकृष्णकी प्रियतमा, ५६६. सखी=श्रीकृष्णकी सखी।

५६७. श्रुतिनिःश्रसितः=श्रुतियाँ जिनके निःश्वाससे प्रकट होती हैं, ५६८. दिव्या=दिव्यस्वरूपा, ५६९. गोविन्दरसदायिनी=गोविन्दको माधुर्यरस प्रदान करनेवाली, ५७०. श्रीकृष्णप्रार्थिणी=केवल श्रीकृष्णको चाहनेवाली, ५७१. ईशाना=ईश्वरी, ५७२. महानन्दप्रदायिनी=परमानन्द प्रदान करनेवाली।

५७३. वैकुण्ठजनसंसेव्या=वैकुण्ठवासियोंद्वारा सेवन करने योग्य, ५७४. कोटिलक्ष्मीसुखावहा=कोटि-कोटि लक्ष्मीसे भी अधिक सुख देनेवाली, ५७५. कोटिकन्दर्पलावण्या=करोड़ों कामदेवोंसे अधिक रूपलावण्यसे सम्पन्न, ५७६. रतिकोटिरतिप्रदा=करोड़ों रतियोंसे भी अधिक प्रगाढ़ प्रीतिरस प्रदान करनेवाली।

५७७. भक्तिग्राहा=भक्तिसे प्राप्त होने योग्य, ५७८. भक्तिरूपा=भक्तिस्वरूपा, ५७९. लावण्यसरसी=सौन्दर्यकी पुष्करिणी, ५८०. उमा=योगमाया एवं ब्रह्मविद्यास्वरूपा, ५८१. ब्रह्मरुद्रादिसंराध्या=ब्रह्मा तथा रुद्रादिके द्वारा आराधना करने योग्य, ५८२. नित्यं कौतूहलान्विता=नित्य कौतुकयुक्त।

५८३. नित्यलीला=नित्य लीलापरायणा, ५८४. नित्यकामा=नित्य श्रीकृष्ण-मिलनको

चाहनेवाली, ५८५. नित्यशृङ्खरभूषिता=नित्य नूतन शृङ्खरसे विभूषित, ५८६. नित्यवृन्दावनरसा=वृन्दावनके माधुर्यरसका सदा आस्वादन करनेवाली, ५८७. नन्दनन्दनसंयुता=नन्दनन्दन श्रीकृष्णके साथ रहनेवाली।

५८८. गोपिकामण्डलीयुक्ता=गोपियोंकी मण्डलीसे धिरी हुई, ५८९. नित्यं गोपालसङ्गता=सदा गोपाल श्रीकृष्णसे मिलनेवाली, ५९०. गोरसक्षेपिणी=गोरस फेंकने या लुटानेवाली, ५९१. शूरा=शौर्यसम्पन्न, ५९२. सानन्दा=आनन्दयुक्त, ५९३. आनन्ददायिनी=आनन्द देनेवाली।

५९४. महालीलाप्रकृष्टा=श्रीकृष्णकी महालीलाकी सर्वश्रेष्ठ पात्र, ५९५. नागरी=परम चतुरा, ५९६. नगचारिणी=गिरिराज गोवर्धनपर विचरनेवाली, ५९७. नित्यमाघूर्णिता=श्रीकृष्णकी खोजमें नित्य घूमनेवाली, ५९८. पूर्णा=समस्त सद्गुणोंसे परिपूर्ण, ५९९. कस्तूरीतिलकान्विता=कस्तूरीकी बेंदीसे सुशोभित।

६००. पद्मा=लक्ष्मीस्वरूपा, ६०१. श्यामा=सौन्दर्यसे सम्पन्न, ६०२. मृगाक्षी=मृगके समान विशाल एवं चञ्चल नेत्रोंवाली, ६०३. सिद्धिरूपा=सिद्धिस्वरूपा, ६०४. रसावहा=श्रीकृष्णको माधुर्यरसका आस्वादन करानेवाली, ६०५. कोटिचन्द्रानना=करोड़ों चन्द्रमाओंके समान सुन्दर मुखवाली, ६०६. गौरी=गौरवर्णा, ६०७. कोटिकोकिलसुस्वरा=करोड़ों कोकिलोंके समान मधुर स्वरवाली।

६०८. शीलसौन्दर्यनिलया=उत्तम शील तथा अनन्त सौन्दर्यकी आधारभूता, ६०९. नन्दनन्दनलालिता=नन्दनन्दन श्रीकृष्णसे दुलार पानेवाली, ६१०. अशोकवनसंवासा=अशोकवनमें निवास करनेवाली, ६११. भाण्डीरवनसङ्गता=भाण्डीरवनमें मिलनेवाली।

६१२. कल्पद्रुमतलाविष्णा=कल्पवृक्षके नीचे बैठी हुई, ६१३. कृष्णा=कृष्णस्वरूपा, ६१४. विश्वा=विश्वस्वरूपा, ६१५. हरिप्रिया=श्रीकृष्णकी प्रेयसी, ६१६. अजागम्या=ब्रह्माजीके लिये अगम्य, ६१७. भवागम्या=महादेवजीके लिये अगम्य, ६१८. गोवर्धनकृतालया=गोवर्धन पर्वतपर निवास करनेवाली।

६१९. यमुनातीरनिलया=यमुनातटपर रहनेवाली, ६२०. शश्वद्गोविन्दजल्पिनी=सदा श्रीकृष्ण गोविन्दकी रट लगानेवाली, ६२१. शश्वम्नानवती=नित्य मानिनी, ६२२. स्त्रिगंधा=स्त्रेहमयी, ६२३. श्रीकृष्णपरिवन्दिता= श्रीकृष्णके द्वारा नित्य वन्दित।

६२४. कृष्णस्तुता=श्रीकृष्णके द्वारा जिनका गुणगान किया गया है, ६२५. कृष्णव्रता=श्रीकृष्णपरायणा, ६२६. श्रीकृष्णहृदयालया=श्रीकृष्णके हृदयमें निवास करनेवाली, ६२७. देवद्रुपफला= कल्पवृक्षके समान मनोवाञ्छित फल देनेवाली, ६२८. सेव्या=सेवन करने योग्य, ६२९. वृन्दावनरसालया=वृन्दावनके रसमें निमग्न रहनेवाली।

६३०. कोटितीर्थमयी=कोटितीर्थस्वरूपा, ६३१. सत्या= सत्यस्वरूपा, ६३२. कोटितीर्थफलप्रदा= करोड़ों तीर्थोंका फल देनेवाली, ६३३. कोटियोग-सुदुष्ट्राप्या=करोड़ों योगसाधनोंसे भी दुर्लभ, ६३४. कोटियज्ञदुराश्रया=कोटि यज्ञोंसे भी जिनकी शरणागति प्राप्त होनी कठिन है।

६३५. मनसा=मनसा नामसे प्रसिद्ध, ६३६. शशिलेखा=श्रीकृष्णरूपी चन्द्रमाकी कला, ६३७. श्रीकोटिसुभगा=कोटि लक्ष्मीके समान सौभाग्यवती, ६३८. अनधा=पापशून्य, ६३९. कोटिमुक्तसुखा=करोड़ों मुक्तात्माओंके समान सुखी, ६४०. सौम्या=सौम्यस्वरूपा, ६४१. लक्ष्मीकोटिविलासिनी=करोड़ों लक्ष्मयोंके समान विलासवती।

६४२. तिलोत्तमा=ठोढ़ीमें तिलके आकारकी बेंदी या चिह्न होनेके कारण अतिशय उत्तम सौन्दर्ययुक्त, ६४३. त्रिकालस्था=भूत, भविष्य, वर्तमान—तीनों कालोंमें विद्यमान, ६४४. त्रिकालज्ञा=तीनों कालोंकी घटनाओंको जाननेवाली, ६४५. अधीश्वरी= स्वामिनी, ६४६. त्रिवेदज्ञा=तीनों वेदोंको जाननेवाली, ६४७. त्रिलोकज्ञा=तीनों लोकोंको जाननेवाली, ६४८. तुरीयान्तनिवासिनी=जाग्रत् से लेकर तुरीयापर्यन्त सब अवस्थाओंमें निवास करनेवाली।

६४९. दुर्गाराध्या=उमाके द्वारा आराध्य, ६५०. रमाराध्या=लक्ष्मीकी आराध्य देवी, ६५१. विश्वाराध्या=सम्पूर्ण जगत् के लिये आराधनीया, ६५२. चिदात्मिका=चेतनस्वरूपा, ६५३. देवाराध्या=देवताओंकी आराध्य देवी, ६५४. पराराध्या=परम आराध्य देवी, ६५५. ब्रह्माराध्या=ब्रह्माजीके द्वारा उपास्य, ६५६. परात्मिका=परमात्मस्वरूपा।

६५७. शिवाराध्या=भगवान् शिवके लिये आराध्य, ६५८. प्रेमसाध्या=प्रेमसे प्राप्त होने योग्य, ६५९. भक्ताराध्या=भक्तोंकी उपास्य देवी, ६६०. रसात्मिका=रसस्वरूपा, ६६१. कृष्णप्राणार्पिणी=श्रीकृष्णको जीवन देनेवाली, ६६२. भामा=मानिनी, ६६३. शुद्धप्रेमविलासिनी=विशुद्ध प्रेमसे सुशोभित होनेवाली।

६६४. कृष्णाराध्या=श्रीकृष्णकी आराध्य देवी, ६६५. भक्तिसाध्या=अनन्य भक्तिसे प्राप्त होनेवाली, ६६६. भक्तवृन्दनिषेविता=भक्त—समुदायसे सेविता, ६६७. विश्वाधारा=सम्पूर्ण जगत् को आश्रय देनेवाली, ६६८. कृपाधारा=कृपाकी आधारभूमि, ६६९. जीवाधारा= सम्पूर्ण जीवोंको आश्रय देनेवाली, ६७०. अतिनायिका= सम्पूर्ण नायिकाओंसे उत्कृष्ट।

६७१. शुद्धप्रेममयी=विशुद्ध अनुरागस्वरूपा, ६७२. लज्जा= मूर्तिमती लज्जा, ६७३. नित्यसिद्धा=

सदा, बिना किसी साधनके, स्वतःसिद्ध, ६७४. शिरोमणि:=गोपाङ्गनाओंकी शिरोमणि, ६७५. दिव्यरूपा=दिव्य रूपवाली, ६७६. दिव्यभोगा=दिव्यभोगोंसे सम्पन्न, ६७७. दिव्यवेषा=अलौकिक वेशभूषाओंसे सुशोभित, ६७८. मुदान्विता=सदा आनन्दमग्न रहनेवाली ।

६७९. दिव्याङ्गनावृन्दसारा=दिव्य युवतियोंके समुदायकी सार-सर्वस्वरूपा, ६८०. नित्यनूतनयौवना=नित्य नवीन यौवनसे युक्त, ६८१. परब्रह्मावृता=परब्रह्म परमात्मासे आवृत, ६८२. ध्येया=ध्यान करने योग्य, ६८३. महारूपा=परम सुन्दर रूपवाली, ६८४. महोज्ज्वला=परमोज्ज्वल प्रकाशमयी ।

६८५. कोटिसूर्यप्रभा=करोड़ों सूर्योंकी प्रभासे उद्घासित, ६८६. कोटिचन्द्रविम्बाधिकच्छवि:=कोटि चन्द्रमण्डलसे अधिक छविवाली, ६८७. कोमलामृतवाक्=कोमल एवं अमृतके समान मधुर वचनवाली, ६८८. आद्या=आदिदेवी, ६८९. वेदाद्या= वेदोंकी आदिकारणस्वरूपा, ६९०. वेददुर्लभा=वेदोंकी भी पहुँचसे परे ।

६९१. कृष्णासक्ता=श्रीकृष्णमें अनुरक्त, ६९२. कृष्णभक्ता=श्रीकृष्णके प्रति भक्तिभावसे परिपूर्ण, ६९३. चन्द्रावलिनिषेविता=चन्द्रावली नामकी सखीसे सेवित, ६९४. कलाषोडशसम्पूर्णा=सोलह कलाओंसे पूर्ण, ६९५. कृष्णदेहार्थधारिणी=अपने आधे शरीरमें श्रीकृष्णके स्वरूपको धारण करनेवाली ।

६९६. कृष्णबुद्धिः=श्रीकृष्णमें बुद्धिको अर्पित कर देनेवाली, ६९७. कृष्णसारा=श्रीकृष्णको ही जीवनका सारसर्वस्व माननेवाली, ६९८. कृष्ण-रूपविहारिणी=श्रीकृष्णरूपसे विचरनेवाली, ६९९. कृष्णकान्ता=श्रीकृष्णप्रिया, ७००. कृष्णधना=श्रीकृष्णको ही अपना परम धन माननेवाली, ७०१. कृष्णमोहनकारिणी=अपने अनुपम प्रेमसे श्रीकृष्णको मोहित करनेवाली ।

७०२. कृष्णदृष्टिः=एकमात्र श्रीकृष्णपर ही दृष्टि रखनेवाली, ७०३. कृष्णगोत्रा=श्रीकृष्णके गोत्रवाली, ७०४. कृष्णदेवी=श्रीकृष्णकी आराध्यदेवी, ७०५. कुलोद्धाहा= कुलमें सर्वश्रेष्ठ, ७०६. सर्वभूत-स्थितात्मा=सम्पूर्ण भूतोंमें विद्यमान आत्मस्वरूपा, ७०७. सर्वलोकनमस्कृता=सम्पूर्ण लोकोंद्वारा अभिवन्दित ।

७०८. कृष्णदात्री=उपासकोंको श्रीकृष्णकी प्राप्ति करनेवाली, ७०९. प्रेमधात्री=भावुकोंके हृदयमें श्रीकृष्णप्रेमको प्रकट करनेवाली, ७१०. स्वर्णगात्री= सुवर्णके समान गौर शरीरवाली, ७११. मनोरमा=श्रीकृष्णके मनको रमानेवाली, ७१२. नगधात्री=पर्वतोंके अधिष्ठातृ देवताको उत्पन्न करनेवाली, ७१३. यशोदात्री=यश देनेवाली, ७१४. महादेवी=सर्वश्रेष्ठ देवी, ७१५. शुभङ्करी=कल्याण करनेवाली ।

७१६. श्रीशेषदेवजननी=लक्ष्मीजी, शेषजी और देवताओंको उत्पन्न करनेवाली, ७१७. अवतारगणप्रसूः=अवतारगणोंको उत्पन्न करनेवाली, ७१८. उत्पलाङ्का=हाथ-पैरोंमें नील कमलके चिह्न धारण करनेवाली, ७१९. अरविन्दाङ्का=कमलके चिह्नसे युक्त, ७२०. प्रासादाङ्का=मन्दिरके चिह्नसे युक्त, ७२१. अद्वितीयका=जिसके समान दूसरी कोई नहीं है ऐसी ।

७२२. रथाङ्का=रथके चिह्नसे युक्त, ७२३. कुञ्चराङ्का=हाथीके चिह्नसे युक्त, ७२४. कुण्डलाङ्कपदस्थिता=चरणोंमें कुण्डलके चिह्नसे युक्त, ७२५. छत्राङ्का=छत्रके चिह्नसे युक्त, ७२६. विद्युदङ्का=वज्रके चिह्नसे युक्त, ७२७. पुष्पमालाङ्किता= पुष्पमालाके चिह्नसे युक्त ।

७२८. दण्डाङ्का=दण्डके चिह्नसे युक्त, ७२९. मुकुटाङ्का=मुकुटके चिह्नसे युक्त, ७३०. पूर्णचन्द्रा=पूर्णचन्द्रके सदृश शोभासम्पन्न,

७३१. शुकाङ्किता=शुकके चिह्नसे युक्त,
७३२. कृष्णान्नाहारपाका=श्रीकृष्णको भोजन
करानेके लिये भाँति-भाँतिकी रसोई तैयार
करनेवाली, ७३३. वृन्दाकुञ्जविहारिणी=वृन्दावनके
कुञ्जमें विचरनेवाली।

७३४. कृष्णप्रबोधनकरी=कृष्णको शयनसे
जगानेवाली, ७३५. कृष्णशेषान्नभोजिनी=श्रीकृष्णके
आरोगनेसे बचे हुए प्रसादरूप अन्नको ग्रहण
करनेवाली, ७३६. पद्मकेसरमध्यस्था=कमलकेसरोंके
मध्यमें विराजमान, ७३७. सङ्गीतागमवेदिनी=
सङ्गीतशास्त्रको जाननेवाली।

७३८. कोटिकल्पान्तभूभद्वा=अपने भ्रूभङ्गमात्रसे
करोड़ों कल्पोंका अन्त करनेवाली, ७३९. अप्राप्तप्रलया=कभी प्रलयको प्राप्त न होनेवाली,
७४०. अच्युता=अपनी महिमासे कभी विचलित
न होनेवाली, ७४१. सर्वसत्त्वनिधि=पूर्ण सत्त्वगुणकी
निधि, ७४२. पद्मशङ्खादिनिधिसेविता=पद्म-शङ्ख
आदि निधियोंसे सेवित।

७४३. अणिमादिगुणैश्वर्या=अणिमा आदि
अष्टविध गुणोंके ऐश्वर्योंसे युक्त, ७४४.
देववृन्दविमोहिनी= देवसमुदायको मोहित करनेवाली,
७४५. सर्वानन्दप्रदा=सबको आनन्द देनेवाली,
७४६. सर्वा=सर्वस्वरूपा, ७४७. सुवर्णलतिकाकृतिः=
स्वर्णमयी लताके समान आकृतिवाली।

७४८. कृष्णाभिसारसंकेता=श्रीकृष्णसे मिलनेके
लिये संकेतस्थानमें स्थित, ७४९. मालिनी=मालासे
अलंकृत, ७५०. नृत्यपणिडता=नृत्यकलाकी विदुषी,
७५१. गोपीसिन्धुसकाशाप्या = गोपीसमुदायरूपी
सिन्धुमें प्राप्त होनेवाली, ७५२. गोपमण्डपशोभिनी=
वृषभानुगोपके मण्डपमें शोभा पानेवाली।

७५३. श्रीकृष्णप्रीतिदा=श्रीकृष्णके प्रेमको
प्रदान करनेवाली, ७५४. भीता=श्रीकृष्णके वियोगके
भयसे भीत, ७५५. प्रत्यङ्गपुलकाङ्क्षिता=प्रत्येक
अङ्गमें श्रीकृष्ण-प्रेमजनित रोमाञ्चसे युक्त,

७५६. श्रीकृष्णालिङ्गनरता=श्रीकृष्णका स्पर्श करनेमें
तत्पर, ७५७. गोविन्दविरहाक्षमा=श्रीकृष्णका वियोग
सहन करनेमें असमर्थ।

७५८. अनन्तगुणसम्पन्ना=अनन्त गुणोंसे
युक्त, ७५९. कृष्णकीर्तनलालसा=श्रीकृष्णके
नाम और गुणोंके कीर्तन करनेकी रुचिवाली,
७६०. बीजत्रयमयीमूर्तिः=श्रीं, ह्रीं, क्लीं—इन
तीन बीजोंसे संयुक्तरूपवाली, ७६१. कृष्णानुग्रहवाङ्गी=
श्रीकृष्णके अनुग्रहको चाहनेवाली।

७६२. विमलादिनिषेद्या=विमला, उत्कर्षिणी
आदि सखियोंद्वारा सेव्य, ७६३. ललिताद्यर्थिता=
ललिता आदि सखियोंसे पूजित, ७६४. सती=
उत्तम शील और सदाचारसे सम्पन्न, ७६५.
पद्मवृन्दस्थिता= कमलवनमें निवास करनेवाली,
७६६. हृष्णा=हर्षसे युक्त, ७६७. त्रिपुरापरिसेविता=
त्रिपुरसुन्दरीके द्वारा सेवित।

७६८. वृन्दावत्यर्थिता=वृन्दावती देवीके द्वारा
पूजित, ७६९. श्रद्धा=श्रद्धास्वरूपा, ७७०. दुर्जेया=
बुद्धिकी पहुँचसे परे, ७७१. भक्तवल्लभा=भक्तप्रिया,
७७२. दुर्लभा=दुष्प्राप्य, ७७३. सान्द्रसौख्यात्मा=
घनीभूत सुखस्वरूपा, ७७४. श्रेयोहेतुः=कल्याणकी
प्राप्तिमें हेतु, ७७५. सुभोगदा=मुक्तिप्रद भोग देनेवाली।

७७६. सारङ्गा=श्रीकृष्णप्रेमकी प्यासी
चातकी, ७७७. शारदा=सरस्वतीस्वरूपा,
७७८. बोधा=ज्ञानमयी, ७७९. सदवृन्दावनचारिणी=
सुन्दर वृन्दावनमें विचरनेवाली, ७८०. ब्रह्मानन्दा=
ब्रह्मानन्दस्वरूपा, ७८१. चिदानन्दा=चिदानन्दमयी,
७८२. ध्यानानन्दा= श्रीकृष्ण-ध्यानजनित आनन्दमें
मग्र, ७८३. अर्धमात्रिका= अर्धमात्रास्वरूपा।

७८४. गन्धर्वा=गानविद्यामें प्रवीण, ७८५. सुरतङ्गा=
सुरतकलाको जानेवाली, ७८६. गोविन्दप्राणसङ्क्रमा=
गोविन्दके साथ एक प्राण होकर रहनेवाली,
७८७. कृष्णाङ्गभूषणा=श्रीकृष्णके अङ्गोंको विभूषित
करनेवाली, ७८८. रत्नभूषणा=रत्नमय आभूषण

धारण करनेवाली, ७८९. स्वर्णभूषिता= सोनेके आभूषणोंसे विभूषित।

७९०. श्रीकृष्णहृदयावासा=श्रीकृष्णके हृदय-मन्दिरमें निवास करनेवाली, ७९१. मुक्ताकनकनासिका=नासिकामें मुक्तायुक्त सुवर्णके आभूषण धारण करनेवाली, ७९२. सद्रलकङ्कणयुता=हाथोंमें सुन्दर रलजटित कंगन पहननेवाली, ७९३. श्रीमन्नीलगिरिस्थिता=शोभाशाली नीलाचलपर विराजमान।

७९४. स्वर्णनूपुरसम्पन्ना=सोनेके नूपुरोंसे सुशोभित, ७९५. स्वर्णकिङ्गिणिमण्डिता=सुवर्णकी किङ्गिणी (करधनी)-से अलंकृत, ७९६. अशेषरासकुतुका=महाराजके लिये उत्कण्ठित रहनेवाली, ७९७. रम्भोरुः=केलेके समान जंघावाली, ७९८. तनुमध्यमा=क्षीण कटिवाली।

७९९. पराकृतिः=सर्वोत्कृष्ट आकृतिवाली, ८००. परानन्दा= परमानन्दस्वरूपा, ८०१. परस्वर्ग-विहारिणी=स्वर्गसे भी परे गोलोक धाममें विहार करनेवाली, ८०२. प्रसूनकबरी=वेणीमें फूलोंके हार गूँथनेवाली, ८०३. चित्रा=विचित्र शोभामयी, ८०४. महासिन्दूरसुन्दरी=उत्तम सिन्दूरसे अति सुन्दर प्रतीत होनेवाली।

८०५. कैशोरवयसा=किशोरावस्थासे युक्त, ८०६. बाला=मुराधा, ८०७. प्रमदाकुलशेखरा=रमणीकुलशिरोमणि, ८०८. कृष्णधरासुधास्वादा=श्रीकृष्णनामरूपी सुधाका अधरोंके द्वारा नित्य आस्वादन करनेवाली, ८०९. श्यामप्रेमविनोदिनी=श्रीकृष्णप्रेमसे ही मनोरञ्जन करनेवाली।

८१०. शिखिपिच्छलसच्चूडा=मयूर-पंखसे सुशोभित केशोंवाली, ८११. स्वर्णचम्पकभूषिता=स्वर्णचम्पाके आभूषणोंसे विभूषित, ८१२. कुङ्कमालककस्तुरीमण्डिता=रोली, महावर और कस्तुरीके शृङ्गारसे सुशोभित, ८१३. अपराजिता=कभी परास्त न होनेवाली।

८१४. हेमहारान्विता=सुवर्णके हारसे अलंकृत, ८१५. पुष्पहाराढ्या=पुष्पमालासे मण्डित, ८१६. रसवती=प्रेमरसमयी, ८१७. माधुर्यमधुरा=माधुर्य भावके कारण मधुर, ८१८. पद्मा=पद्मानामसे प्रसिद्ध, ८१९. पद्महस्ता=हाथमें कमल धारण करनेवाली, ८२०. सुविश्रुता=अति विख्यात।

८२१. भूभङ्गभङ्गकोदण्डकटाक्षसरसन्धिनी=श्रीकृष्णके प्रति तिरछी भौंहरूपी सुदृढ़ धनुषपर कटाक्षरूपी बाणोंका संधान करनेवाली, ८२२. शेषदेवशिरःस्था=शेषजीके मस्तकपर पृथ्वीके रूपमें स्थित, ८२३. नित्यस्थलविहारिणी=नित्य लीला-स्थलियोंमें विचरनेवाली।

८२४. कारुण्यजलमध्यस्था=करुणारूपी जलराशिके मध्य विराजमान, ८२५. नित्यमत्ता=सदा प्रेममें मतवाली, ८२६. अधिरोहिणी=उन्नतिकी साधनरूपा, ८२७. अष्टभाषावती=आठ भाषाओंको जाननेवाली, ८२८. अष्टनायिका=ललिता आदि आठ सखियोंकी स्वामिनी, ८२९. लक्षणान्विता=उत्तम लक्षणोंसे युक्त।

८३०. सुनीतिज्ञा=अच्छी नीतिको जाननेवाली, ८३१. श्रुतिज्ञा=श्रुतिको जाननेवाली, ८३२. सर्वज्ञा=सब कुछ जाननेवाली, ८३३. दुःखहारिणी=दुःखोंको हरण करनेवाली, ८३४. रजोगुणेश्वरी=रजोगुणकी स्वामिनी, ८३५. शरच्चन्द्रनिभानना=शरदत्रक्षुके चन्द्रमाकी भौंति मनोहर मुखवाली।

८३६. केतकीकुसुमाभासा=केतकीके पुष्पकी-सी आभावाली, ८३७. सदासिन्धुवनस्थिता=सदा सिन्धु-वनमें रहनेवाली, ८३८. हेमपुष्पाधिककरा=सुवर्ण-पुष्पसे अधिक कमनीय हाथवाली, ८३९. पञ्चशक्तिमयी=पञ्चविधशक्तिसे सम्पन्न, ८४०. हिता-हितकारिणी।

८४२. स्तनकुम्भी=कुम्भके समान स्तनवाली, ८४२. नराढ्या=पुरुषोत्तम श्रीकृष्णसे संयुक्त, ८४३. क्षीणापुण्या=पापरहित, ८४४. यशस्विनी-

कीर्तिमती, ८४५. वैराजसूर्यजननी=विराट् ब्रह्माण्डके प्रकाशक सूर्यको जन्म देनेवाली, ८४६. श्रीशा=लक्ष्मीकी भी स्वामिनी, ८४७. भुवनमोहिनी=सम्पूर्ण भुवनोंको मोहित करनेवाली।

८४८. महाशोभा=परम शोभाशालिनी, ८४९. महामाया=महामायास्वरूपा, ८५०. महाकान्ति:=अनन्त कान्तिसे सुशोभित, ८५१. महास्मृति:=महती स्मरणशक्तिस्वरूपा, ८५२. महामोहा=महामोहमयी, ८५३. महाविद्या=भगवत्प्राप्ति करानेवाली श्रेष्ठ विद्या, ८५४. महाकीर्ति:=विशाल कीर्तिवाली, ८५५. महारति:=अत्यन्तानुरागस्वरूपा।

८५६. महाधैर्या=अत्यन्त धीर स्वभाववाली, ८५७. महावीर्या=महान् पराक्रमसे सम्पन्न, ८५८. महाशक्ति:=महाशक्ति, ८५९. महाद्युतिः=परम-प्रकाशवती, ८६०. महागौरी=अत्यन्त गौर वर्णवाली, ८६१. महासम्पत्=परम सम्पत्तिरूपा, ८६२. महाभोगविलासिनी=महान् भोग-विलाससे युक्त।

८६३. समया=अत्यन्त निकटवर्तिनी, ८६४. भक्तिदा=भक्ति देनेवाली, ८६५. अशोका=शोकरहित, ८६६. वात्सल्यरसदायिनी=वात्सल्यरस देनेवाली, ८६७. सुहृदभक्तिप्रदा=सुहृद जनोंको भक्ति देनेवाली, ८६८. स्वच्छा=निर्मल, ८६९. माधुर्यरसवर्षिणी= माधुर्यरसकी वर्षा करनेवाली।

८७०. भावभक्तिप्रदा=भावभक्ति प्रदान करनेवाली, ८७१. शुद्धप्रेमभक्तिविधायिनी=शुद्ध प्रेमलक्षणा भक्तिका विधान करनेवाली, ८७२. गोपरामा=गोपकुलकी रमणी, ८७३. अभिरामा=सर्व-सुन्दरी, ८७४. क्रीडारामा=श्यामसुन्दरके साथ लीलामें रत रहनेवाली, ८७५. परेश्वरी=परमेश्वरी।

८७६. नित्यरामा=नित्य वस्तुमें रमण करनेवाली, ८७७. आत्मरामा=आत्मामें रमण करनेवाली,

८७८. कृष्णरामा=श्रीकृष्णके चिन्तनमें रमण करनेवाली, ८७९. रमेश्वरी=लक्ष्मीकी अधीश्वरी, ८८०. एकानेकजगद्व्याप्ता=एक होकर भी अनेक रूपसे जगत्में व्याप्त, ८८१. विश्वलीलाप्रकाशिनी=सम्पूर्ण विश्वके रूपमें बाह्यलीलाको प्रकाशित करनेवाली।

८८२. सरस्वतीशा=सरस्वतीकी स्वामिनी, ८८३. दुर्गेशा=दुर्गाकी स्वामिनी, ८८४. जगदीशा=जगत्की स्वामिनी, ८८५. जगद्विधिः=संसारको रचनेवाली, ८८६. विष्णुवंशनिवासा=वैष्णववंशमें निवास करनेवाली, ८८७. विष्णुवंशसमुद्भवा=वैष्णववंशमें प्रकट हुई।

८८८. विष्णुवंशस्तुता=वैष्णवकुलके द्वारा स्तुत, ८८९. कर्त्री=स्वतन्त्र कर्तृत्वशक्तिसे सम्पन्न, ८९०. सदाविष्णुवंशावनी=सदा वैष्णवकुलकी रक्षा करनेवाली, ८९१. आरामस्था=उपवनमें रहनेवाली, ८९२. वनस्था=वृन्दावनमें निवास करनेवाली, ८९३. सूर्यपुत्रवगाहिनी=यमुनामें स्थान करनेवाली।

८९४. प्रीतिस्था=प्रेममें निवास करनेवाली, ८९५. नित्ययन्त्रस्था=नित्य-यन्त्रमें स्थित रहनेवाली, ८९६. गोलोकस्था=गोलोकधाममें स्थित, ८९७. विभूतिदा=ऐश्वर्य देनेवाली, ८९८. स्वानुभूतिस्थिता= केवल अपनी अनुभूतिमें प्रकट होनेवाली, ८९९. अव्यक्ता=अव्यक्तस्वरूपा, ९००. सर्वलोकनिवासिनी=सम्पूर्ण लोकोंमें निवास करनेवाली।

९०१. अमृता=अमृतस्वरूपा, ९०२. अद्भुता=अद्भुत रूप और भावसे सम्पन्न, ९०३. श्रीमन्नारायणसमीरिता=लक्ष्मीसहित भगवान् नारायणके द्वारा स्तुत, ९०४. अक्षरा=अक्षरस्वरूपा, ९०५. कूटस्था=एकरस परमात्मस्वरूपा, ९०६. महापुरुषसम्भवा=महापुरुषोंको प्रकट करनेवाली। ९०७. औदार्यभावसाध्या=औदार्यपूर्ण भक्तिभावसे

प्राप्त होनेवाली, १०८. स्थूलसूक्ष्मातिरूपिणी= स्थूल-सूक्ष्मसे विलक्षण चिदानन्दमय स्वरूपवाली, १०९. शिरीषपुष्पमृदुला=सिरसके फूलोंसे भी अधिक कोमल, ११०. गाङ्गेयमुकुरप्रभा=गङ्गाजल एवं दर्पणके समान निर्मल कान्तिवाली।

१११. नीलोत्पलजिताक्षी=कजरारे नेत्रोंकी शोभासे नीलकमलको परास्त करनेवाली, ११२. सद्रत्कबरान्विता= सुन्दर रत्नोंसे अलंकृत चोटीवाली, ११३. प्रेमपर्यङ्कनिलया=प्रेमरूपी पर्यङ्कपर शयन करनेवाली, ११४. तेजोमण्डलमध्यगा= तेजपुञ्जके भीतर विराजमान।

११५. कृष्णाङ्गनोपनाभेदा=श्रीकृष्णके अङ्गोंको छिपानेके लिये उनसे अभिन्नरूपमें स्थित, ११६. लीलावरणनायिका=विभिन्न लीलाओंको स्वीकार करनेवाली प्रधान नायिका, ११७. सुधासिन्धुसमुल्लासा=प्रेमसुधाके समुद्रको समुल्लसित करनेवाली, ११८. अमृतस्यन्दविधायिनी=अमृतरसका स्रोत बहानेवाली।

११९. कृष्णचित्ता=अपना चित्त श्रीकृष्णको समर्पित कर देनेवाली, १२०. रासचित्ता=श्रीकृष्णकी प्रसन्नताके लिये रासमें मन लगानेवाली, १२१. प्रेमचित्ता=श्रीकृष्णप्रेममें मनको निमग्न रखनेवाली, १२२. हरिप्रिया=श्रीकृष्णकी प्रेयसी, १२३. अचिन्तनगुणग्रामा=अचिन्त्य गुण-समुदायवाली, १२४. कृष्णलीला= श्रीकृष्णलीलास्वरूपा, १२५. मलापहा=मनकी मलिनता एवं पाप-तापको धो बहानेवाली।

१२६. राससिन्धुशशाङ्का=रासरूपी समुद्रको उलसित करनेके लिये पूर्ण चन्द्रमाकी भाँति प्रकाशित, १२७. रासमण्डलमण्डनी=अपनी उपस्थितिसे रासमण्डलकी अत्यन्त शोभा बढ़ानेवाली, १२८. नतव्रता=विनग्रस्वभाववाली, १२९, श्रीहरीच्छासुमूर्तिः=श्रीकृष्णइच्छाकी सुन्दर मूर्ति, १३०. सुरवन्दिता=देवताओंद्वारा वन्दित।

१३१. गोपीचूडामणि:-गोपाङ्गनाशिरोमणि, १३२. गोपीगणेड्या=गोपियोंके समुदायद्वारा स्तुत, १३३. विरजाधिका=गोलोकमें विरजासे अधिक सम्मानित पदपर स्थित, १३४. गोपप्रेष्टा=गोपाल श्यामसुन्दरकी प्रियतमा, १३५. गोपकन्या=वृषभानुगोपकी पुत्री, १३६. गोपनारी=गोपकी वधू, १३७. सुगोपिका=श्रेष्ठ गोपी।

१३८. गोपधामा=गोलोक धाममें विराजमान, १३९. सुदामाम्बा=सुदामागोपके प्रति मातृ-स्नेह रखनेवाली, १४०. गोपाली=गोपी, १४१. गोपमोहिनी= गोपाल श्रीकृष्णको मोहनेवाली, १४२. गोपभूषा= गोपाल श्यामसुन्दर ही जिनके आभूषण हैं, १४३. कृष्णभूषा=श्रीकृष्णको विभूषित करनेवाली, १४४. श्रीवृन्दावनचन्द्रिका= श्रीवृन्दावनकी चाँदनी।

१४५. वीणादिघोषनिरता=वीणा आदिको बजानेमें संलग्न, १४६. रासोत्सवविकासिनी= रासोत्सवका विकास करनेवाली, १४७. कृष्णचेष्टा= श्रीकृष्णके अनुरूप चेष्टा करनेवाली, १४८. अपरिज्ञाता= पहचानमें न आनेवाली, १४९. कोटिकन्दरपमोहिनी= करोड़ों कामदेवोंको मोहित करनेवाली।

१५०. श्रीकृष्णगुणगानाङ्का=श्रीकृष्णके गुणोंका गान करनेमें तत्पर, १५१. देवसुन्दरिमोहिनी= देवसुन्दरियोंको मोहनेवाली, १५२. कृष्णचन्द्रमनोज्ञा= श्रीकृष्णचन्द्रके मनोभावको जाननेवाली, १५३. कृष्णदेवसहोदरी=योगमाया रूपसे श्रीयशोदाके गर्भसे उत्पन्न होनेवाली।

१५४. कृष्णाभिलाषिणी=श्रीकृष्ण-मिलनकी इच्छा रखनेवाली, १५५. कृष्णप्रेमानुग्रहवाज्जिनी= श्रीकृष्णके प्रेम और अनुग्रहको चाहनेवाली, १५६. क्षेमा=क्षेमस्वरूपा, १५७. मधुरालापा=मीठे वचन बोलनेवाली, १५८. भौतोमाया=भौहोंसे मायाको प्रकट करनेवाली, १५९. सुभद्रिका=परम कल्याणमयी।

१६०. प्रकृति:-श्रीकृष्णकी स्वरूपभूता हादिनी शक्ति, १६१. परमानन्दा=परमानन्दस्वरूपा, १६२. नीपद्मतलस्थिता=कदम्बवृक्षके नीचे खड़ी होनेवाली, १६३. कृपाकटाक्षा=कृपापूर्ण कटाक्षवाली, १६४. विम्बोष्टी=विम्बफलके समान लाल ओठवाली, १६५. रम्भा=सर्वाधिक सुन्दरी होनेके कारण रम्भा नामसे प्रसिद्ध, १६६. चारुनितम्बिनी=मनोहर नितम्बवाली।

१६७. स्मरकेलिनिधाना=प्रेमलीलाकी निधि, १६८. गण्डताटङ्गमण्डिता=कपोलोंपर कर्णभूषणोंसे अलंकृत, १६९. हेमाद्रिकान्तिरुचिरा=सुवर्णगिरि मेरुकी कान्तिके समान सुनहरी कान्तिसे सुशोभित परम सुन्दरी, १७०. प्रेमाढ्या=प्रेमसे परिपूर्ण, १७१. मदमन्थरा=प्रेममदसे मन्द गतिवाली।

१७२. कृष्णचिन्ता=श्रीकृष्णका चिन्तन करनेवाली, १७३. प्रेमचिन्ता=श्रीकृष्ण-प्रेमका चिन्तन करनेवाली, १७४. रतिचिन्ता=श्रीकृष्णरतिका चिन्तन करनेवाली, १७५. कृष्णादा=श्रीकृष्णकी प्राप्ति करानेवाली, १७६. रासचिन्ता=श्रीकृष्णके साथ रासका चिन्तन करनेवाली, १७७. भावचिन्ता= प्रेम-भावका चिन्तन करनेवाली, १७८. शुद्धचिन्ता=विशुद्ध चिन्तनवाली, १७९. महारसा=अतिशय प्रेमस्वरूप।

१८०. कृष्णादृष्टित्रियुगा=श्रीकृष्णको देखे बिना क्षणभरके विलम्बको भी एक युगके समान माननेवाली, १८१. दृष्टिपक्षविनिदिनी=श्रीकृष्णका दर्शन करते समय बाधा देनेवाली आँखकी पलकोंकी निन्दा करनेवाली, १८२. कन्दर्पजननी=कामदेवको जन्म देनेवाली, १८३. मुख्या=सर्वप्रधाना, १८४. वैकुण्ठगतिदायिनी=वैकुण्ठ धामकी प्राप्ति करानेवाली।

१८५. रासभावा=रासमण्डलमें आविर्भूत

होनेवाली, १८६. प्रियाशिलष्टा=प्रियतम श्यामसुन्दरके द्वारा आशिलष्ट, १८७. प्रेष्टा=श्रीकृष्णकी प्रेयसी, १८८. प्रथमनायिका=श्रीकृष्णकी प्रधान नायिका, १८९. शुद्धा=शुद्धस्वरूपा, १९०. सुधादेहिनी=प्रेमामृतमय शरीरवाली, १९१. श्रीरामा=लक्ष्मीके समान सुन्दर, १९२. रसमञ्जरी=श्रीकृष्णप्रेम-रसको प्रकट करनेके लिये मञ्जरीके समान।

१९३. सुप्रभावा=उत्तम प्रभावसे युक्त, १९४. शुभाचारा=शुभ आचरणवाली, १९५. स्वर्नदीनर्मदाम्बिका=गङ्गा तथा नर्मदाकी जननी, १९६. गोमतीचन्द्रभागेड्या=गोमती और चन्द्रभागाके द्वारा स्तवनीय, १९७. सरयूताप्रपर्णिसूः=सरयू तथा ताप्रपर्णी नदीको प्रकट करनेवाली।

१९८. निष्कलङ्कचरित्रा=कलङ्कशून्य चरित्रवाली, १९९. निर्गुणा=गुणातीत, २०००. निरञ्जना=निर्मलस्वरूपा। नारद! यह राधाकृष्णयुगलरूप भगवान्‌का सहस्रनाम स्तोत्र है।

इसका प्रयत्नपूर्वक पाठ करना चाहिये। यह वृन्दावनके रसकी प्राप्ति करानेवाला है। बड़े-से-बड़े पापोंको शान्त कर देता है। अभिलिखित भोगोंको देनेवाला महान् साधन है। यह राधामाधवकी भक्ति देनेवाला है। जिनकी मेधाशक्ति कभी कुण्ठित नहीं होती तथा जो श्रीराधा-प्रेमरूपी सुधासिन्धुमें नित्य विहार—सतत अवगाहन करते हैं, उन भगवान् श्रीकृष्णको नमस्कार है। श्रीराधादेवी संसारकी सृष्टि करती हैं। वे ही जगत्‌के पालनमें तत्पर रहती हैं और वे ही अन्तकालमें जगत्‌का संहार करनेवाली हैं। वे सबकी अधीश्वरी तथा सबकी जननी हैं। मुनीश्वर! यह उन्हीं श्रीराधाकृष्णका सहस्रनाम मैंने तुम्हें बताया है। यह दिव्य सहस्रनाम भोग और मोक्ष देनेवाला है। (नारदपुराण पूर्वभाग अध्याय ८२)

॥ तृतीय पाद सम्पूर्ण ॥

चतुर्थ पाद

नारद-सनातन-संवाद, ब्रह्माजीका मरीचिको ब्रह्मपुराणकी अनुक्रमणिका तथा उसके पाठश्रवण एवं दानका फल बताना

देवर्षि नारद विनीतभावसे सनातनजीको प्रणाम करके बोले—ब्रह्मन्! आप पुराणवेत्ताओंमें श्रेष्ठ और ज्ञान-विज्ञानमें तत्पर हैं, अतः मुझे पुराणोंके विभागका पूर्णरूपसे परिचय कराइये, जिसके श्रवण करनेपर सब कुछ सुन लिया जाता है, जिसका ज्ञान होनेपर सब कुछ जात हो जाता है और जिसे कर लेनेपर सब कुछ किया हुआ हो जाता है। पुराणोंके स्वाध्यायसे वर्णों और आश्रमोंके आचार-धर्मका साक्षात्कार हो जाता है। प्रभो! पुराण कितने हैं? उनकी संख्या कितनी है? और उनके श्लोकोंका मान क्या है? उन पुराणोंमें कौन-कौनसे आख्यान वर्णित हैं? यह सब मुझे बताइये। चारों वर्णोंसे सम्बन्ध रखनेवाली नाना प्रकारके व्रत आदिकी कथाएँ भी कहिये। सृष्टिक्रमसे विभिन्न वंशोंमें उत्पन्न हुए सत्पुरुषोंकी जीवनकथाको भी भलीभाँति प्रकाशित कीजिये; क्योंकि भगवन्! आपसे अधिक दूसरा कोई पौराणिक उपाख्यानोंका जानकार नहीं है। इसलिये सब संदेहोंका निराकरण करनेवाले पुराणोंका आप मुझसे वर्णन कीजिये।

सूतजी बोले—ब्राह्मणो! तदनन्तर नारदजीका वचन सुनकर वक्ताओंमें श्रेष्ठ सनातनजी एक क्षण भगवान् नारायणका ध्यान करके बोले।

सनातनजीने कहा—मुनिश्रेष्ठ! तुम्हें बार-बार साधुवाद है। पुराणोंका उपाख्यान जाननेके लिये जो तुम्हें निष्ठायुक्त बुद्धि प्राप्त हुई है, वह सम्पूर्ण लोकोंका उपकार करनेवाली है। पूर्वकालमें ब्रह्माजीने पुत्रस्नेहसे परिपूर्ण चित्त होकर मरीचि आदि ऋषियोंसे इस विषयमें जो कुछ कहा था, उसीका तुमसे वर्णन करता हूँ। एक समय ब्रह्माजीके पुत्र मरीचिने, जो स्वाध्याय और

शास्त्रज्ञानसे सम्पन्न तथा वेद-वेदाङ्गोंके पारञ्जत विद्वान् हैं, अपने पिता लोकस्त्रष्टा ब्रह्माजीके पास जाकर उन्हें भक्तिपूर्वक प्रणाम किया। दूसरोंको मान देनेवाले मुनीश्वर! प्रणामके पश्चात् उन्होंने भी निर्मल पौराणिक उपाख्यानके विषयमें, जैसा कि तुम पूछते हो, यही प्रश्न किया था।

मरीचिने कहा—भगवन्! देवदेवेश्वर! आप सम्पूर्ण लोकोंकी उत्पत्ति और लयके कारण हैं। सर्वज्ञ, सबका कल्याण करनेवाले तथा सबके साक्षी हैं, आपको नमस्कार है। पिताजी! मुझे पुराणोंके बीज, लक्षण, प्रमाण, वक्ता और श्रोता बताइये। मैं वह सब सुननेको उत्सुक हूँ।



ब्रह्माजीने कहा—वत्स! सुनो, मैं पुराणोंका संग्रह बतला रहा हूँ, जिसके जान लेनेपर चर और अचरसहित सम्पूर्ण वाङ्मयका ज्ञान हो जाता है। मानद! सब कल्पोंमें एक ही पुराण था, जिसका

विस्तार सौ करोड़ श्लोकोंमें था। वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंका बीज माना गया है। सब शास्त्रोंकी प्रवृत्ति पुराणसे ही हुई है, अतः समयानुसार लोकमें पुराणोंका ग्रहण न होता देख परम बुद्धिमान् भगवान् विष्णु प्रत्येक युगमें व्यासरूपसे प्रकट होते हैं। वे प्रत्येक द्वापरमें चार लाख श्लोकोंके पुराणका संग्रह करके उसके अठारह विभाग कर देते हैं और भूलोकमें उन्हींका प्रचार करते हैं। आज भी देवलोकमें सौ करोड़ श्लोकोंका विस्तृत पुराण विद्यमान है। उसीके सारभागका चार लाख श्लोकोंद्वारा वर्णन किया जाता है। ब्रह्मपुराण, पद्मपुराण, विष्णुपुराण, वायुपुराण, भागवतपुराण, नारदपुराण, मार्कण्डेयपुराण, अग्निपुराण, भविष्यपुराण, ब्रह्मवैर्तपुराण, लिङ्गपुराण, वाराहपुराण, स्कन्दपुराण, वामनपुराण, कूर्मपुराण, मत्स्यपुराण, गरुडपुराण तथा ब्रह्माण्डपुराण—ये अठारह पुराण हैं। अब सूत्ररूपसे एक-एकका कथानक तथा उसके वक्ता और श्रोताके नाम संक्षेपसे बतलाता हूँ। एकाग्रचित्त होकर सुनो। वेदवेत्ता महात्मा व्यासजीने सम्पूर्ण लोकोंके हितके लिये पहले ब्रह्मपुराणका संकलन किया। वह सब पुराणोंमें प्रथम और धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष देनेवाला है। उसमें नाना प्रकारके आख्यान और इतिहास हैं। उसकी श्लोक-संख्या दस हजार बतायी जाती है। मुनीश्वर! उसमें देवताओं, असुरों और दक्ष आदि प्रजापतियोंकी उत्पत्ति कही गयी है। तदनन्तर उसमें लोकेश्वर भगवान् सूर्यके पुण्यमय वंशका वर्णन किया गया है, जो महापातकोंका नाश करनेवाला है। उसी वंशमें परमानन्दस्वरूप तथा चतुर्व्यूहवतारी भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके अवतारकी कथा कही गयी है। तदनन्तर उस पुराणमें चन्द्रवंशका वर्णन आया है और जगदीश्वर श्रीकृष्णके पापनाशक चरित्रका भी वर्णन किया गया है। सम्पूर्ण द्वीपों, समस्त वर्षों तथा पाताल और

स्वर्गलोकका वर्णन भी उस पुराणमें देखा जाता है। नरकोंका वर्णन, सूर्यदेवकी स्तुति और कथा एवं पार्वतीजीके जन्म तथा विवाहका प्रतिपादन किया गया है। तदनन्तर दक्ष प्रजापतिकी कथा और एकाम्रकक्षेत्रका वर्णन है। नारद! इस प्रकार इस ब्रह्मपुराणके पूर्व भागका निरूपण किया गया है। इसके उत्तर भागमें तीर्थयात्रा-विधिपूर्वक पुरुषोत्तम क्षेत्रका विस्तारके साथ वर्णन किया गया है। इसीमें श्रीकृष्णचरित्रका विस्तारपूर्वक उल्लेख हुआ है। यमलोकका वर्णन तथा पितरोंके श्राद्धकी विधि है। इस उत्तर भागमें ही वर्णों और आश्रमोंके धर्मोंका विस्तारपूर्वक निरूपण किया गया है। वैष्णव-धर्मका प्रतिपादन, युगोंका निरूपण तथा प्रलयका भी वर्णन आया है। योगोंका निरूपण, सांख्यसिद्धान्तोंका प्रतिपादन, ब्रह्मवादका दिग्दर्शन तथा पुराणकी प्रशंसा आदि विषय आये हैं। इस प्रकार दो भागोंसे युक्त ब्रह्मपुराणका वर्णन किया गया है, जो सब पापोंका नाशक और सब प्रकारके सुख देनेवाला है। इसमें सूत और शौनकका संवाद है। यह पुराण भोग और मोक्ष देनेवाला है। जो इस पुराणको लिखकर वैशाखकी पूर्णिमाको अन्न, वस्त्र और आभूषणोंद्वारा पौराणिक ब्राह्मणकी पूजा करके उसे सुवर्ण और जलधेनुसहित इस लिखे हुए पुराणका भक्तिपूर्वक दान करता है, वह चन्द्रमा, सूर्य और तारोंकी स्थिति-कालतक ब्रह्मलोकमें वास करता है। ब्रह्मन्! जो ब्रह्मपुराणकी इस अनुक्रमणिका (विषय-सूची)-का पाठ अथवा श्रवण करता है, वह भी समस्त पुराणके पाठ और श्रवणका फल पा लेता है। जो अपनी इन्द्रियोंको वशमें करके हविष्यान्न भोजन करते हुए नियमपूर्वक समूचे ब्रह्मपुराणका श्रवण करता है, वह ब्रह्मपदको प्राप्त होता है। वत्स! इस विषयमें अधिक कहनेसे क्या लाभ? इस पुराणके कीर्तनसे मनुष्य जो-जो चाहता है, वह सब पा लेता है।

पद्मपुराणका लक्षण तथा उसमें वर्णित विषयोंकी अनुक्रमणिका

ब्रह्माजी कहते हैं—बेटा! सुनो, अब मैं पद्मपुराणका वर्णन करता हूँ। जो मनुष्य प्रसन्नतापूर्वक इसका पाठ और श्रवण करते हैं, उन्हें यह महान् पुण्य देनेवाला है। जैसे सम्पूर्ण देहधारी मनुष्य पाँच ज्ञानेन्द्रियोंसे युक्त बताया जाता है, उसी प्रकार यह पापनाशक पद्मपुराण पाँच खण्डोंसे युक्त कहा गया है। ब्रह्मन्! जिसमें महर्षि पुलस्त्यने भीष्मको सृष्टि आदिके क्रमसे नाना प्रकारके उपाख्यान और इतिहास आदिके साथ विस्तारपूर्वक धर्मका उपदेश किया है। जहाँ पुष्करतीर्थका माहात्म्य विस्तारपूर्वक कहा गया है, जिसमें ब्रह्म-यज्ञकी विधि, वेदपाठ आदिका लक्षण, नाना प्रकारके दानों और व्रतोंका पृथक्-पृथक् निरूपण, पार्वतीका विवाह, तारकासुरका विस्तृत उपाख्यान तथा गौ आदिका माहात्म्य है, जो सबको पुण्य देनेवाला है, जिसमें कालकेय आदि दैत्योंके वधकी पृथक्-पृथक् कथा दी गयी है तथा द्विजश्रेष्ठ! जहाँ ग्रहोंके पूजन और दानकी विधि भी बतायी गयी है, वह महात्मा श्रीव्यासजीके द्वारा कहा हुआ 'सृष्टिखण्ड' है।

पिता-माता आदिकी पूजनीयताके विषयमें शिवशर्माकी प्राचीन कथा, सुत्रतकी कथा, वृत्रासुरके वधकी कथा, पृथु, वेन और सुनीथाकी कथा, सुकलाका उपाख्यान, धर्मका आख्यान, पिताकी सेवाके विषयमें उपाख्यान, नहुषकी कथा, ययातिचरित्र, गुरुतीर्थका निरूपण, राजा और जैमिनिके संवादमें अत्यन्त आश्वर्यमयी कथा, अशोक सुन्दरीकी कथा, हुण्ड दैत्यका वध, कामोदाकी कथा, विहुण्ड दैत्यका वध, महात्मा च्यवनके साथ कुञ्जलका संवाद, तदनन्तर सिद्धोपाख्यान और इस खण्डके फलका विचार—ये सब विषय जिसमें कहे गये हों, वह सूत-शौनक-संवादरूप ग्रन्थ 'भूमिखण्ड' कहा गया है।

जहाँ सौति तथा महर्षियोंके संवादरूपसे

ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति बतायी गयी है, पृथ्वीसहित सम्पूर्ण लोकोंकी स्थिति और तीर्थोंका वर्णन किया गया है। तदनन्तर जहाँ नर्मदाजीकी उत्पत्ति-कथा और उनके तीर्थोंका पृथक्-पृथक् वर्णन है, जिसमें कुरुक्षेत्र आदि तीर्थोंकी पुण्यमयी कथा कही गयी है, कालिन्दीकी पुण्यकथा, काशी-माहात्म्य-वर्णन तथा गया और प्रयागके पुण्यमय माहात्म्यका निरूपण है, वर्ण और आश्रमके अनुकूल कर्मयोगका निरूपण, पुण्यकर्मकी कथाको लेकर व्यास-जैमिनि-संवाद, समुद्र-मन्थनकी कथा, व्रतसम्बन्धी उपाख्यान, तदनन्तर कार्तिकके अन्तिम पाँच दिन (भीष्मपञ्चक)-का माहात्म्य तथा सर्वापराधनिवारक स्तोत्र—ये सब विषय जहाँ आये हैं, वह 'स्वर्गखण्ड' कहा गया है। ब्रह्मन्! यह सब पातकोंका नाश करनेवाला है।

रामाश्वमेधके प्रसङ्गमें प्रथम रामका राज्याभिषेक, अगस्त्य आदि महर्षियोंका आगमन, पुलस्त्यवंशका वर्णन, अश्वमेधका उपदेश, अश्वमेधीय अश्वका पृथ्वीपर विचरण, अनेक राजाओंकी पुण्यमयी कथा, जगन्नाथजीकी महिमाका निरूपण, वृन्दावनका सर्वपापनाशक माहात्म्य, कृष्णवतारधारी श्रीहरिकी नित्य लीलाओंका कथन, वैशाखस्नानकी महिमा, स्नान-दान और पूजनका फल, भूमि-वाराह-संवाद, यम और ब्राह्मणकी कथा, राजदूतोंका संवाद, श्रीकृष्णस्तोत्रका निरूपण, शिवशम्भु-समागम, दधीचिकी कथा, भस्मका अनुपम माहात्म्य, उत्तम शिव-माहात्म्य, देवरातसुतोपाख्यान, पुराणवेत्ताकी प्रशंसा, गौतमका उपाख्यान और शिवगीता तथा कल्पान्तरमें भरद्वाज-आश्रममें श्रीरामकथा आदि विषय 'पातालखण्ड'के अन्तर्गत हैं। जो सदा इसका श्रवण और पाठ करते हैं, उनके सब पापोंका नाश करके यह उन्हें सम्पूर्ण अभीष्ट फलोंकी प्राप्ति कराता है।

पाँचवें खण्डमें पहले भगवान् शिवके द्वारा

गौरीदेवीके प्रति कहा हुआ पर्वतोपाख्यान है। तत्पश्चात् जालन्धरकी कथा, श्रीशैल आदिका माहात्म्यकीर्तन और राजा सगरकी पुण्यमयी कथा है। उसके बाद गङ्गा, प्रयाग, काशी और गयाका अधिक पुण्यदायक माहात्म्य कहा गया है। फिर अन्नादि दानका माहात्म्य और महाद्वादशीव्रतका उल्लेख है। तत्पश्चात् चौबीस एकादशियोंका पृथक्-पृथक् माहात्म्य कहा गया है। फिर विष्णुधर्मका निरूपण और विष्णुसहस्रनामका वर्णन है। उसके बाद कार्तिकव्रतका माहात्म्य, माघ-स्नानका फल तथा जम्बूद्वीपके तीर्थोंकी पापनाशक महिमाका वर्णन है। फिर साभ्रमती (साबरमती)-का माहात्म्य, नृसिंहोत्पत्तिकथा, देवशर्मा आदिका उपाख्यान और गीतामाहात्म्यका वर्णन है। तदनन्तर भक्तिका आख्यान, श्रीमद्भागवतका माहात्म्य और अनेक तीर्थोंकी कथासे युक्त इन्द्रप्रस्थकी महिमा है। इसके बाद मन्त्ररत्नका कथन, त्रिपादविभूतिका वर्णन तथा मत्स्य आदि अवतारोंकी पुण्यमयी अवतार-कथा है। तत्पश्चात् अष्टोत्तरशत दिव्य राम-नाम और उसके माहात्म्यका वर्णन है। वाडव! फिर महर्षि भृगुद्वारा भगवान् विष्णुके वैभवकी परीक्षाका उल्लेख है। इस प्रकार यह पाँचवाँ 'उत्तरखण्ड' कहा गया है, जो सब प्रकारके पुण्य देनेवाला है। जो श्रेष्ठ मानव पाँच खण्डोंसे युक्त पद्मपुराणका श्रवण करता है,

वह इस लोकमें मनोवाञ्छित भोगोंको भोगकर वैष्णव धामको प्राप्त कर लेता है। यह पद्मपुराण पचपन हजार श्लोकोंसे युक्त है। मानद! जो इस पुराणको लिखवाकर पुराणज्ञ ब्राह्मणका भलीभाँति



सत्कार करके ज्येष्ठकी पूर्णिमाको स्वर्णमय कमलके साथ इस लिखित पुराणका उक्त पुराणवेत्ता ब्राह्मणको दान करता है, वह सम्पूर्ण देवताओंसे वन्दित होकर वैष्णव धामको चला जाता है। जो पद्मपुराणकी इस अनुक्रमणिकाका पाठ तथा श्रवण करता है, वह भी सम्पूर्ण पद्मपुराणके श्रवणजनित फलको प्राप्त कर लेता है।

विष्णुपुराणका स्वरूप और विषयानुक्रमणिका

श्रीब्रह्माजी कहते हैं—वत्स! सुनो, अब मैं वैष्णव महापुराणका वर्णन करता हूँ। इसकी श्लोक-संख्या तेर्वेस हजार है। यह सब पातकोंका नाश करनेवाला है। इसके पूर्वभागमें शक्तिनन्दन पराशरजीने मैत्रेयको छः अंश सुनाये हैं, उनमेंसे प्रथम अंशमें इस पुराणकी अवतरणिका दी गयी है। आदिकारण सर्ग, देवता आदिकी उत्पत्ति, समुद्रमन्थनकी कथा, दक्ष आदिके वंशका वर्णन,

धूक तथा पृथुके चरित्र, प्राचेतसका उपाख्यान, प्रह्लादकी कथा और ब्रह्माजीके द्वारा देव, तिर्यक्, मनुष्य आदि वर्गोंके प्रधान-प्रधान व्यक्तियोंको पृथक्-पृथक् राज्याधिकार दिये जानेका वर्णन—इन सब विषयोंको प्रथम अंश कहा गया है।

प्रियव्रतके वंशका वर्णन, द्वीपों और वर्षोंका वर्णन, पाताल और नरकोंका कथन, सात स्वगांका निरूपण, पृथक्-पृथक् लक्षणोंसे युक्त सूर्य आदि

ग्रहोंकी गतिका प्रतिपादन, भरत-चरित्र, मुक्तिमार्ग-निर्दर्शन तथा निदाघ एवं ऋभुका संवाद—ये सब विषय द्वितीय अंशके अन्तर्गत कहे गये हैं।

मन्वन्तरोंका वर्णन, वेदव्यासका अवतार तथा इसके बाद नरकसे उद्धार करनेवाला कर्म कहा गया है। सगर और और्वके संवादमें सब धर्मोंका निरूपण, श्राद्धकल्प तथा वर्णश्रमधर्म, सदाचार-निरूपण तथा मायामोहकी कथा—यह सब विषय तीसरे अंशमें बताया गया है, जो सब पापोंका नाश करनेवाला है।

मुनिश्रेष्ठ! सूर्यवंशकी पवित्र कथा, चन्द्रवंशका वर्णन तथा नाना प्रकारके राजाओंका वृत्तान्त चतुर्थ अंशके अन्तर्गत है।

श्रीकृष्णावतारविषयक प्रश्न, गोकुलकी कथा, बाल्यावस्थामें श्रीकृष्णद्वारा पूतना आदिका वध, कुमारावस्थामें अघासुर आदिकी हिंसा, किशोरवस्थामें उनके द्वारा कंसका वध, मथुरापुरीकी लीला, तदनन्तर युवावस्थामें द्वारकाकी लीलाएँ, समस्त दैत्योंका वध, भगवान्‌के पृथक्-पृथक् विवाह, द्वारकामें रहकर योगीश्वरोंके भी ईश्वर जगन्नाथ श्रीकृष्णके द्वारा शत्रुओंके वध आदिके साथ-साथ पृथ्वीका भार उतारा जाना और अष्टावक्रजीका उपाख्यान—ये सब बातें पाँचवें अंशके अन्तर्गत हैं।

कलियुगका चरित्र, चार प्रकारके महाप्रलय

तथा केशिध्वजके द्वारा खाण्डिक्य जनकको ब्रह्मज्ञानका उपदेश इत्यादि विषयोंको छठा अंश कहा गया है।

इसके बाद विष्णुपुराणका उत्तर भाग प्रारम्भ होता है, जिसमें शौनक आदिके द्वारा आदरपूर्वक पूछे जानेपर सूतजीने सनातन 'विष्णुधर्मोत्तर' नामसे प्रसिद्ध नाना प्रकारके धर्मोंकी कथाएँ कही हैं। अनेकानेक पुण्य-ब्रत, यम-नियम, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, वेदान्त, ज्यौतिष, वंशवर्णनके प्रकरण, स्तोत्र, मन्त्र तथा सब लोगोंका उपकार करनेवाली नाना प्रकारकी विद्याएँ सुनायी हैं। यह विष्णुपुराण है, जिसमें सब शास्त्रोंके सिद्धान्तका संग्रह हुआ है। इसमें वेदव्यासजीने वाराहकल्पका वृत्तान्त कहा है। जो मनुष्य भक्ति और आदरके साथ विष्णुपुराणको पढ़ते और सुनते हैं, वे दोनों यहाँ मनोवाञ्छित भोग भोगकर विष्णुलोकमें चले जाते हैं। जो इस पुराणको लिखवाकर या स्वयं लिखकर आषाढ़की पूर्णिमाको धृतमयी धेनुके साथ पुराणार्थवेत्ता विष्णुभक्त ब्राह्मणको दान करता है, वह सूर्यके समान तेजस्वी विमानद्वारा वैकुण्ठधाममें जाता है। ब्रह्मन्! जो विष्णुपुराणकी इस विषयानुक्रमणिकाको कहता अथवा सुनता है, वह समूचे पुराणके पठन एवं श्रवणका फल पाता है।

वायुपुराणका परिचय तथा उसके दान एवं श्रवण आदिका फल

ब्रह्माजी कहते हैं—ब्रह्मन्! सुनो, अब मैं वायुपुराणका लक्षण बतलाता हूँ, जिसके श्रवण करनेपर परमात्मा भगवान् शिवका धाम प्राप्त होता है। यह पुराण चौबीस हजार श्लोकोंका बतलाया गया है। जिसमें वायुदेवने श्वेतकल्पके प्रसङ्गसे धर्मोंका उपदेश किया है, उसे वायुपुराण कहा गया है। वह पूर्व और उत्तर दो भागोंसे युक्त है। ब्रह्मन्! जिसमें सर्ग आदिका लक्षण विस्तारपूर्वक बतलाया गया है, जहाँ भिन्न-भिन्न मन्वन्तरोंमें

राजाओंके वंशका वर्णन है और जहाँ गयासुरके वधकी कथा विस्तारके साथ कही गयी है, जिसमें सब मासोंका माहात्म्य बताकर माघमासका अधिक फल कहा गया है, जहाँ दानधर्म तथा राजधर्म अधिक विस्तारसे कहे गये हैं, जिसमें पृथ्वी, पाताल, दिशा और आकाशमें विचरनेवाले जीवोंके और ब्रत आदिके सम्बन्धमें निर्णय किया गया है, वह वायुपुराणका पूर्वभाग कहा गया है।

मुनीश्वर! उसके उत्तरभागमें नर्मदाके तीर्थोंका



वर्णन है और विस्तारके साथ शिवसंहिता कही गयी है। जो भगवान् सम्पूर्ण देवताओंके लिये दुर्ज्ञय और सनातन हैं, वे जिसके तटपर सदा सर्वतोभावेन निवास करते हैं, वही यह नर्मदाका जल ब्रह्मा है, यही विष्णु है और यही सर्वोत्कृष्ट साक्षात् शिव है। यह नर्मदाजल ही निराकार ब्रह्म तथा कैवल्य मोक्ष है। निश्चय ही भगवान् शिवने समस्त लोकोंका हित करनेके लिये अपने शरीरसे इस नर्मदा नदीके रूपमें किसी दिव्य शक्तिको ही

धरतीपर उतारा है। जो नर्मदाके उत्तर तटपर निवास करते हैं, वे भगवान् रुद्रके अनुचर होते हैं और जिनका दक्षिण तटपर निवास है, वे भगवान् विष्णुके लोकमें जाते हैं। ॐकारेश्वरसे लेकर पश्चिम समुद्रतक नर्मदा नदीमें दूसरी नदियोंके पैंतीस पापनाशक संगम हैं, उनमेंसे ग्यारह तो उत्तर तटपर हैं और तेईस दक्षिण तटपर। पैंतीसवाँ तो स्वयं नर्मदा और समुद्रका संगम कहा गया है। नर्मदाके दोनों तटोंपर इन संगमोंके साथ चार सौ प्रसिद्ध तीर्थ हैं। मुनीश्वर! इनके सिवा अन्य साधारण तीर्थ तो रेवाके दोनों तटोंपर पग-पगपर विद्यमान हैं, जिनकी संख्या साठ करोड़ साठ हजार है। यह परमात्मा शिवकी संहिता परम पुण्यमयी है, जिसमें वायुदेवताने नर्मदाके चरित्रिका वर्णन किया है। जो इस पुराणको लिखकर गुड़मयी धेनुके साथ श्रावणकी पूर्णिमाको भक्तिपूर्वक कुटुम्बी ब्राह्मणके हाथमें दान देता है, वह चौदह इन्द्रोंके राज्यकालतक रुद्रलोकमें निवास करता है। जो मनुष्य नियमपूर्वक हविष्य भोजन करते हुए इस वायुपुराणको सुनाता अथवा सुनता है, वह साक्षात् रुद्र है, इसमें संशय नहीं है। जो इस अनुक्रमणिकाको सुनता और सुनाता है, वह भी समस्त पुराणके श्रवणका फल पा लेता है।

श्रीमद्भागवतका परिचय, माहात्म्य तथा दानजनित फल

ब्रह्माजी कहते हैं—मरीचे! सुनो, वेदव्यासजीने जो वेदतुल्य श्रीमद्भागवत नामक महापुराणका सम्पादन किया है, वह अठारह हजार श्लोकोंका बतलाया गया है। यह पुराण सब पापोंका नाश करनेवाला है। यह बारह शाखाओंसे युक्त कल्पवृक्षस्वरूप है। विप्रवर! इसमें विश्वरूप भगवान्का ही प्रतिपादन किया गया है। इसके पहले स्कन्धमें सूत और शौनकादि ऋषियोंके समागमका प्रसंग उठाकर व्यासजी तथा पाण्डवोंके

पवित्र चरित्रिका वर्णन किया गया है। इसके बाद परीक्षितके जन्मसे लेकर प्रायोपवेशनतकी कथा कही गयी है। यहींतक प्रथम स्कन्धका विषय है। फिर परीक्षित-शुक्लसंवादमें स्थूल और सूक्ष्म दो प्रकारकी धारणाओंका निरूपण है। तदनन्तर ब्रह्म-नारद-संवादमें भगवान्के अवतारसम्बन्धी अमृतोपम चरित्रोंका वर्णन है। फिर पुराणका लक्षण कहा गया है। बुद्धिमान् व्यासजीने यह द्वितीय स्कन्धका विषय बताया है, जो सृष्टिके

कारणतत्त्वोंकी उत्पत्तिका प्रतिपादक है। तत्पश्चात् विदुरका चरित्र, मैत्रेयजीके साथ विदुरका समागम, परमात्मा ब्रह्मसे सृष्टिक्रमका निरूपण और महर्षि कपिलद्वारा कहा हुआ सांख्य—यह सब विषय तृतीय स्कन्धके अन्तर्गत बताया गया है। तदनन्तर पहले सतीचरित्र, फिर ध्रुवका चरित्र, तत्पश्चात् राजा पृथुका पवित्र उपाख्यान, फिर राजा प्राचीनबर्हिष्ठकी कथा—यह सब विसर्गविषयक परम उत्तम चौथा स्कन्ध कहा गया है। राजा प्रियव्रत और उनके पुत्रोंका पुण्यदायक चरित्र, ब्रह्माण्डके अन्तर्गत विभिन्न लोकोंका वर्णन तथा नरकोंकी स्थिति—यह संस्थानविषयक पाँचवाँ स्कन्ध है। अजामिलका चरित्र, दक्ष प्रजापतिद्वारा की हुई सृष्टिका निरूपण, वृत्रासुरकी कथा और मरुदण्डोंका पुण्यदायक जन्म—यह सब व्यासजीके द्वारा छठा स्कन्ध कहा गया है। वत्स! प्रह्लादका पुण्यचरित्र और वर्णाश्रिमधर्मका निरूपण यह सातवाँ स्कन्ध बताया गया है। यह 'ऊति' अथवा कर्मवासनाविषयक स्कन्ध है। इसमें उसीका प्रतिपादन किया गया है। तत्पश्चात् मन्वन्तरनिरूपणके प्रसंगमें गजेन्द्रमोक्षकी कथा, समुद्रमन्थन, बलिके ऐश्वर्यकी वृद्धि और उनका बन्धन तथा मत्स्यावतारचरित्र—यह आठवाँ स्कन्ध कहा गया है। महामते! सूर्यवंशका वर्णन और चन्द्रवंशका निरूपण—यह वंशानुचरितविषयक नवाँ स्कन्ध बताया गया है। श्रीकृष्णका बालचरित, कुमारावस्थाकी लीलाएँ, ब्रजमें निवास, किशोरावस्थाकी लीलाएँ, मथुरमें निवास, युवावस्था, द्वारकामें निवास और भूभारहरण—यह निरोधविषयक दसवाँ स्कन्ध है। नारद-वसुदेव-संवाद, यदु-दत्तत्रेय-संवाद और श्रीकृष्णके साथ उद्धवका संवाद, आपसके कलहसे यादवोंका संहार—यह सब मुक्तिविषयक ग्यारहवाँ स्कन्ध है। भविष्य

राजाओंका वर्णन, कलिधर्मका निर्देश, राजा परीक्षितके मोक्षका प्रसङ्ग, वेदोंकी शाखाओंका विभाजन, मार्कण्डेयजीकी तपस्या, सूर्यदेवकी विभूतियोंका वर्णन, तत्पश्चात् भागवती विभूतिका वर्णन और अन्तमें पुराणोंकी श्लोक-संख्याका प्रतिपादन—यह सब आश्रयविषयक बारहवाँ स्कन्ध है। वत्स! इस प्रकार तुम्हें श्रीमद्भागवतका परिचय दिया गया है। वह वक्ता, श्रोता, उपदेशक, अनुमोदक और सहायक—सबको भक्ति, भोग और मोक्ष देनेवाला है। जो भगवान्‌की भक्ति चाहता हो, वह भाद्रपदकी पूर्णिमाको सोनेके सिंहासनके साथ इस भागवतका भगवद्वक्त ब्राह्मणको प्रेमपूर्वक दान करे। उसके पहले वस्त्र और सुवर्ण आदिके द्वारा ब्राह्मणकी पूजा कर लेनी चाहिये। जो मनुष्य भागवतकी इस विषयानुक्रमणिकाका दूसरेको श्रवण कराता अथवा स्वयं सुनता है, वह समस्त पुराणके श्रवणका उत्तम फल प्राप्त कर लेता है।



नारदपुराणकी विषय-सूची, इसके पाठ, श्रवण और दानका फल

ब्रह्माजी कहते हैं—ब्रह्मन्! सुनो, अब मैं नारदीय पुराणका वर्णन करता हूँ। इसमें पचीस हजार श्लोक हैं। इसमें बृहत्कल्पकी कथाका आश्रय लिया गया है। इसमें पूर्वभागके प्रथम पादमें पहले सूत-शौनक-संवाद है; फिर सृष्टिका संक्षेपसे वर्णन है। फिर महात्मा सनकके द्वारा नाना प्रकारके धर्मोंकी पुण्यमयी कथाएँ कही गयी हैं। पहले पादका नाम 'प्रवृत्तिधर्म' है। दूसरा पाद 'मोक्षधर्म'के नामसे प्रसिद्ध है। उसमें मोक्षके उपायोंका वर्णन है। वेदाङ्गोंका वर्णन और शुकदेवजीकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग विस्तारके साथ आया है। सनन्दनजीने महात्मा नारदको इस द्वितीय पादका उपदेश किया है। तृतीय पादमें सनत्कुमार मुनिने नारदजीको महातन्त्रवर्णित 'पशुपाशविमोक्ष'का उपदेश दिया है। फिर गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव और शक्ति आदिके मन्त्रोंका शोधन, दीक्षा, मन्त्रोद्धार, पूजन, प्रयोग, कवच, सहस्रनाम और स्तोत्रका क्रमशः वर्णन किया है। तदनन्तर चतुर्थ पादमें सनातन मुनिने नारदजीसे पुराणोंका लक्षण, उनकी श्लोक-संख्या तथा दानका पृथक्-पृथक् फल बताया है। साथ ही उन दानोंका अलग-अलग समय भी नियत किया है। इसके बाद चैत्र आदि सब मासोंमें पृथक्-पृथक् प्रतिपदा आदि तिथियोंका सर्वपापनाशक व्रत बताया है। यह 'बृहदाख्यान' नामक पूर्वभाग बताया गया है। इसके उत्तर भागमें एकादशी व्रतके सम्बन्धमें किये हुए प्रश्नके उत्तरमें महर्षि वसिष्ठके साथ राजा मान्धाताका संवाद उपस्थित किया गया है। तत्पश्चात् राजा रुक्माङ्गुदकी पुण्यमयी कथा, मोहिनीकी उत्पत्ति, उसके कर्म, पुरोहित वसुका मोहिनीके लिये शाप, फिर शापसे उसके उद्धारका कार्य, गङ्गाकी पुण्यतम कथा, गयायात्रावर्णन, काशीका अनुपम माहात्म्य, पुरुषोत्तमक्षेत्रका वर्णन, उस क्षेत्रकी यात्राविधि,

तत्सम्बन्धी अनेक उपाख्यान, प्रयाग, कुरुक्षेत्र और हरिद्वारका माहात्म्य, कामोदाकी कथा, बदरीतीर्थका माहात्म्य, कामाक्षा और प्रभासक्षेत्रकी महिमा, पृष्ठरक्षेत्रका माहात्म्य, गौतममुनिका आख्यान, वेदपादस्तोत्र, गोकर्णक्षेत्रका माहात्म्य, लक्ष्मणजीकी कथा, सेतुमाहात्म्यकथन, नर्मदाके तीर्थोंका वर्णन, अवन्तीपुरीकी महिमा, तदनन्तर मथुरा-माहात्म्य, वृन्दावनकी महिमा, वसुका ब्रह्माके निकट जाना, तत्पश्चात् मोहिनीका तीर्थोंमें भ्रमण आदि विषय हैं। इस प्रकार यह सब नारदमहापुराण है। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक एकाग्रचित्त हो इस पुराणको सुनता अथवा सुनाता है, वह ब्रह्मलोकमें जाता है। जो आश्विनकी पूर्णिमाके दिन सात धेनुओंके साथ इस पुराणका श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको दान करता है, वह निश्चय ही मोक्ष पाता है। जो एकचित्त होकर नारदपुराणकी इस अनुक्रमणिकाका वर्णन अथवा श्रवण करता है, वह भी स्वर्गलोकमें जाता है।



मार्कण्डेयपुराणका परिचय तथा उसके श्रवण एवं दानका महात्म्य

श्रीब्रह्माजी कहते हैं—मुने! अब मैं तुम्हें मार्कण्डेयपुराणका परिचय देता हूँ। यह महापुराण पढ़ने और सुननेवाले पुरुषोंके लिये सदा पुण्यदायक है। जिसमें पक्षियोंको प्रवचनका अधिकारी बनाकर उनके द्वारा सब धर्मोंका निरूपण किया गया है, वह मार्कण्डेयपुराण नौ हजार श्लोकोंका है, ऐसा कहा जाता है। इसमें पहले मार्कण्डेयमुनिके समीप जैमिनिके प्रश्नका वर्णन है। फिर धर्मसंज्ञक पक्षियोंके जन्मकी कथा कही गयी है। फिर उनके पूर्वजन्मकी कथा और देवराज इन्द्रके कारण उन्हें शापरूप विकारकी प्राप्तिका कथन है। तदनन्तर बलभद्रजीकी तीर्थयात्रा, द्रौपदीके पाँचों पुत्रोंकी कथा, हरिश्चन्द्रकी पुण्यमयी कथा, आडी और बक पक्षियोंका युद्ध, पिता और पुत्रका उपाख्यान, दत्तात्रेयजीकी कथा,



महान् आख्यानसहित हैह्यचरित्र, अलर्कचरित्रके साथ मदालसाकी कथा, नौ प्रकारकी सृष्टिका पुण्यमय वर्णन, कल्पान्तकालका निर्देश, यक्ष-सृष्टि-निरूपण, रुद्र आदिकी सृष्टि, द्वीपचर्याका वर्णन, मनुओंकी अनेक पापनाशक कथाओंका कीर्तन और उन्हींमें दुर्गाजीकी अत्यन्त पुण्यदायिनी कथा है, जो आठवें मन्वन्तरके प्रसङ्गमें कही गयी है। तत्पश्चात् तीन वेदोंके तेजसे प्रणवकी उत्पत्ति, सूर्यदेवके जन्मकी कथा, उनका महात्म्य, वैवस्वत मनुके वंशका वर्णन, वत्सप्रीका चरित्र, तदनन्तर महात्मा खनित्रकी पुण्यमयी कथा, राजा अविक्षितका चरित्र, किमिच्छिक व्रतका वर्णन, नरिष्यन्त-चरित्र, इक्ष्वाकु-चरित्र, नल-चरित्र, श्रीरामचन्द्रजीकी उत्तम कथा, कुशके वंशका वर्णन, सोमवंशका वर्णन, पुरुरवाकी पुण्यमयी कथा, नहुषका अद्भुत वृत्तान्त, ययातिका पवित्र चरित्र, यदुवंशका वर्णन, श्रीकृष्णकी बाललीला, उनकी मथुरा और द्वारकाकी लीलाएँ, सब अवतारोंकी कथा, सांख्यमतका वर्णन, प्रपञ्चके मिथ्यात्वका वर्णन, मार्कण्डेयजीका चरित्र तथा पुराणश्रवण आदिका फल—ये सब विषय हैं। वत्स! जो मनुष्य इस मार्कण्डेयपुराणका भक्तिभावसे आदरपूर्वक श्रवण करता है, वह परम गतिको पाता है। जो इसकी व्याख्या करता है, वह भगवान् शिवके लोकमें जाता है। जो इसे लिखकर हाथीकी स्वर्णमयी प्रतिमाके साथ कार्तिककी पूर्णिमाके दिन श्रेष्ठ ब्राह्मणको दान देता है, वह ब्रह्मपदको प्राप्त कर लेता है। जो मार्कण्डेयपुराणकी इस विषय-सूचीको सुनता अथवा सुनाता है, वह मनोवाञ्छित फल पाता है।

अग्निपुराणकी अनुक्रमणिका तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दानका फल

श्रीब्रह्माजी कहते हैं—अब मैं अग्निपुराणका वर्णन करता हूँ। जिसमें अग्निदेवने महर्षि वसिष्ठसे ईशान-कल्पका वर्णन किया है, वह अग्निपुराण पंद्रह हजार श्लोकोंसे पूर्ण है। उसमें अनेक प्रकारके चरित्र हैं। यह पुराण अद्भुत है। जो लोग इसका पाठ और श्रवण करते हैं, उनके समस्त पापोंको यह हर लेनेवाला है। इसमें पहले पुराणविषयक प्रश्न है, फिर सब अवतारोंकी कथा कही गयी है। तत्पश्चात् सृष्टिका प्रकरण और विष्णुपूजा आदिका वर्णन है। तदनन्तर अग्निकार्य, मन्त्र, मुद्रादिलक्षण, सर्वदीक्षाविधान और अभिषेकनिरूपण है। इसके बाद मण्डल आदिका लक्षण, कुशापामार्जन, पवित्रारोपणविधि, देवालयविधि, शालग्राम आदिकी पूजा तथा मूर्तियोंके पृथक्-पृथक् चिह्नका वर्णन है। फिर न्यास आदिका विधान, प्रतिष्ठा, पूर्तकर्म, विनायक आदिका पूजन, नाना प्रकारकी दीक्षाओंकी विधि, सर्वदेवप्रतिष्ठा, ब्रह्माण्डका वर्णन, गङ्गादि तीर्थोंका माहात्म्य, द्वीप और वर्षका वर्णन, ऊपर और नीचेके लोकोंकी रचना, ज्योतिश्वक्रका निरूपण, ज्योतिः-शास्त्र, युद्धजयार्णव, षट्कर्म, मन्त्र, यन्त्र, औषधसमूह, कुञ्जिका आदिकी पूजा, छः प्रकारकी न्यासविधि, कोटिहोमविधि, मन्वन्तरनिरूपण, ब्रह्मचर्यादि आश्रमोंके धर्म, श्राद्धकल्पविधि, ग्रहयज्ञ, श्रौतस्मार्तकर्म, प्रायश्चित्तवर्णन, तिथि-व्रत आदिका वर्णन, वार-व्रतका कथन, नक्षत्रव्रतकी विधिका प्रतिपादन, मासिक व्रतका निर्देश, उत्तम दीपदानविधि, नवव्यूहपूजन, नरक-निरूपण, व्रतों और दानोंकी विधिका प्रतिपादन, नाडीचक्रका संक्षिप्त वर्णन, संध्याकी उत्तम विधि, गायत्रीके अर्थका निर्देश, लिङ्गस्तोत्र, राज्याभिषेकके मन्त्रका प्रतिपादन, राजाओंके धार्मिक कृत्य, स्वप्नसम्बन्धी विचारका अध्याय (या प्रसङ्ग), शकुन आदिका निरूपण,

मण्डल आदिका निर्देश, रत्नदीक्षाविधि, रामोक नीतिका वर्णन, रत्नोंके लक्षण, धनुर्विद्या, व्यवहारदर्शन, देवासुरसंग्रामकी कथा, आयुर्वेद-निरूपण, गज आदिकी चिकित्सा, उनके रोगोंकी शान्ति, गोचिकित्सा, मनुष्यादि चिकित्सा, नाना प्रकारकी पूजा-पद्धति, विविध प्रकारकी शान्ति, छन्दःशास्त्र, साहित्य, एकाक्षर आदि कोष, सिद्ध शब्दानुशासन (व्याकरण), स्वर्गादि वर्गोंसे युक्त कोश, प्रलयका लक्षण, शारीरक (वेदान्त)-का



निरूपण, नरक-वर्णन, योगशास्त्र, ब्रह्मज्ञान तथा पुराणश्रवणका फल—इन विषयोंका प्रतिपादन हुआ है। ब्रह्मन्! यही अग्निपुराण कहा गया है। जो अग्निपुराणको लिखकर सुवर्णमय कमल और तिलमयी धेनुके साथ मार्गशीर्षकी पूर्णिमाके दिन पौराणिक ब्राह्मणको विधिपूर्वक दान देता है, वह स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होता है। इस प्रकार तुम्हें अग्निपुराणकी अनुक्रमणिका बतायी गयी है, जो इसे पढ़ने और सुननेवाले मनुष्योंको इहलोक और परलोकमें भी मोक्ष देनेवाली है।

भविष्यपुराणका परिचय तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दानका माहात्म्य

ब्रह्माजी कहते हैं—अब मैं तुम्हें सब प्रकारकी सिद्धि प्रदान करनेवाले भविष्यपुराणका वर्णन करता हूँ, जो सब लोगोंके अभीष्ट मनोरथको सिद्ध करनेवाला है; जिसमें मैं ब्रह्मा सम्पूर्ण देवताओंका आदि स्रष्टा बताया गया हूँ। पूर्वकालमें सृष्टिके लिये स्वयम्भू मनु उत्पन्न हुए। उन्होंने मुझे प्रणाम करके सर्वार्थसाधक धर्मके विषयमें प्रश्न किया। तब मैंने प्रसन्न होकर उन्हें धर्मसंहिताका उपदेश किया। परम बुद्धिमान् व्यास जब पुराणोंका विस्तार करने लगे तो उन्होंने उस धर्मसंहिताके पाँच विभाग किये। उनमें नाना प्रकारकी आश्वर्यजनक कथाओंसे युक्त अधोरकल्पका वृत्तान्त है। उस पुराणमें पहला पर्व 'ब्रह्मपर्व' के नामसे प्रसिद्ध है। इसीमें ग्रन्थका उपक्रम है। सूत-शौनक-संवादमें पुराणविषयक प्रश्न है। इसमें अधिकतर सूर्यदेवका ही चरित्र है। अन्य सब उपाख्यान भी इसमें आये हैं। इसमें सृष्टि आदिके लक्षण बताये गये हैं। शास्त्रोंका तो यह सर्वस्वरूप है। इसमें पुस्तक, लेखक और लेख्यका भी लक्षण दिया गया है। सब प्रकारके संस्कारोंका भी लक्षण बताया गया है। पक्षकी आदि सात तिथियोंके सात कल्प कहे गये हैं। अष्टमी आदि तिथियोंके शेष आठ कल्प 'वैष्णवपर्व' में बताये गये हैं। 'शैवपर्व' में ब्रह्मपर्वसे भिन्न कथाएँ हैं। 'सौरपर्व' में अन्तिम कथाओंका सम्बन्ध देखा जाता है। तत्पश्चात् 'प्रतिसर्ग पर्व' है, जिसमें पुराणके उपसंहारका वर्णन है। यह नाना प्रकारके उपाख्यानोंसे युक्त पाँचवाँ पर्व है। इन पाँच पर्वोंमेंसे पहलेमें मुझ ब्रह्माकी महिमा अधिक है। दूसरे और तीसरे पर्वोंमें धर्म, काम और मोक्ष विषयको लेकर क्रमशः भगवान् विष्णु तथा शिवकी महिमाका वर्णन है। चौथे पर्वमें सूर्यदेवकी महिमाका प्रतिपादन किया गया है। अन्तिम या पाँचवाँ पर्व प्रतिसर्ग नामसे प्रसिद्ध है।

इसमें सब प्रकारकी कथाएँ हैं। बुद्धिमान् व्यासजीने इस पर्वका भविष्यकी कथाओंके साथ उल्लेख किया है। भविष्यपुराणकी श्लोक-संख्या चौदह हजार बतायी गयी है। इसमें ब्रह्मा, विष्णु आदि सब देवताओंकी समताका प्रतिपादन किया गया है। ब्रह्म सर्वत्र सम है। गुणोंके तारतम्यसे उसमें विषमता प्रतीत होती है। ऐसा श्रुतिका कथन है। जो विद्वान् ईर्ष्या-द्वेष छोड़कर सुवर्ण, वस्त्र, माला, आभूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और भक्ष्य-



भोज्य आदि नैवेद्योंसे विधिपूर्वक वाचक और पुस्तककी पूजा करता है और भविष्यपुराणकी पुस्तकको लिखकर गुड्धेनुके साथ पौषकी पूर्णिमाको उसका दान करता है तथा जो जितेन्द्रिय, निराहार अथवा एक समय हविष्यभोजी एवं एकाग्रचित्त होकर इस पुराणका पाठ और श्रवण करता है, वह भयंकर पातकोंसे मुक्त होकर ब्रह्मलोकमें चला जाता है। जो भविष्यपुराणकी इस अनुक्रमणिकाका पाठ अथवा श्रवण करता है, वह भी भोग एवं मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

ब्रह्मवैवर्तपुराणका परिचय तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दान आदिकी महिमा

ब्रह्माजी कहते हैं—वत्स! सुनो, अब मैं तुम्हें दसवें पुराण ब्रह्मवैवर्तका परिचय देता हूँ, जो वेदमार्गका साक्षात्कार करानेवाला है। जहाँ देवर्षि नारदको उनके प्रार्थना करनेपर भगवान् सावर्णिने सम्पूर्ण पुराणोक्त विषयका उपदेश किया था। यह पुराण अलौकिक एवं धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका सारभूत है। इसके पाठ और श्रवणसे भगवान् विष्णु और शिवमें प्रीति होती है। उन दोनोंमें अभेद-सिद्धिके लिये इस उत्तम ब्रह्मवैवर्तपुराणका उपदेश किया गया है। मैंने रथन्तर कल्पका जो वृत्तान्त बताया था, उसीको वेदवेत्ता व्यासने संक्षिप्त करके शतकोटिपुराणमें कहा है। व्यासजीने ब्रह्मवैवर्तपुराणके चार भाग किये हैं, जिनके नाम हैं—‘ब्रह्मखण्ड’, ‘प्रकृतिखण्ड’ ‘गणेशखण्ड’ और ‘श्रीकृष्णखण्ड’। इन चारों खण्डोंसे युक्त यह पुराण अठारह हजार श्लोकोंका बताया गया है। उसमें सूत और महर्षियोंके संवादमें पुराणका उपक्रम है। उसमें पहला प्रकरण सृष्टिवर्णनका है। फिर नारदके और मेरे महान् विवादका वर्णन है, जिसमें दोनोंका पराभव हुआ था। मरीचे! फिर नारदका शिवलोकगमन और भगवान् शिवसे नारदमुनिको ज्ञानकी प्राप्तिका कथन है। तदनन्तर शिवजीके कहनेसे ज्ञानलाभके लिये सावर्णिके सिद्धसेवित आश्रममें, जो परम पुण्यमय तथा त्रिलोकीको आश्र्यमें डालनेवाला था, नारदजीके जानेकी बात कही गयी है। यह ‘ब्रह्मखण्ड’ है, जो श्रवण करनेपर सब पापोंका नाश कर देता है। तदनन्तर नारद-सावर्णि-संवादका वर्णन है। इसमें श्रीकृष्णका माहात्म्य तथा नाना प्रकारके आख्यान और कथाएँ हैं। प्रकृतिकी अंशभूत कलाओंके माहात्म्य और पूजन आदिका विस्तारपूर्वक यथावत् वर्णन किया गया है। यह ‘प्रकृतिखण्ड’ है, जो श्रवण

करनेपर ऐश्वर्य प्रदान करता है। तदनन्तर गणेशजन्मके विषयमें प्रश्न किया गया है। पार्वतीजीके द्वारा पुण्यक नामक महाब्रतके अनुष्ठानकी चर्चा है। तत्पश्चात् कार्तिकेय और गणेशजीकी उत्पत्ति कही गयी है। इसके बाद कार्तवीर्य अर्जुन और जमदग्निनन्दन परशुरामजीके अद्भुत चरित्रका वर्णन है, फिर गणेश और परशुरामजीमें जो महान् विवाद हुआ था, उसका उल्लेख किया गया है। यह ‘गणेशखण्ड’ है, जो सब विघ्नोंका नाश करनेवाला है। तदनन्तर श्रीकृष्णजन्मके विषयमें प्रश्न और उनके जन्मकी अद्भुत कथा है। फिर गोकुलमें गमन तथा पूतना आदिके वधकी आश्र्यमयी कथा है। तत्पश्चात् श्रीकृष्णकी बाल्यावस्था और कुमारावस्थाकी विविध लीलाओंका वर्णन है। उसके बाद शरत्पूर्णिमाकी रात्रिमें गोपसुन्दरियोंके साथ श्रीकृष्णकी रासक्रीड़ाका वर्णन है। रहस्यमें श्रीराधाके साथ उनकी क्रीड़ाका बहुत विस्तारके साथ प्रतिपादन किया गया है। तत्पश्चात् अक्लूरजीके साथ श्रीकृष्णके मथुरागमनकी कथा है। कंस आदिका वध हो जानेके बाद श्रीकृष्णके द्विजोचित संस्कारका उल्लेख है। फिर काश्य गोत्रोत्पन्न सान्दीपनि मुनिसे उनके विद्याग्रहणकी अद्भुत कथा है। तदनन्तर कालयवनका वध, श्रीकृष्णका द्वारकागमन तथा वहाँ उनके द्वारा की हुई नरकासुर आदिके वधकी अद्भुत लीलाओंका वर्णन है। ब्रह्मन्! यह ‘श्रीकृष्णखण्ड’ है, जो पढ़ने, सुनने, ध्यान करने, पूजा करने अथवा नमस्कार करनेपर भी मनुष्योंके संसार-दुःखका खण्डन करनेवाला है। व्यासजीके द्वारा कहे हुए इस प्राचीन और अलौकिक ब्रह्मवैवर्तपुराणका पाठ अथवा श्रवण करनेवाला मनुष्य ज्ञान-विज्ञानका नाश करनेवाले भयंकर संसार-सागरसे मुक्त हो जाता है। जो इस पुराणको लिखकर

माघकी पूर्णिमाको प्रत्यक्ष धेनुके साथ इसका दान करता है, वह अज्ञानबन्धनसे मुक्त हो ब्रह्मलोकको प्राप्त कर लेता है। जो इस

विषय-सूचीको पढ़ता अथवा सुनता है, वह भी भगवान् श्रीकृष्णकी कृपासे मनोवाज्जित फल पा लेता है।

लिङ्गपुराणका परिचय तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दानका फल

झहाजी कहते हैं—बेटा! सुनो, अब मैं लिङ्गपुराणका वर्णन करता हूँ, जो पढ़ने तथा सुननेवालोंको भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाला है। भगवान् शङ्करने अग्निलिङ्गमें स्थित होकर अग्नि-कल्पकी कथाका आश्रय ले धर्म आदिकी सिद्धिके लिये मुझे जिस लिङ्गपुराणका उपदेश किया था, उसीको व्यासदेवने दो भागोंमें बाँटकर कहा है। अनेक प्रकारके उपाख्यानोंसे विचित्र प्रतीत होनेवाला यह लिङ्गपुराण ग्यारह हजार श्लोकोंसे युक्त है और भगवान् शिवकी महिमाका सूचक है। यह सब पुराणोंमें श्रेष्ठ तथा त्रिलोकीका सारभूत है। पुराणके आरम्भमें पहले प्रश्न है। फिर संक्षेपसे सृष्टिका वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् योगाख्यान और कल्पाख्यानका वर्णन है। इसके बाद लिङ्गके प्रादुर्भाव और उसकी पूजाकी विधि बतायी गयी है। फिर सनत्कुमार और शैल आदिका पवित्र संवाद है। तदनन्तर दाधिचि-चरित्र, युगधर्मनिरूपण, भुवन-कोश-वर्णन तथा सूर्यवंश और चन्द्रवंशका परिचय है। तत्पश्चात् विस्तारपूर्वक सृष्टिवर्णन, त्रिपुरकी कथा, लिङ्गप्रतिष्ठा तथा पशुपाश-विमोक्षका प्रसङ्ग है। भगवान् शिवके व्रत, सदाचार-निरूपण, प्रायश्चित्त, अरिष्ट, काशी तथा श्रीशैलका वर्णन है। फिर अन्धकासुरकी कथा, वाराह-चरित्र, नृसिंह-चरित्र और जलन्धर-वधकी कथा है। तदनन्तर शिवसहस्रनाम, दक्ष-यज्ञ-विष्वंस, मदन-

दहन और पार्वतीके पाणिग्रहणकी कथा है। तत्पश्चात् विनायककी कथा, भगवान् शिवके ताण्डव-नृत्य-प्रसङ्ग तथा उपमन्युकी कथा है। ये सब विषय लिङ्गपुराणके पूर्वभागमें कहे गये हैं। मुने! इसके बाद विष्णुके माहात्म्यका कथन, अम्बरीषकी कथा तथा सनत्कुमार और नन्दीश्वरका संवाद है। फिर शिव-माहात्म्यके साथ स्नान, याग आदिका वर्णन, सूर्यपूजाकी विधि तथा मुक्तिदायिनी शिवपूजाका वर्णन है। तदनन्तर अनेक प्रकारके दान कहे गये हैं। फिर श्राद्ध-प्रकरण और प्रतिष्ठातन्त्रका वर्णन है। तत्पश्चात् अघोरकीर्तन, ब्रजेश्वरी महाविद्या, गायत्री-महिमा, त्र्यम्बक-माहात्म्य और पुराणश्रवणके फलका वर्णन है। इस प्रकार मैंने तुम्हें व्यासरचित लिङ्गपुराणके उत्तरभागका परिचय दिया है। यह भगवान् रुद्रके माहात्म्यका सूचक है। जो इस पुराणको लिखकर फाल्गुनकी पूर्णिमाको तिलधेनुके साथ ब्राह्मणको भक्तिपूर्वक इसका दान करता है। वह जरा-मृत्युरहित शिवसायुज्य प्राप्त कर लेता है। जो मनुष्य पापनाशक लिङ्गपुराणका पाठ या श्रवण करता है, वह इस लोकमें उत्तम भोग भोगकर अन्तमें शिवलोकको चला जाता है। वे दोनों भगवान् शिवके भक्त हैं और गिरिजावल्लभ शिवके प्रसादसे इहलोक और परलोकका यथावत् उपभोग करते हैं, इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

वाराहपुराणका लक्षण तथा उसके पाठ, श्रवण एवं दानका माहात्म्य

श्रीब्रह्माजी कहते हैं—वत्स ! सुनो, अब मैं वाराहपुराणका वर्णन करता हूँ। यह दो भागोंसे युक्त है और सनातन भगवान् विष्णुके माहात्म्यका सूचक है। पूर्वकालमें मेरे द्वारा निर्मित जो मानव-कल्पका प्रसङ्ग है, उसीको विद्वानोंमें श्रेष्ठ साक्षात् नारायणस्वरूप वेदव्यासने भूतलपर इस पुराणमें लिपिबद्ध किया है। वाराहपुराणकी श्लोक-संख्या चौबीस हजार है। इसमें सबसे पहले पृथ्वी और वाराहभगवान्का शुभ संवाद है। तदनन्तर आदि सत्ययुगके वृत्तान्तमें रैभ्यका चरित्र है। फिर दुर्जयके चरित्र और श्राद्धकल्पका वर्णन है। तत्पश्चात् महातपाका आख्यान, गौरीकी उत्पत्ति, विनायक, नागगण, सेनानी (कार्तिकेय), आदित्यगण, देवी, धनद तथा वृषका आख्यान है। उसके बाद सत्यतपाके व्रतकी कथा दी गयी है। तदनन्तर अगस्त्यगीता तथा रुद्रगीता कही गयी है। महिषासुरके विघ्नसमें ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र—तीनोंकी शक्तियोंका माहात्म्य प्रकट किया गया है। तत्पश्चात् पर्वाध्याय, श्वेतोपाख्यान, गोप्रदानिक इत्यादि सत्ययुगका वृत्तान्त मैंने प्रथम भागमें दिखाया है। फिर भगवद्भर्ममें व्रत और तीर्थोंकी कथाएँ हैं। बत्तीस अपराधोंका शारीरिक प्रायश्चित्त बताया गया है। प्रायः सभी तीर्थोंके पृथक्-पृथक् माहात्म्यका वर्णन है। मथुराकी महिमा विशेषरूपसे दी गयी है। उसके बाद श्राद्ध आदिकी विधि है। तदनन्तर ऋषिपुत्रके प्रसङ्गसे यमलोकका वर्णन, कर्मविपाक एवं विष्णुव्रतका निरूपण है। गोकर्णके पापनाशक माहात्म्यका भी वर्णन किया गया है। इस प्रकार वाराहपुराणका यह पूर्वभाग कहा गया है। उत्तर

भागमें पुलस्त्य और पुरुराजके संवादमें विस्तारके साथ सब तीर्थोंके माहात्म्यका पृथक्-पृथक् वर्णन है। फिर सम्पूर्ण धर्मोंकी व्याख्या और पुष्ट्र नामक पुण्य-पर्वका भी वर्णन है। इस प्रकार मैंने तुम्हें पापनाशक वाराहपुराणका परिचय दिया है। यह पढ़ने और सुननेवालोंके मनमें भगवद्भक्ति बढ़ानेवाला है। जो मनुष्य इस पुराणको लिखकर और सोनेकी गरुड़-प्रतिमा बनवाकर तिलधेनुके साथ चैत्रकी पूर्णिमाके दिन भक्तिपूर्वक ब्राह्मणको



दान देता है, वह देवताओं तथा महर्षियोंसे वन्दित होकर भगवान् विष्णुका धाम प्राप्त कर लेता है। जो वाराहपुराणकी इस अनुक्रमणिकाका श्रवण या पाठ करता है, वह भी भगवान् विष्णुके चरणोंमें संसार-बन्धनका नाश करनेवाली भक्ति प्राप्त कर लेता है।

स्कन्दपुराणकी विषयानुक्रमणिका, इस पुराणके पाठ, श्रवण एवं दानका माहात्म्य

श्रीब्रह्माजी कहते हैं—वत्स ! सुनो, अब मैं स्कन्दपुराणका वर्णन करता हूँ, जिसके पद-पदमें साक्षात् महादेवजी स्थित हैं। मैंने शतकोटि पुराणमें जो शिवकी महिमाका वर्णन किया है, उसके सारभूत अर्थका व्यासजीने स्कन्दपुराणमें वर्णन किया है। उसमें सात खण्ड किये गये हैं। सब पापोंका नाश करनेवाला स्कन्दपुराण इक्यासी हजार श्लोकोंसे युक्त है। जो इसका श्रवण अथवा पाठ करता है, वह साक्षात् भगवान् शिव ही है। इसमें स्कन्दके द्वारा उन शैव धर्मोंका प्रतिपादन किया गया है, जो तत्पुरुष कल्पमें प्रचलित थे। वे सब प्रकारकी सिद्धि प्रदान करनेवाले हैं। इसके पहले खण्डका नाम 'माहेश्वरखण्ड' है, जो सब पापोंका नाश करनेवाला है। इसमें बारह हजारसे कुछ कम श्लोक हैं। यह परम पवित्र तथा विशाल कथाओंसे परिपूर्ण है। इसमें सैकड़ों उत्तम चरित्र हैं तथा यह खण्ड स्कन्दस्वामीके माहात्म्यका सूचक है। माहेश्वरखण्डके भीतर केदारमाहात्म्यमें पुराणका आरम्भ हुआ है। इसमें पहले दक्षयज्ञकी कथा है। इसके बाद शिवलिङ्ग-पूजनका फल बताया गया है। इसके बाद समुद्र-मन्थनकी कथा और देवराज इन्द्रके चरित्रका वर्णन है। फिर पार्वतीका उपाख्यान और उनके विवाहका प्रसङ्ग है। तत्पश्चात् कुमारस्कन्दकी उत्पत्ति और तारकासुरके साथ उनके युद्धका वर्णन है। फिर पाशुपतका उपाख्यान और चण्डकी कथा है। फिर दूतकी नियुक्तिका कथन और नारदजीके साथ समागमका वृत्तान्त है। उसके बाद कुमार-माहात्म्यके प्रसङ्गमें पञ्चतीर्थकी कथा है। धर्मवर्मा राजाकी कथा तथा नदियों और समुद्रका वर्णन है। तदनन्तर इन्द्रद्युम्न और नाड़ीजङ्घकी कथा है। फिर महीनदीके प्रादुर्भाव और दमनककी कथा है। तत्पश्चात् मही-सागर-संगम और कुमारेशका

वृत्तान्त है। इसके बाद नाना प्रकारके उपाख्यानोंसहित तारकयुद्ध और तारकासुरके वधका वर्णन है। फिर पञ्चलिङ्ग-स्थापनकी कथा आयी है। तदनन्तर द्वीपोंका पुण्यमय वर्णन, ऊपरके लोकोंकी स्थिति, ब्रह्माण्डकी स्थिति और उसका मान तथा वर्करेशकी कथा है। महाकालका प्रादुर्भाव और उसकी परम अद्भुत कथा है। फिर वासुदेवका माहात्म्य और कोटितीर्थका वर्णन है। तदनन्तर गुप्तक्षेत्रमें नाना तीर्थोंका आख्यान कहा गया है। पाण्डवोंकी पुण्यमयी कथा और बर्बरीककी सहायतासे महाविद्याके साधनका प्रसङ्ग है। तत्पश्चात् तीर्थयात्राकी समाप्ति है। तदनन्तर अरुणाचलका माहात्म्य तथा सनक और ब्रह्माजीका संवाद है। गौरीकी तपस्याका वर्णन तथा वहाँके भिन्न-भिन्न तीर्थोंका वर्णन है। महिषासुरकी कथा और उसके वधका परम अद्भुत प्रसङ्ग कहा गया है। द्रोणाचल पर्वतपर भगवान् शिवका नित्य निवास बताया गया है। इस प्रकार स्कन्दपुराणमें यह अद्भुत 'माहेश्वरखण्ड' कहा गया है।

दूसरा 'वैष्णवखण्ड' है। अब उसके आख्यानोंका मुझसे श्रवण करो। पहले भूमि-वाराह-संवादका वर्णन है, जिसमें वेङ्गटाचलका पापनाशक माहात्म्य बताया गया है। फिर कमलाकी पवित्र कथा और श्रीनिवासकी स्थितिका वर्णन है। तदनन्तर कुम्हारकी कथा तथा सुवर्णमुखरी नदीके माहात्म्यका वर्णन है। फिर अनेक उपाख्यानोंसे युक्त भरद्वाजकी अद्भुत कथा है। इसके बाद मतङ्ग और अञ्जनके पापनाशक संवादका वर्णन है। फिर उत्कलप्रदेशके पुरुषोत्तमक्षेत्रका माहात्म्य कहा गया है। तत्पश्चात् मार्कण्डेयजीकी कथा, राजा अम्बरीषका वृत्तान्त, इन्द्रद्युम्नका आख्यान और विद्यापतिकी शुभ कथाका उल्लेख है। ब्रह्मन् ! इसके बाद जैमिनि और नारदका आख्यान है,



फिर नीलकण्ठ और नृसिंहका वर्णन है। तदनन्तर अश्वमेध यज्ञकी कथा और राजाका ब्रह्मलोकमें गमन कहा गया है। तत्पश्चात् रथयात्रा-विधि और जप तथा स्नानकी विधि कही गयी है। फिर दक्षिणामूर्तिका उपाख्यान और गुण्डचाकी कथा है। रथ-रक्षाकी विधि और भगवान्‌के शयनोत्सवका वर्णन है। इसके बाद राजा श्वेतका उपाख्यान कहा गया है। फिर पृथु-उत्सवका निरूपण है। भगवान्‌के दोलोत्सव तथा सांवत्सरिक-ब्रतका वर्णन है। तदनन्तर उद्घालकके नियोगसे भगवान् विष्णुकी निष्काम पूजाका प्रतिपादन किया गया है। फिर मोक्ष-साधन बताकर नाना प्रकारके योगोंका निरूपण किया गया है। तत्पश्चात् दशावतारकी कथा और स्नान आदिका वर्णन है। इसके बाद बदरिकाश्रम-तीर्थका पापनाशक माहात्म्य बताया गया है। उस प्रसङ्गमें अग्नि आदि तीर्थों और गरुड़-शिलाकी महिमा है। वहाँ भगवान्‌के निवासका कारण बताया गया है। फिर कपालमोचन-तीर्थ, पञ्चधारा-तीर्थ और मेरुसंस्थानकी कथा है। तदनन्तर कार्तिकमासका माहात्म्य प्रारम्भ होता है। उसमें मदनालसके माहात्म्यका वर्णन है। धूप्रकेशका उपाख्यान और

कार्तिकमासमें प्रत्येक दिनके कृत्यका वर्णन है। अन्तमें भीष्मपञ्चकब्रतका प्रतिपादन किया गया है, जो भोग और मोक्ष देनेवाला है।

तत्पश्चात् मार्गशीषके माहात्म्यमें स्नानकी विधि बतायी गयी है। फिर पुण्ड्रादि-कीर्तन और मालाधारणका पुण्य कहा गया है। भगवान्‌को पञ्चामृतसे स्नान करानेका तथा घण्टा बजाने आदिका पुण्य फल बताया गया है। नाना प्रकारके फूलोंसे भगवत्पूजनका फल और तुलसीदलका माहात्म्य कहा गया है। भगवान्‌को नैवेद्य लगानेकी महिमा, एकादशीके दिन कीर्तन, अखण्ड एकादशी-ब्रत रहनेका पुण्य और एकादशीकी रातमें जागरण करनेका फल बताया गया है। इसके बाद मत्स्योत्सवका विधान और नाममाहात्म्यका कीर्तन है। भगवान्‌के ध्यान आदिका पुण्य तथा मथुराका माहात्म्य बताया गया है। मथुरातीर्थका उत्तम माहात्म्य अलग कहा गया है और वहाँके बारह वर्णोंकी महिमाका वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् इस पुराणमें श्रीमद्भागवतके उत्तम माहात्म्यका प्रतिपादन किया गया है। इस प्रसङ्गमें वज्रनाभ और शाण्डिल्यके संवादका उल्लेख किया गया है, जो ब्रजकी आन्तरिक लीलाओंका प्रकाशक है। तदनन्तर माघमासमें स्नान, दान और जप करनेका माहात्म्य बताया गया है, जो नाना प्रकारके आख्यानोंसे युक्त है। माघ-माहात्म्यका दस अध्यायोंमें प्रतिपादन किया गया है। तत्पश्चात् वैशाख-माहात्म्यमें शाय्यादान आदिका फल कहा गया है। फिर जलदानकी विधि, कामोपाख्यान, शुकदेवचरित, व्याधकी अद्भुत कथा और अक्षयतृतीया आदिके पुण्यका विशेषरूपसे वर्णन है। इसके बाद अयोध्या-माहात्म्य प्रारम्भ करके उसमें चक्रतीर्थ, ब्रह्मतीर्थ, ऋष्णमोचनतीर्थ, पापमोचनतीर्थ, सहस्रधारातीर्थ, स्वर्गद्वारातीर्थ, चन्द्रहरितीर्थ, धर्महरितीर्थ, स्वर्णवृष्टितीर्थकी कथा और तिलोदा-सरयू-संगमका वर्णन है। तदनन्तर सीताकुण्ड, गुसहरितीर्थ, सरयू-घाघरा-संगम,

गोप्रचारतीर्थ, क्षीरोदकतीर्थ और बृहस्पतिकुण्ड आदि पाँच तीर्थोंकी महिमाका प्रतिपादन किया गया है। तत्पश्चात् घोषार्क आदि तेरह तीर्थोंका वर्णन है। फिर गयाकूपके सर्वपापनाशक माहात्म्यका कथन है। तदनन्तर माण्डव्याश्रम आदि, अजित आदि तथा मानस आदि तीर्थोंका वर्णन किया गया है। इस प्रकार यह दूसरा 'वैष्णवखण्ड' कहा गया है।

मरीचे ! इसके बाद परम पुण्यदायक 'ब्रह्म-खण्ड' का वर्णन सुनो, जिसमें पहले सेतुमाहात्म्य प्रारम्भ करके वहाँके स्थान और दर्शनका फल बताया गया है। फिर गालवकी तपस्या तथा राक्षसकी कथा है। तत्पश्चात् देवीपत्तनमें चक्रतीर्थ आदिकी महिमा, वेतालतीर्थका माहात्म्य और पापनाश आदिका वर्णन है। मङ्गल आदि तीर्थोंका माहात्म्य, ब्रह्मकुण्ड आदिका वर्णन, हनुमत्कुण्डकी महिमा तथा अगस्त्यतीर्थके फलका कथन है। रामतीर्थ आदिका वर्णन, लक्ष्मीतीर्थका निरूपण, शङ्ख आदि तीर्थोंकी महिमा तथा साध्यामृत आदि तीर्थोंके प्रभावका वर्णन है। इसके बाद धनुषकोटि आदिका माहात्म्य, क्षीरकुण्ड आदिकी महिमा तथा गायत्री आदि तीर्थोंके माहात्म्यका वर्णन है। फिर रामेश्वरकी महिमा, तत्त्वज्ञानका उपदेश तथा सेतु-यात्रा-विधिका वर्णन है, जो मनुष्योंको मोक्ष देनेवाला है। तत्पश्चात् धर्मारण्यका उत्तम माहात्म्य बताया गया है, जिसमें भगवान् शिवने स्कन्दको तत्त्वका उपदेश किया है। फिर धर्मारण्यका प्रादुर्भाव, उसके पुण्यका वर्णन, कर्मसिद्धिका उपाख्यान तथा ऋषिवंशका निरूपण है। तदनन्तर वहाँ अस्सरा-सम्बन्धी मुख्य तीर्थोंका माहात्म्य कहा गया है। इसके बाद वर्णश्रम-धर्मके तत्त्वका निरूपण किया गया है। तदनन्तर देवस्थान-विभाग और बकुलादित्यकी शुभ कथाका वर्णन है। वहाँ छत्रानन्दा, शास्त्रा, श्रीमाता, मतद्विनी और पुण्यदा—ये पाँच देवियाँ सदा

स्थित बतायी गयी हैं। इसके बाद वहाँ इन्द्रेश्वर आदिकी महिमा तथा द्वारका आदिका निरूपण है। लोहासुरकी कथा, गङ्गाकूपका वर्णन, श्रीरामचन्द्रजीका चरित्र तथा सत्यमन्दिरका वर्णन है। फिर जीर्णोद्धारकी महिमाका कथन, आसन-दान, जातिभेद-वर्णन तथा स्मृति-धर्मका निरूपण है। तत्पश्चात् अनेक उपाख्यानोंसे युक्त वैष्णव-धर्मोंका वर्णन है। तदनन्तर पुण्यमय चातुर्मास्यका माहात्म्य प्रारम्भ करके उसमें पालन करने योग्य सब धर्मोंका निरूपण किया गया है। फिर दानकी प्रशंसा, व्रतकी महिमा, तपस्या और पूजाका माहात्म्य तथा सच्छूदका कथन है। तदनन्तर प्रकृतियोंके भेदका वर्णन, शालग्रामके तत्त्वका निरूपण, तारकासुरके वधका उपाय, गरुड़-पूजनकी महिमा, विष्णुका शाप, वृक्षभावकी प्रासि, पार्वतीका अनुनय, भगवान् शिवका ताण्डवनृत्य, राम-नामकी महिमाका निरूपण, शिव-लिङ्गपतनकी कथा, पैजवन शूद्रकी कथा, पार्वतीजीका जन्म और चरित्र, तारकासुरका अद्भुत वध, प्रणवके ऐश्वर्यका कथन, तारकासुरके चरित्रका पुनर्वर्णन, दक्ष-यज्ञकी समाप्ति, द्वादशाक्षरमन्त्रका निरूपण, ज्ञानयोगका वर्णन, द्वादश सूर्योंकी महिमा तथा चातुर्मास्य-माहात्म्यके श्रवण आदिके पुण्यका वर्णन किया गया है, जो मनुष्योंकी लिये कल्याणदायक है। तदनन्तर ब्राह्मोत्तर भागमें भगवान् शिवकी अद्भुत महिमा, पञ्चाक्षर-मन्त्रके माहात्म्य तथा गोकर्णकी महिमाका वर्णन है। तत्पश्चात् शिवरात्रिकी महिमा, प्रदोषव्रतका वर्णन तथा सोमवार-व्रतकी महिमा एवं सीमन्तिनीकी कथा है। फिर भद्रायुकी उत्पत्तिका वर्णन, सदाचार-निरूपण, शिवकवचका उपदेश, भद्रायुके विवाहका वर्णन, भद्रायुकी महिमा, भस्म-माहात्म्य-वर्णन, शबरका उपाख्यान, उमा-महेश्वर-व्रतकी महिमा, उद्धारका माहात्म्य, स्त्राद्यायके पुण्य तथा ब्रह्माखण्डके श्रवण आदिकी पुण्यमयी महिमाका वर्णन है। इस प्रकार यह

‘ब्रह्मखण्ड’ बताया गया है।

इसके बाद चौथा परम उत्तम ‘काशीखण्ड’ है, जिसमें विन्ध्यपर्वत और नारदजीके संवादका वर्णन है। फिर सत्यलोकका प्रभाव, अगस्त्यके आश्रममें देवताओंका आगमन, पतिव्रताचरित्र तथा तीर्थयात्राकी प्रशंसा है। तदनन्तर सप्तपुरीका वर्णन, संयमिनीका निरूपण, शिवशर्माको सूर्य, इन्द्र और अग्निके लोककी प्राप्तिका उल्लेख है। अग्निका प्रादुर्भाव, निर्वृति तथा वरुणकी उत्पत्ति, गन्धवती, अलकापुरी और ईशानपुरीके उद्धवका वर्णन, चन्द्र, सूर्य, बुध, मङ्गल तथा बृहस्पतिके लोक, ब्रह्मलोक, विष्णुलोक, ध्रुवलोक और तपोलोकका वर्णन है। तत्पश्चात् ध्रुवलोककी पुण्यमयी कथा, सत्यलोकका निरीक्षण, स्कन्द-अगस्त्य-संवाद, मणिकर्णिकाकी उत्पत्ति, गङ्गाजीका प्राकट्य, गङ्गासहस्रनाम, काशीपुरीकी प्रशंसा, भैरवका आविर्भाव, दण्डपाणि तथा ज्ञानवापीका उद्धव, कलावतीकी कथा, सदाचारनिरूपण, ब्रह्मचारीका आख्यान, स्त्रीके लक्षण, कर्तव्याकर्तव्यका निर्देश, अविमुक्तेश्वरका वर्णन, गृहस्थ योगीके धर्म, कालज्ञान, दिवोदासकी पुण्यमयी कथा, काशीका वर्णन, भूतलपर मायागणपतिका प्रादुर्भाव, विष्णुमायाका प्रपञ्च, दिवोदासका मोक्ष, पञ्चनदीर्थकी उत्पत्ति, विन्दुमाधवका प्राकट्य, तदनन्तर काशीका वैष्णवतीर्थ कहलाना; फिर शूलधारी शङ्करका काशीमें आगमन, जैगीषव्यके साथ संवाद, महेश्वरका ज्येष्ठेश्वर नाम होना, क्षेत्राख्यान, कन्दुकेश्वर और व्याघ्रेश्वरका प्रादुर्भाव, शैलेश्वर, रत्नेश्वर तथा कृतिवासेश्वरका प्राकट्य, देवताओंका अधिष्ठान, दुर्गासुरका पराक्रम, दुर्गाजीकी विजय, ॐकारेश्वरका वर्णन, पुनः ॐकारका माहात्म्य, त्रिलोचनका प्रादुर्भाव, केदारेश्वरका आख्यान, धर्मेश्वरकी कथा, विष्णुभुजाका प्राकट्य, वीरेश्वरका आख्यान, गङ्गा-माहात्म्यकीर्तन, विश्वकर्मेश्वरकी महिमा, दक्षयज्ञोद्धव, सतीश और अमृतेश आदिका माहात्म्य, परशरनन्दन

व्यासजीकी भुजाओंका स्तम्भन, क्षेत्रके तीर्थोंका समुदाय, मुक्तिमण्डपकी कथा, विश्वनाथजीका वैभव, तदनन्तर काशीकी यात्रा और परिक्रमाका वर्णन—ये ‘काशीखण्ड’के विषय हैं।

तदनन्तर पाँचवें ‘अवन्तीखण्ड’का वर्णन सुनो। इसमें महाकालवनका आख्यान, ब्रह्मजीके मस्तकका छेदन, प्रायश्चित्तविधि, अग्निकी उत्पत्ति, देवताओंका आगमन, देवदीक्षा, नाना प्रकारके पातकोंका नाश करनेवाला शिवस्तोत्र, कपालमोचनकी कथा, महाकालवनकी स्थिति, कलकलेश्वरका सर्वपापनाशक तीर्थ, अप्सराकुण्ड, पुण्यदायक रुद्रसरोवर, कुटुम्बेश, विद्याधरेश्वर तथा मर्कटेश्वर तीर्थका वर्णन है। तत्पश्चात् स्वर्गद्वार, चतुःसिन्धुतीर्थ, शङ्करवापिका, शङ्करादित्य, पापनाशक गन्धवतीतीर्थ, दशाश्वमेधिकतीर्थ, अनंशतीर्थ, हरिसिद्धिप्रदतीर्थ, पिशाचादियात्रा, हनुमदीश्वर, कवचेश्वर, महाकालेश्वरयात्रा, वल्मीकेश्वरतीर्थ, शुक्रेश्वर और नक्षत्रेश्वरतीर्थका उपाख्यान, कुशस्थलीकी परिक्रमा, अक्षूरतीर्थ, एकपादतीर्थ, चन्द्राक्षैभवतीर्थ, करभेशतीर्थ, लडुकेश आदि तीर्थ, मार्कण्डेश्वरतीर्थ, यज्ञवापीतीर्थ, सोमेश्वरतीर्थ, नरकान्तकतीर्थ, केदारेश्वर, रामेश्वर, सौभाग्येश्वर तथा नरादित्यतीर्थ, केशवादित्य, शक्तिभेदतीर्थ, स्वर्णसारमुखतीर्थ, ॐकारेश्वर आदि तीर्थ, अन्धकासुरके द्वारा स्तुति-कीर्तन, कालवनमें शिवलिङ्गोंकी संख्या तथा स्वर्णशृङ्गेश्वरतीर्थका वर्णन है। फिर कुशस्थली, अवन्ती एवं उज्जियनीपुरीके पद्मावती, कुमुद्वती, अमरावती, विशाला तथा प्रतिकल्प—इन नामोंका उल्लेख है। इनका उच्चारण ज्वरकी शान्ति करनेवाला है। तत्पश्चात् शिप्रामें स्नान आदिका फल, नागोद्वारा की हुई भगवान् शिवकी स्तुति, हिरण्याक्षवधकी कथा, सुन्दरकुण्डकतीर्थ, नीलगङ्गा, पुष्करतीर्थ, विन्ध्यवासनतीर्थ, पुरुषोत्तमतीर्थ, अघनाशनतीर्थ, गोमतीतीर्थ, वामनकुण्ड, विष्णुसहस्रनाम, वीरेश्वर सरोवर, कालभैरवतीर्थ, नागपञ्चमीकी महिमा,

नृसिंहजयन्ती, कुटुम्बेश्वरयात्रा, देवसाधककीर्तन, कर्कराज नामक तीर्थ, विष्णेशादितीर्थ और सुरोहनतीर्थका वर्णन किया गया है। रुद्रकुण्ड आदिमें अनेक तीर्थोंका निरूपण किया गया है। तदनन्तर आठ तीर्थोंकी पुण्यमयी यात्राका वर्णन है। इसके बाद नर्मदानदीका माहात्म्य बतलाया गया है, जिसमें धर्मपुत्र युधिष्ठिरके वैराग्य तथा मार्कण्डेयजीके साथ उनके समागमका वर्णन है।

तदनन्तर पहलेके प्रलयकालीन अनुभवका वर्णन, अमृत-कीर्तन, कल्प-कल्पमें नर्मदाके पृथक्-पृथक् नामोंका वर्णन, नर्मदाजीका आर्षस्तोत्र, कालरात्रिकी कथा, महादेवजीकी स्तुति, पृथक् कल्पकी अद्भुत कथा, विशल्याकी कथा, जालेश्वरकी कथा, गौरीव्रतका वर्णन, त्रिपुरदाहकी कथा, देहपातविधि, कावेरीसङ्गम, दारुतीर्थ, ब्रह्मावर्त, ईश्वरकथा, अग्नितीर्थ, सूर्यतीर्थ, मेघनादादितीर्थ, दारुकतीर्थ, देवतीर्थ, नर्मदेशतीर्थ, कपिलातीर्थ, करञ्जकतीर्थ, कुण्डलेशतीर्थ, पिप्पलादतीर्थ, विमलेश्वरतीर्थ, शूलभेदनतीर्थ, शचीहरणकी कथा, अभ्रकका वध, शूलभेदोद्भवतीर्थ, पृथक्-पृथक् दानधर्म, दीर्घतपाकी कथा, ऋष्यशृङ्गका उपाख्यान, चित्रसेनकी पुण्यमयी कथा, काशिराजका मोक्ष, देवशिलाकी कथा, शबरीतीर्थ, पवित्र व्याधोपाख्यान, पुष्करणीतीर्थ, अर्कतीर्थ, आदित्येश्वरतीर्थ, शक्रतीर्थ, करोटिकतीर्थ, कुमारेश्वरतीर्थ, अगस्त्येश्वरतीर्थ, आनन्देश्वरतीर्थ, मातृतीर्थ, लोकेश्वर, धनदेश्वर, मङ्गलेश्वर तथा कामजतीर्थ, नागेश्वरतीर्थ, गोपारतीर्थ, गौतमतीर्थ, शङ्खचूडतीर्थ, नारदेश्वरतीर्थ, नन्दिकेश्वरतीर्थ, वरणेश्वरतीर्थ, दधिस्कन्दादितीर्थ, हनुमदीश्वरतीर्थ, रामेश्वर आदि तीर्थ, सोमेश्वर, पिङ्गलेश्वर, ऋणमोक्षेश्वर, कपिलेश्वर, पूतिकेश्वर, जलेश्य, चण्डार्क, यमतीर्थ, कालहोडीश्वर, नन्दिकेश्वर, नारायणेश्वर, कोटीश्वर, व्यासतीर्थ, प्रभासतीर्थ, नागेश्वरतीर्थ, संकर्षणतीर्थ, प्रश्रयेश्वरतीर्थ, पुण्यमय एरण्डी-सङ्गमतीर्थ, सुवर्णशिलतीर्थ, करञ्जतीर्थ,

कामरतीर्थ, भाण्डीरतीर्थ, रोहिणीभवतीर्थ, चक्रतीर्थ, धौतपापतीर्थ, आङ्गिरसतीर्थ, कोटितीर्थ, अन्योन्यतीर्थ, अङ्गरतीर्थ, त्रिलोचनतीर्थ, इन्द्रेशतीर्थ, कम्बुकेशतीर्थ, सोमेशतीर्थ, कोहलेशतीर्थ, नर्मदातीर्थ, अर्कतीर्थ, आग्नेयतीर्थ, उत्तम भार्गवेश्वरतीर्थ, ब्राह्मतीर्थ, दैवतीर्थ, मार्गेशतीर्थ, आदिवाराहेश्वर, रामेश्वरतीर्थ, सिद्धेश्वरतीर्थ, अहल्यातीर्थ, कंकटेश्वरतीर्थ, शक्रतीर्थ, सोमतीर्थ, नादेशतीर्थ, कोयेशतीर्थ, रुक्मणीसम्भवतीर्थ, योजनेशतीर्थ, वराहेशतीर्थ, द्वादशीतीर्थ, शिवतीर्थ, सिद्धेश्वरतीर्थ, मङ्गलेश्वरतीर्थ, लिङ्गवाराहतीर्थ, कुण्डेशतीर्थ, श्वेतवाराहतीर्थ, भार्गवेशतीर्थ, रवीश्वरतीर्थ, शुक्ल आदि तीर्थ, हुङ्कारस्वामितीर्थ, सङ्गमेश्वरतीर्थ, नहुषेश्वरतीर्थ, मोक्षणतीर्थ, पञ्चगोपदतीर्थ, नागशावकतीर्थ, सिद्धेशतीर्थ, मार्कण्डेयतीर्थ, अक्रूरतीर्थ, कामोदतीर्थ, शूलारोपतीर्थ, माण्डव्यतीर्थ, गोपकेश्वरतीर्थ, कपिलेश्वरतीर्थ, पिङ्गलेश्वरतीर्थ, भूतेश्वरतीर्थ, गङ्गातीर्थ, गौतमतीर्थ, अश्वमेधतीर्थ, भृगुक्छतीर्थ, पापनाशक केदारेशतीर्थ, कलकलेश (या कनखलेश) तीर्थ, जालेशतीर्थ, शालग्रामतीर्थ, वराहतीर्थ, चन्द्रप्रभासतीर्थ, आदित्यतीर्थ, श्रीपदतीर्थ, हंसतीर्थ, मूलस्थानतीर्थ, शूलेश्वरतीर्थ, उग्रतीर्थ, चित्रदैवकतीर्थ, शिखीश्वरतीर्थ, कोटितीर्थ, दशकन्यतीर्थ, सुवर्णतीर्थ, ऋणमोचनतीर्थ, भारभूतितीर्थ, पुष्टमुण्डत तीर्थ, आमलेशतीर्थ, कपालेशतीर्थ, शृङ्गरण्डीतीर्थ, कोटितीर्थ और लोटलेशतीर्थ आदिका वर्णन है। इसके बाद फलस्तुति कही गयी है। तदनन्तर कृमिजङ्गलमाहात्म्यके प्रसङ्गमें रोहिताश्वकी कथा, धुन्धुमारका उपाख्यान, उसके वधका उपाय, धुन्धु-वध, चित्रवहका उद्भव, उसकी महिमा, चण्डीशका प्रभाव, रतीश्वर, केदारेश्वर, लक्षतीर्थ, विष्णुपदी तीर्थ, मुखारतीर्थ, च्यवनान्धतीर्थ, ब्रह्मसरेवर, चक्रतीर्थ, ललितोपाख्यान, बहुगोमुखतीर्थ, रुद्रावर्ततीर्थ, मार्कण्डेयतीर्थ, पापनाशकतीर्थ, श्रवणेशतीर्थ, शुद्धपटतीर्थ, देवान्धुप्रेततीर्थ,

जिहोदतीर्थका प्राकट्य, शिवोद्देदतीर्थ और फल-श्रुति—इन विषयोंका वर्णन है। यह सब 'अवन्ती-खण्ड'का वर्णन किया गया है, जो श्रोताओंके पापका नाश करनेवाला है।

इसके अनन्तर 'नागरखण्ड'का परिचय दिया जाता है। इसमें लिङ्गोत्पत्तिका वर्णन, हरिक्षन्द्रकी शुभ कथा, विश्वामित्रका माहात्म्य, त्रिशंकुका स्वर्गलोकमें गमन, हाटकेश्वर-माहात्म्यके प्रसङ्गमें वृत्रासुरका वध, नागबिल, शङ्खतीर्थ, अचलेश्वरका वर्णन, चमत्कारपुरकी चमत्कारपूर्ण कथा, गयशीर्षतीर्थ, बालशतीर्थ, बालमण्डतीर्थ, मृगतीर्थ, विष्णुपाद, गोकर्ण, युगरूप, समाश्रय तथा सिद्धेश्वरतीर्थ, नागसरोवर, ससर्षितीर्थ, अगस्त्यतीर्थ, भ्रूणगर्त, नलेशतीर्थ, भीष्मतीर्थ, वैदूरमरकततीर्थ, शर्मिष्ठातीर्थ, सोमनाथतीर्थ, दुर्गतीर्थ, आनन्दकेश्वरतीर्थ, जमदग्निवधकी कथा, परशुरामद्वारा क्षत्रियोंके संहारका कथानक, रामहृद, नागपुरतीर्थ, षड्लिङ्गतीर्थ, यज्ञभूतीर्थ, मुण्डीरादितीर्थ, त्रिकार्कतीर्थ, सतीपरिणयतीर्थ, रुद्रशीर्षतीर्थ, योगेशतीर्थ, बालखिल्यतीर्थ, गरुडतीर्थ, लक्ष्मीजीका शाप, ससविंशतीर्थ, सोमप्रासादतीर्थ, अम्बावृद्धतीर्थ, अग्नितीर्थ, ब्रह्मकुण्ड, गोमुखतीर्थ, लोहयष्टितीर्थ, अजापालेश्वरीदेवी, शनैश्वरतीर्थ, राजवापी, रामेश्वर, लक्ष्मणेश्वर, कुशेश्वर, लवेश्वरलिङ्ग, सर्वोत्तमोत्तम अड़सठ तीर्थोंके नाम, दमयन्तीपुत्र त्रिजातकी कथा, रेवती अम्बाकी स्थापना, भक्तिकातीर्थका आविर्भाव, क्षेमद्वारीदेवी, केदारक्षेत्रका प्रादुर्भाव, शुक्लतीर्थ, मुखारकतीर्थ, सत्यसन्ध्येश्वरका आख्यान, कण्ठोत्पलाकी कथा, अटेश्वरतीर्थ, याज्ञवल्क्यतीर्थ, गौरीगणेशतीर्थ, वास्तुपदतीर्थका आख्यान, अजागृहादेवीकी कथा, सौभाग्यान्धतीर्थ, शूलेश्वरलिङ्ग, धर्मराजकी कथा, मिष्टान्न देवेश्वरका आख्यान, तीन गणपतिका आविर्भाव, जावालिचरित, मकरेशकी कथा, कालेश्वरी और अन्धकका आख्यान, आप्सरसकुण्ड, पुष्पादित्यतीर्थ, रोहिताश्वतीर्थ, नागर

ब्राह्मणोंकी उत्पत्तिका कथन, भार्गवचरित, विश्वामित्रचरित्र, सारस्वततीर्थ, पिप्पलादतीर्थ, कंसारीश्वरतीर्थ, पिण्डकतीर्थ, ब्रह्माका यज्ञानुष्ठान, सावित्रीकी कथा, रैवतका आख्यान, भर्तृयज्ञका वृत्तान्त, मुख्य तीर्थोंका निरीक्षण, कुरुक्षेत्र, हाटकेश्वरक्षेत्र और प्रभासक्षेत्र—इन तीनों क्षेत्रोंका वर्णन, पुष्करण्य, नैमिषारण्य तथा धर्मारण्य—इन तीन अरण्योंका वर्णन, वाराणसी, द्वारका तथा अवन्ती—इन तीन पुरियोंका वर्णन, वृन्दावन, खाण्डववन और अद्वैतवन—इन तीन वनोंका उल्लेख, कल्पग्राम, शालग्राम तथा नन्दिग्राम—इन तीन उत्तम ग्रामोंका प्रतिपादन, असितीर्थ, शुक्लतीर्थ और पितृतीर्थ—इन तीन तीर्थोंका निरूपण, श्रीशैल, अर्बुदगिरि तथा रैवतगिरि—इन तीन पर्वतोंका वर्णन, गङ्गा, नर्मदा और सरस्वती—इन तीन नदियोंका नाम-उच्चारण, इनमेंसे एक-एकका कीर्तन साढ़े तीन करोड़ तीर्थोंका फल देनेवाला है—इत्यादि विषयोंका प्रतिपादन किया गया है। कूपिकातीर्थ, शङ्खतीर्थ, चामरतीर्थ और बालमण्डनतीर्थ—इन चारोंका उच्चारण, हाटकेश्वरक्षेत्रका फल देनेवाला है। इन सब तीर्थोंके वर्णनके पश्चात् साम्बादित्यकी महिमा, श्राद्धकल्पका निरूपण, युधिष्ठिर-भीष्म-संवाद, अन्धक (अन्धकारपूर्ण नरक), जलशायीका माहात्म्य, चातुर्मास्य-ब्रत, अशून्यशयननव्रत, मङ्गणेशकी महिमा, शिवरात्रिका माहात्म्य, तुलापुरुषदान, पृथ्वीदान, बालकेश्वर, कपालमोचनेश्वर, पापपिण्ड, सासलिङ्ग, युगमान आदिका वर्णन, निष्बेश्वर और शाकम्भरीकी कथा, ग्यारह रुद्रोंके प्राकट्यका वर्णन, दानमाहात्म्य तथा द्वादशादित्यका कीर्तन—इन सब विषयोंका प्रतिपादन किया गया है। इस प्रकार यह 'नागरखण्ड' कहा गया।

अब 'प्रभासखण्ड'का वर्णन किया जाता है, जिसमें सोमनाथ, विश्वनाथ, महान् पुण्यप्रद अर्कस्थल तथा सिद्धेश्वर आदिका आख्यान पृथक्-पृथक् कहा गया है। तत्पश्चात् अग्नितीर्थ, कपर्दीश्वर,

उत्तम गतिदायक केदारेश्वर, भीमेश्वर, भैरवेश्वर, चण्डीश्वर, भास्करेश्वर, चन्द्रेश्वर, मङ्गलेश्वर, बुधेश्वर, बृहस्पतीश्वर, शुक्रेश्वर, शनैश्वरेश्वर, राह्येश्वर, केत्तीश्वर आदि शिवविग्रहोंका वर्णन है। तत्पश्चात् सिद्धेश्वर आदि अन्य पाँच रुद्रोंकी स्थितिका वर्णन किया गया है। वरारोहा, अजापाला, मङ्गला, ललितेश्वरी, लक्ष्मीश्वर, बाडवेश्वर, उर्वीश्वर, कामेश्वर, गौरीश्वर, वरुणेश्वर, दुर्वासेश्वर, गणेश्वर, कुमारेश्वर, चण्डकल्प, शकुलीश्वर, कोटीश्वर तथा बालरूपधारी ब्रह्मा आदिकी उत्तम कथा है। तत्पश्चात् नरकेश्वर, संवर्तेश्वर, निधीश्वर, बलभद्रेश्वर, गङ्गा, गणपति, जाम्बवती नदी, पाण्डुकूप, शतमेध, लक्ष्मेध और कोटिमेधकी श्रेष्ठ कथा है। दुर्वासादित्य, घटस्थान, हिरण्यासङ्गम, नागरादित्य, श्रीकृष्ण, संकर्षण, समुद्र, कुमारी, क्षेत्रपाल, ब्रह्मेश्वर, पिङ्गलासङ्गमेश्वर, शङ्करादित्य, घटेश्वर, ऋषितीर्थ, नन्दादित्य, त्रितकूप, सोमपान, पर्णादित्य और न्यृद्गुमतीकी भी अद्भुत कथाका उल्लेख है। तदनन्तर बाराहस्वामीका वृत्तान्त, छायालिङ्ग, गुल्फ, कनकनन्दा, कुन्ती और गङ्गेशकी कथा है। फिर चमसोद्देश्वर, विदुरेश्वर, त्रिलोकेश्वर, मङ्गणेश्वर, त्रैपुरेश्वर तथा षण्डतीर्थकी कथा है। फिर सूर्यप्राची, त्रीक्षण और उमानाथकी कथा है। पृथिव्युद्धार, शूलस्थल, च्यवनादित्य और च्यवनेश्वरका वृत्तान्त है। उसके बाद अजापालेश्वर, बालादित्य, कुबेरस्थल तथा ऋषितोयाकी पुण्यमयी कथा एवं शृगालेश्वरका माहात्म्यकीर्तन है। फिर नारदादित्यकी कथा, नारायणके स्वरूपका निरूपण, तस्कुण्डकी महिमा तथा मूलचण्डीश्वरका वर्णन है। चतुर्मुख गणेश और कलम्बेश्वरकी कथा, गोपालस्वामी, बकुलस्वामी और मरुदण्डकी भी कथा है। तत्पश्चात् क्षेमादित्य, उन्नतविघ्नेश, तलस्वामी, कालमेध, रुक्मिणी, दुर्वासेश्वर, भद्रेश्वर, शङ्कावर्त, मोक्षतीर्थ, गोव्यदतीर्थ, अच्युतगृह, जालेश्वर, ॐकारेश्वर, चण्डीश्वर, आशापुरनिवासी विघ्नेश और कलाकुण्डकी अद्भुत

कथा है। कपिलेश्वर और जरदूव शिवकी भी विचित्र कथाका उल्लेख है। नलेश्वर, कर्कोटकेश्वर, हाटकेश्वर, नारदेश्वर, यन्त्रभूषा, दुर्गाकूट और गणेशकी कथाका भी उल्लेख है। सुपर्णभैरवी और एलाभैरवी तथा भल्लतीर्थकी भी महिमा है। तत्पश्चात् कर्दमालतीर्थ और गुप्त सोमनाथका वर्णन है। इसके बाद बहुस्वर्णेश्वर, शृङ्गेश्वर, कोटीश्वर, मार्कण्डेश्वर, कोटीश तथा दामोदरगृहकी माहात्म्य-कथा है। तदनन्तर स्वर्णरेखा, ब्रह्मकुण्ड, कुन्तीश्वर, भीमेश्वर, मृगीकुण्ड तथा सर्वस्व—ये वस्त्रापथक्षेत्रमें कहे गये हैं। तत्पश्चात् दुर्गाभल्लेश, गङ्गेश, रैवतेश, अर्बुदेश्वर, अचलेश्वर, नागतीर्थ, वसिष्ठाश्रम, भद्रकर्ण, त्रिनेत्र, केदार, तीर्थागमन, कोटीश्वर, रूपतीर्थ और हृषीकेश—ये अद्भुत माहात्म्यकथाएँ हैं। इसके बाद सिद्धेश्वर, शुक्रेश्वर, मणिकर्णीश्वर, पङ्गतीर्थ, यमतीर्थ और वाराहीतीर्थ आदिके माहात्म्यका वर्णन है। फिर चन्द्रप्रभास, पिण्डोदक, श्रीमाता, शुक्लतीर्थ, कात्यायनीदेवी, पिण्डारकतीर्थ, कनखलतीर्थ, चक्रतीर्थ, मानुषतीर्थ, कपिलाग्नितीर्थ तथा रक्तानुबन्ध आदि माहात्म्यकथाका उल्लेख है। तदनन्तर गणेशतीर्थ, पार्थेश्वरतीर्थ और उज्ज्वलतीर्थकी यात्रामें चण्डीस्थान, नागोद्दूव, शिवकुण्ड, महेशतीर्थ तथा कामेश्वरका माहात्म्यवर्णन और मार्कण्डेयजीकी उत्पत्तिकथा है। फिर उद्धलकेश और सिद्धेशके समीपवर्ती तीर्थोंकी पृथक्-पृथक् कथाएँ हैं। इसके बाद श्रीदेवमाताकी उत्पत्ति, व्यास और गौतमतीर्थकी कथा, कुलसन्तारतीर्थका माहात्म्य तथा रामतीर्थ एवं कोटितीर्थकी महिमा है। चन्द्रोद्देश्वरीर्थ, ईशानतीर्थ और ब्रह्मस्थानकी उत्पत्तिका अद्भुत माहात्म्य तथा त्रिपुर्कर, रुद्रहृद और गुहेश्वरकी शुभ कथा है। तत्पश्चात् अविमुक्तकी महिमा, उमामहेश्वरका माहात्म्य, महौजाका प्रभाव और जम्बूतीर्थका महत्त्व कहा गया है। गङ्गाधर और मिश्रकी कथा एवं फलसुतिका भी वर्णन है। तदनन्तर द्वारकामाहात्म्यके प्रसङ्गमें चन्द्रशर्माकी

कथा है। जागरण और पूजन आदिका आख्यान, एकादशीब्रतकी महिमा, महाद्वादशीका आख्यान, प्रह्लाद और ऋषियोंका समागम, दुर्वासाका उपाख्यान, यात्राकी प्रारम्भिक विधि, गोमतीकी उत्पत्तिकथा, उसमें स्नान आदिका फल, चक्रतीर्थका माहात्म्य, गोमतीसागर-सङ्घम, सनकादि कुण्डका आख्यान, नृगतीर्थकी कथा, गोप्रचारकी पुण्यमयी कथा, गोपियोंका द्वारकामें आगमन, गोपीसरोवरका आख्यान, ब्रह्मतीर्थ आदिका कीर्तन, पाँच नदियोंके आगमनकी कथा, अनेक प्रकारके उपाख्यान, शिवलिङ्ग, गदातीर्थ और श्रीकृष्णपूजन आदिका वर्णन है। त्रिविध-मूर्तिका वर्णन, दुर्वासा और श्रीकृष्ण-संवाद, कुश दैत्यके वधकी कथा, विशेष, पूजनका फल, गोमती और द्वारकामें तीर्थोंके आगमनका वर्णन, श्रीकृष्णमन्दिरका दर्शन, द्वारकतीमें अभिषेक, वहाँ तीर्थोंके निवासकी कथा और द्वारकाके पुण्यका वर्णन है। ब्रह्मणो! इस प्रकार सर्वोत्तम कथाओंसे युक्त शिवमाहात्म्य-प्रतिपादक स्कन्दपुराणमें यह सातवाँ प्रभासखण्ड बताया

गया है। जो इसे लिखकर सुवर्णमय त्रिशूलके साथ माघकी पूर्णिमाके दिन सत्कारपूर्वक ब्राह्मणको



दान देता है, वह सदा भगवान् शिवके लोकमें आनन्दका भागी होता है।

वामनपुराणकी विषय-सूची और उस पुराणके श्रवण, पठन एवं दानका माहात्म्य

ब्रह्माजी कहते हैं—वत्स! सुनो, अब मैं त्रिविक्रमचरित्रसे युक्त वामनपुराणका वर्णन करता हूँ। इसकी श्लोक-संख्या दस हजार है। इसमें कूर्म कल्पके वृत्तान्तका वर्णन है और त्रिवर्णकी कथा है। यह पुराण दो भागोंसे युक्त है और वक्ता-श्रोता दोनोंके लिये शुभकारक है। इसमें पहले पुराणके विषयमें प्रश्न है। फिर ब्रह्माजीके शिरश्छेदकी कथा, कपालमोचनका आख्यान और दक्ष-यज्ञ-विध्वंसका वर्णन है। तत्पश्चात् भगवान् हरकी कालरूप संज्ञा, मदनदहन, प्रह्लादनारायणयुद्ध, देवासुर-संग्राम, सुकेशी और सूर्यकी कथा, काम्यव्रतका वर्णन, श्रीदुर्गाचरित्र, तपतीचरित्र, कुरुक्षेत्रवर्णन, अनुपम सत्या-माहात्म्य, पार्वती-जन्मकी कथा, तपतीका विवाह, गौरी-उपाख्यान,

कौशिकी-उपाख्यान, कुमारचरित, अन्धकवधकी कथा, साध्योपाख्यान, जाबालिचरित, अरजाकी अद्भुत कथा, अन्धकासुर और भगवान् शङ्करका युद्ध, अन्धकको गणत्वकी प्राप्ति, मरुदूणोंके जन्मकी कथा, राजा बलिका चरित्र, लक्ष्मी-चरित्र, त्रिविक्रम-चरित्र, प्रह्लादकी तीर्थयात्रा और उसमें अनेक मङ्गलमयी कथाएँ धुन्धु-चरित, प्रेतोपाख्यान, नक्षत्र पुरुषकी कथा, श्रीदामाका चरित्र, त्रिविक्रमचरित्रके अन्तमें ब्रह्माजीके द्वारा कहा हुआ उत्तम स्तोत्र तथा प्रह्लाद और बलिके संवादमें सुतललोकमें श्रीहरिकी प्रशंसाका उल्लेख है। ब्रह्मन्! इस प्रकार मैंने तुम्हें इस पुराणका पूर्वभाग बताया है। अब इस वामनपुराणके उत्तरभागका श्रवण करो। उत्तरभागमें चार संहिताएँ हैं। वे पृथक्-पृथक् एक-एक

सहस्र श्लोकोंसे युक्त हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—माहेश्वरी, भागवती, सौरी और गाणेश्वरी। माहेश्वरी संहितामें श्रीकृष्ण तथा उनके भक्तोंका वर्णन है। भागवती संहितामें जगदम्बाके अवतारकी अद्भुत कथा दी गयी है। 'सौरीसंहिता'में भगवान् सूर्यकी पाप-नाशक महिमाका वर्णन है। 'गाणेश्वरीसंहिता'में भगवान् शिव तथा गणेशजीके चरित्रका वर्णन किया गया है। यह वामन नामका अत्यन्त विचित्र पुराण महर्षि पुलस्त्यने महात्मा नारदजीसे कहा है। फिर नारदजीसे महात्मा व्यासको प्राप्त हुआ है और व्यासजीसे उनके शिष्य रोमहर्षणको मिला

है। रोमहर्षणजी नैमित्तिकरणनिवासी शौनकादि ब्रह्मर्षियोंसे यह पुराण कहेंगे। इस प्रकार यह मङ्गलमय वामनपुराण परम्परासे प्राप्त हुआ है। जो इसका पाठ और श्रवण करते हैं, वे भी परम गतिको प्राप्त होते हैं। जो इस पुराणको लिखकर शरत्कालके विषुव योगमें वेदवेत्ता ब्राह्मणको घृतधेनुके साथ इसका दान करता है, वह अपने पितरोंको नरकसे निकालकर स्वर्गमें पहुँचा देता है और स्वयं भी अनेक प्रकारके भोगोंका उपभोग करके देह-त्यागके पश्चात् वह भगवान् विष्णुके परम पदको प्राप्त कर लेता है।

कूर्मपुराणकी संक्षिप्त विषय-सूची और उसके पाठ, श्रवण तथा दानका माहात्म्य

ब्रह्माजी कहते हैं—वत्स मरीचे! अब तुम कूर्मपुराणका परिचय सुनो। इसमें लक्ष्मी-कल्पका वृत्तान्त है। इस पुराणमें कूर्मरूपधारी दयामय श्रीहरिने इन्द्रद्युम्नके प्रसङ्गसे महर्षियोंको धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका पृथक्-पृथक् माहात्म्य सुनाया है। यह शुभ पुराण चार संहिताओंमें विभक्त है। इसकी श्लोक-संख्या सतरह हजार है। मुने! इसमें अनेक प्रकारकी कथाओंके प्रसङ्गसे मनुष्योंको सद्गति प्रदान करनेवाले नाना प्रकारके ब्राह्मणधर्म बताये गये हैं। इसके पूर्वभागमें पहले पुराणका उपक्रम है। तत्पश्चात् लक्ष्मी और इन्द्रद्युम्नका संवाद, कूर्म और महर्षियोंकी वार्ता, वर्णाश्रमसम्बन्धी आचारका कथन, जगत्की उत्पत्तिका वर्णन, संक्षेपसे काल-संख्याका निरूपण, प्रलयके अन्तमें भगवान्का स्तवन, संक्षेपसे सृष्टिका वर्णन, शङ्करजीका चरित्र, पार्वतीसहस्रनाम, योगनिरूपण, भृगुवंशवर्णन, स्वायम्भुव मनु तथा देवता आदिकी उत्पत्ति, दक्षयज्ञका विध्वंस, दक्षसृष्टि-कथन, कश्यपके वंशका वर्णन, अत्रिवंशका परिचय, श्रीकृष्णका शुभ चरित्र, मार्कण्डेय-श्रीकृष्ण-संवाद, व्यास-पाण्डव-संवाद, युगधर्मका वर्णन, व्यास-जैमिनिकी कथा, काशी एवं प्रयागका

माहात्म्य, तीनों लोकोंका वर्णन और वैदिक शाखाका निरूपण है। इस पुराणके उत्तरभागमें पहले ईश्वरीय-गीता फिर व्यास-गीता है, जो नाना प्रकारके धर्मोंका उपदेश देनेवाली है। इसके सिवा नाना प्रकारके तीर्थोंका पृथक्-पृथक् माहात्म्य बताया गया है। तदनन्तर प्रतिसर्गका वर्णन है। यह 'ब्राह्मीसंहिता' कही गयी है। इसके बाद 'भागवतीसंहिता' के विषयोंका निरूपण है, जिसमें वर्णोंकी पृथक्-पृथक् वृत्ति बतायी गयी है। इसके प्रथम पादमें ब्राह्मणोंकी सदाचाररूप स्थिति बतायी गयी है, जो भोग और सुख बढ़ानेवाली है। द्वितीय पादमें क्षत्रियोंकी वृत्तिका भलीभाँति निरूपण किया गया है, जिसका आश्रय लेकर मनुष्य अपने पापोंका यहीं नाश करके स्वर्गलोकमें चला जाता है। तृतीय पादमें वैश्योंकी चार प्रकारकी वृत्ति कही गयी है, जिसके सम्यक् आचरणसे उत्तम गतिकी प्राप्ति होती है। उसी प्रकार इसके चतुर्थ पादमें शूद्रोंकी वृत्ति कही गयी है, जिससे मनुष्योंके कल्याणकी वृद्धि करनेवाले भगवान् लक्ष्मीपति संतुष्ट होते हैं। तदनन्तर भागवतीसंहिताके पाँचवें पादमें संकरजातियोंकी वृत्ति कही गयी है,

जिसके आचरणसे वह भविष्यमें उत्तम गतिको पा लेता है। मुने! इस प्रकार द्वितीय संहिता पाँच पादोंसे युक्त कही गयी है। इस उत्तरभागमें तीसरी संहिता 'सौरीसंहिता' कहलाती है, जो मनुष्योंका कार्य सिद्ध करनेवाली है। वह सकामभाववाले मनुष्योंको छः प्रकारसे षट्कर्मसिद्धिका बोध कराती है। चौथी 'वैष्णवीसंहिता' है, जो मोक्ष देनेवाली कही गयी है। यह चार पदोंवाली संहिता द्विजातियोंके लिये ब्रह्मस्वरूप है। वे क्रमशः छः, चार, दो और पाँच हजार श्लोकोंकी बतायी गयी हैं। यह कूर्मपुराण धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूप फल देनेवाला है, जो पढ़ने और सुननेवाले मनुष्योंको सर्वोत्तम गति प्रदान करता है। जो मनुष्य इस पुराणको लिखकर अयनारम्भके दिन सोनेकी कच्छपमूर्तिके साथ ब्राह्मणको भक्तिपूर्वक इसका दान करता है, वह परम



गतिको प्राप्त होता है।

मत्स्यपुराणकी विषय-सूची तथा इस पुराणके पाठ, श्रवण और दानका माहात्म्य

ब्रह्माजी कहते हैं—द्विजश्रेष्ठ! अब मैं तुम्हें मत्स्यपुराणका परिचय देता हूँ, जिसमें वेदवेत्ता व्यासजीने इस भूतलपर सात कल्पोंके वृत्तान्तको संक्षिप्त करके कहा है। नृसिंहवर्णन आरम्भ करके चौदह हजार श्लोकोंका मत्स्यपुराण कहा गया है। मनु और मत्स्यका संवाद, ब्रह्माण्डका वर्णन, ब्रह्मा, देवता और असुरोंकी उत्पत्ति, मरुद्धणका प्रादुर्भाव, मदनद्वादशी, लोकपालपूजा, मन्वन्तरवर्णन, राजा पृथुके राज्यका वर्णन, सूर्य और वैवस्वत मनुकी उत्पत्ति, बुध-संगमन, पितृवंशका वर्णन, श्राद्धकाल, पितृतीर्थ-प्रचार, सोमकी उत्पत्ति, सोमवंशका कथन, राजा ययातिका चरित्र, कार्तवीर्य अर्जुनका चरित्र, सृष्टिवंश-वर्णन, भृगुशाप, भगवान् विष्णुका पृथ्वीपर दस बार जन्म (अवतार), पूरुवंशका कीर्तन, हुताशनवंशका वर्णन, पहले क्रियायोग, फिर पुराणकीर्तन, नक्षत्रव्रत, पुरुषव्रत, मार्तण्डशयनव्रत, श्रीकृष्णाष्टमीव्रत, रोहिणीचन्द्र

नामक व्रत, तड़ागविधिकी महिमा, वृक्षोत्सर्ग, सौभाग्यशयनव्रत, अगस्त्यव्रत, अनन्ततृतीयाव्रत, रसकल्पाणिनीव्रत, आनन्दकरीव्रत, सारस्वतव्रत, उपरागाभिषेक (ग्रहणस्नान) विधि, सप्तमीशयनव्रत, भीमद्वादशी, अनङ्गशयनव्रत, अशून्यशयनव्रत, अङ्गारकव्रत, सप्तमीसप्तकव्रत, विशोकद्वादशीव्रत, दस प्रकारका मेरुप्रदान, ग्रहशान्ति, ग्रहस्वरूपकथा, शिवचतुर्दशी, सर्वफलत्याग, रविवारव्रत, संक्रान्तिस्नान, विभूतिद्वादशीव्रत, षष्ठीव्रत-माहात्म्य, स्नानविधिका वर्णन, प्रयागका माहात्म्य, द्वीप और लोकोंका वर्णन, अन्तरिक्षमें गमन, ध्रुवकी महिमा, देवेश्वरोंके भवन, त्रिपुरका प्रकाशन, श्रेष्ठ पितरोंकी महिमा, मन्वन्तर-निर्णय, चारों युगोंकी उत्पत्ति, युगधर्म-निरूपण, वज्राङ्गकी उत्पत्ति, तारकासुरकी उत्पत्ति, तारकासुरका माहात्म्य, ब्रह्मदेवानुकीर्तन, पार्वतीका प्राकट्य, शिवतपोवन, मदनदेहदाह, रतिशोक, गौरी-तपोवन, शिवका गौरीको प्रसन्न करना,

पार्वती तथा ऋषियोंका संवाद, पार्वतीविवाह-मङ्गल, कुमार कार्तिकेयका जन्म, कुमारकी विजय, तारकासुरका भयंकर वध, नृसिंहभगवान्‌की कथा, ब्रह्माजीकी सृष्टि, अन्धकासुरका वध, वाराणसी-माहात्म्य, नर्मदा-माहात्म्य, प्रवर-गणना, पितृगाथाका कीर्तन, उभयमुखी गौका दान, काले मृगचर्मका दान, सावित्रीकी कथा, राजधर्मका वर्णन, नाना प्रकारके उत्पातोंका कथन, ग्रहणान्त, यात्रानिमित्तक वर्णन, स्वप्रमङ्गलकीर्तन, ब्राह्मण और वाराहका माहात्म्य, समुद्र-मन्थन, कालकूटकी शान्ति, देवासुर-संग्राम, वास्तुविद्या, प्रतिमालक्षण, देवमन्दिर-निर्माण, प्रासादलक्षण, मण्डपलक्षण, भविष्य राजाओंका वर्णन, महादानवर्णन तथा कल्पकीर्तन—इन सब विषयोंका इस पुराणमें वर्णन किया गया है। जो पवित्र, कल्याणकारी तथा आयु और कीर्ति बढ़ानेवाले इस पुराणका पाठ अथवा श्रवण करता है, वह भगवान्‌विष्णुके धाममें जाता है। जो इस पुराणको



लिखकर सुवर्णमय मत्स्य और गौके साथ विषुव योगमें ब्राह्मणको सत्कारपूर्वक दान देता है, वह परम पदको प्राप्त होता है।

गरुडपुराणकी विषय-सूची और पुराणके पाठ, श्रवण और दानकी महिमा

ब्रह्माजी कहते हैं—मरीचे! सुनो, अब मैं मङ्गलमय गरुडपुराणका वर्णन करता हूँ। गरुडके पूछनेपर गरुडासन भगवान्‌विष्णुने उन्हें ताक्ष्य-कल्पकी कथासे युक्त उन्नीस हजार श्लोकोंका गरुडपुराण सुनाया था। इसमें पहले पुराणको आरम्भ करनेके लिये प्रश्न किया गया है। फिर संक्षेपसे सृष्टिका वर्णन है। तत्पश्चात् सूर्य आदिके पूजनकी विधि, दीक्षाविधि, श्राद्ध-पूजा, नवव्यूहपूजाकी विधि, वैष्णव-पञ्चार, योगाध्याय, विष्णुसहस्रनामकीर्तन, विष्णुध्यान, सूर्यपूजा, मृत्युञ्जय-पूजा, मालामन्त्र, शिवार्चा, गोपालपूजा, त्रैलोक्यमोहन श्रीधरपूजा, विष्णु-अर्चा, पञ्चतत्त्वार्चा, चक्रार्चा, देवपूजा, न्यास आदि, संध्योपासन, दुर्गार्चन, सुरार्चन, महेश्वर-पूजा, पवित्रारोपण-पूजन, मूर्तिध्यान, वास्तुमान, प्रासादलक्षण, सर्वदेवप्रतिष्ठा, पृथक् पूजाविधि, अष्टाङ्गयोग,

दानधर्म, प्रायश्चित्तविधि, द्वौपेश्वरों और नरकोंका वर्णन, सूर्यव्यूह, ज्यौतिष, सामुद्रिकशास्त्र, स्वरज्ञान, नूतनरत्नपरीक्षा, तीर्थ-माहात्म्य, गयाका उत्तम माहात्म्य, पृथक्-पृथक् विभागपूर्वक मन्वन्तर-वर्णन, पितरोंका उपाख्यान, वर्णधर्म, द्रव्यशुद्धि, समर्पण, श्राद्धकर्म, विनायकपूजा, ग्रहयज्ञ, आश्रम, जननाशौच, प्रेतशुद्धि, नीति-शास्त्र, व्रत-कथा, सूर्यवंश, सोमवंश, श्रीहरिकी अवतारकथा, रामायण, हरिवंश, भारताख्यान, आयुर्वेदनिदान, चिकित्सा, द्रव्यगुणनिरूपण, रोगनाशक विष्णुकवच, गरुडकवच, त्रैपुर मन्त्र, प्रश्नचूडामणि, अश्वायुर्वेदकीर्तन, ओषधियोंके नामका कीर्तन, व्याकरणका ऊहापोह, छन्दःशास्त्र, सदाचार, स्नानविधि, तर्पण, बलिवैश्वदेव, संध्या, पार्वणकर्म, नित्यश्राद्ध, सपिण्डन, धर्मसार, पापोंका प्रायश्चित्त, प्रतिसंक्रम, युगधर्म, कर्मफल, योगशास्त्र, विष्णुभक्ति, श्रीहरिको नमस्कार करनेका

फल, विष्णुमहिमा, नृसिंहस्तोत्र, ज्ञानामृत, गुहाष्टकस्तोत्र, विष्णवर्चनस्तोत्र, वेदान्त और सांख्यका सिद्धान्त, ब्रह्मज्ञान, आत्मानन्द, गीतासार तथा फलवर्णन—ये विषय कहे गये हैं। यह गरुडपुराणका पूर्वखण्ड बताया गया है।

इसीके उत्तरखण्डमें सबसे पहले प्रेतकल्पका वर्णन है। मरीचे! उसमें गरुडके पूछनेपर भगवान् विष्णुने पहले धर्मके महत्वको प्रकट किया है, जो योगियोंकी उत्तम गतिका कारण है। फिर दान आदिका फल तथा और्ध्वदेहिक कर्म बताया गया है। तत्पश्चात् यमलोकके मार्गका वर्णन किया गया है। इसी प्रसंगमें षोडश श्राद्धके फलको सूचित करनेवाले वृत्तान्तका वर्णन है। यमलोकके मार्गसे छूटनेका उपाय और धर्मराजके वैभवका कथन है। इसके बाद प्रेतकी पीड़ाओंका वर्णन, प्रेतचिह्न-निरूपण, प्रेतचरितवर्णन तथा प्रेतत्वप्राप्तिके कारणका उल्लेख किया गया है। तदनन्तर प्रेतकृत्यका विचार, सपिण्डीकरणका कथन, प्रेतत्वसे मुक्त होनेका कथन, मोक्षसाधक दान, आवश्यक एवं उत्तम दान, प्रेतको सुख देनेवाले कार्योंका ऊहापोह, शारीरक निर्देश, यमलोक-वर्णन, प्रेतत्वसे उद्धारका कथन, कर्म करनेके अधिकारीका निर्णय, मृत्युसे पहलेके कर्तव्यका वर्णन, मृत्युसे पीछेके कर्मका निरूपण, मध्यषोडश श्राद्ध, स्वर्गप्राप्ति करानेवाले कर्तव्यका ऊहापोह, सूतककी दिन-संख्या, नारायणबलि कर्म, वृषोत्सर्गका माहात्म्य, निषिद्ध कर्मका त्याग, दुर्मृत्युके अवसरपर किये जानेवाले कर्मका वर्णन, मनुष्योंके कर्मका फल, विष्णुध्यान

और मोक्षके लिये कर्तव्य और अकर्तव्यका विचार, स्वर्गकी प्राप्तिके लिये विहित कर्मका वर्णन, स्वर्गीय सुखका निरूपण, भूलोकवर्णन, नीचेके



सात लोकोंका वर्णन, ऊपरके पाँच लोकोंका वर्णन, ब्रह्माण्डकी स्थितिका निरूपण, ब्रह्माण्डके अनेक चरित्र, ब्रह्म और जीवका निरूपण, आत्यन्तिक प्रलयका वर्णन तथा फलस्तुतिका निरूपण है। यही गरुड नामक पुराण है, जो कीर्तन और श्रवण करनेपर वक्ता और श्रोता मनुष्योंके पापका शमन करके उन्हें भोग और मोक्ष देनेवाला है। जो इस पुराणको लिखकर दो सुवर्णमयी हंसप्रतिमाके साथ विषुव योगमें ब्राह्मणको दान देता है, वह स्वर्गलोकमें जाता है।

ब्रह्माण्डपुराणका परिचय, संक्षिप्त विषय-सूची, पुराण-परम्परा, उसके पाठ, श्रवण एवं दानका फल

ब्रह्माजी कहते हैं—वत्स! सुनो, अब मैं ब्रह्माण्डपुराणका वर्णन करता हूँ जो भविष्यकल्पोंकी कथासे युक्त और बारह हजार श्लोकोंसे परिपूर्ण है। इसके चार पाद हैं। पहला 'प्रक्रियापाद'

दूसरा 'अनुषङ्गपाद', तीसरा 'उपोद्घातपाद' और चौथा 'उपसंहारपाद' है। पहलेके दो पादोंको पूर्वभाग कहा गया है। तृतीय पाद ही मध्यम भाग है और चतुर्थ पाद उत्तरभाग माना गया है।

पूर्वभागके प्रक्रियापादमें पहले कर्तव्यका उपदेश, नैमिषका आख्यान, हिरण्यगर्भकी उत्पत्ति और लोकरचना इत्यादि विषय वर्णित हैं। मानद! यह पूर्वभागका प्रथम पाद (प्रक्रियापाद) है।

अब द्वितीय (अनुषङ्ग) पादका वर्णन सुनो, इसमें कल्प तथा मन्वन्तरका वर्णन है। तत्पश्चात् लोकज्ञान, मानुषी-सृष्टिकथन, रुद्रसृष्टिवर्णन, महादेवविभूति, ऋषिसर्ग, अग्निविजय, कालसद्ब्राव-वर्णन, प्रियव्रत-वंशका परिचय, पृथ्वीका दैर्घ्य और विस्तार, भारतवर्षका वर्णन, फिर अन्य वर्षोंका वर्णन, जम्बू आदि सात द्वीपोंका परिचय, नीचेके लोकों—पातालोंका वर्णन, भूर्भुवः आदि ऊपरके लोकोंका वर्णन, ग्रहोंकी गतिका विश्लेषण, आदित्यव्यूहका कथन, देवग्रहानुकीर्तन, भगवान् शिवके नीलकण्ठ नाम पड़नेका कथन, महादेवजीका वैभव, अमावास्याका वर्णन, युगतत्त्वनिरूपण, यज्ञप्रवर्तन, अन्तिम दो युगोंका कार्य, युगके अनुसार प्रजाका लक्षण, ऋषिप्रवर-वर्णन, वेदव्यसन-वर्णन, स्वायम्भुव मन्वन्तरका निरूपण, शेषमन्वन्तरका कथन, पृथ्वीदोहन, चाक्षुष और वर्तमान मन्वन्तरके सर्गका वर्णन है। इस प्रकार यह पूर्वभागका द्वितीय पाद कहा गया।

अब मध्यभागके उपोद्घातपादमें वर्णित विषय कहे जाते हैं। उसमें पहले सप्तर्षियोंका वर्णन, प्रजापतिवंशका निरूपण, उससे देवता आदिकी उत्पत्ति, तदनन्तर विजयकी अभिलाषा और मरुदण्डोंकी उत्पत्तिका कथन है। कश्यपकी संतानोंका वर्णन, ऋषिवंशनिरूपण, पितृकल्पका कथन, श्राद्धकल्पका वर्णन, वैवस्वतमनुकी उत्पत्ति, उनकी सृष्टि, मनुपुत्रोंका वंश, गान्धर्वनिरूपण, इक्ष्वाकुवंश-वर्णन, महात्मा अत्रिके वंशका कथन, अमावस्युके वंशका वर्णन, रजिका अद्भुत चरित्र, ययातिचरित, यदुवंशनिरूपण, कार्तवीर्यचरित, परशुरामचरित, वृष्णिवंशका वर्णन, सगरकी उत्पत्ति, भार्गवका चरित्र, कार्तवीर्यवधसम्बन्धी कथा, सगरका चरित्र,

भार्गव (और्व)-की कथा, देवासुर-संग्रामकी कथा, कृष्णावतारवर्णन, शुक्राचार्यकृत इन्द्रका पवित्र-स्तोत्र, विष्णुमाहात्म्यकथन, बलिवंश-निरूपण तथा कलियुगमें होनेवाले राजाओंका चरित्र—यह मध्यमभागका तीसरा उपोद्घातपाद है।

अब उत्तरभागके चौथे उपसंहारपादका वर्णन करता हूँ। इसमें वैवस्वत मन्वन्तरकी कथा विस्तारके साथ ज्यों-की-त्यों दी गयी है। जो कथा पहले ही कह दी गयी है, वह यहाँ संक्षेपसे बतायी जाती है। भविष्यमें होनेवाले मनुओंका चरित्र भी कहा गया है। तदनन्तर कल्पके प्रलयका निर्देश किया गया है। कालमान बताया गया है। तत्पश्चात् प्रास लक्षणोंके अनुसार चौदह भुवनोंका वर्णन किया गया है। फिर विपरीत कर्मोंके आचरणसे नरकोंकी प्रासिका कथन है। मनोमयपुरका आख्यान और प्राकृत प्रलयका प्रतिपादन किया गया है। तदनन्तर शिवधामका वर्णन है और सत्त्व आदि गुणोंके सम्बन्धसे जीवोंकी त्रिविधि गतिका निरूपण किया गया है। इसके बाद अन्वय तथा व्यतिरेकदृष्टिसे अनिर्देश्य एवं अतर्क्य परब्रह्म परमात्माके स्वरूपका प्रतिपादन किया गया है। इस प्रकार यह उत्तर-भागसहित उपसंहारपादका वर्णन किया गया है। मरीचे! मैंने तुम्हें चार पादवाले ब्रह्माण्डपुराणका परिचय दिया। यह अठारहवाँ पुराण सारसे भी सारतर वस्तु है। इसकी कहीं भी उपमा नहीं है। मानद! ब्रह्माण्डपुराण जो चार लाख श्लोकमें कहा गया है, वास्तवमें उसीको भावितात्मा मुनियोंके उपदेशक पराशरनन्दन व्यासमुनिने अठारह भागोंमें विभक्त करके पृथक्-पृथक् कहा है। दीनोंपर अनुग्रह करनेवाले धर्मशील मुनियोंने मुझसे सभी पुराण सुनकर उनका सम्पूर्ण लोकोंके लिये प्रकाशन किया है। पूर्वकालमें मैंने वसिष्ठको इस पुराणका उपदेश दिया था। वसिष्ठने शक्तिनन्दन पराशरको और पराशरने जातूकर्ण्यको यह पुराण सुनाया।

फिर जातूकण्यसे वायुदेवके मुखसे प्रकट हुए इस उत्तम पुराणको पाकर व्यासदेवने इसे प्रमाणभूत माना और इस लोकमें इसका प्रचार किया । बत्स ! जो एकाग्रचित्त हो इस पुराणका पाठ एवं श्रवण करता है, वह इस लोकमें सारे पापोंका नाश करके अनामय लोक (रोग-शोकसे रहित परम धाम) -में जाता है । जो इस पुराणको लिखकर सोनेके सिंहासनपर रखता और वस्त्रसे आच्छादित करके ब्राह्मणको दान कर देता है, वह ब्रह्माजीके लोकमें जाता है । इसमें अन्यथा विचार नहीं करना चाहिये । मरीचे ! मैंने तुमसे जो ये अठारह पुराण संक्षेपसे कहे हैं, उन सबको

विस्तारसे सुनना चाहिये । जो श्रेष्ठ मानव इन अठारह पुराणोंको विधिपूर्वक सुनता अथवा कहता है, वह फिर इस संसारमें जन्म नहीं लेता । मैंने इस समय जो कुछ कहा है, यह पुराणोंका सूत्ररूप है । पुराणका फल चाहनेवाले पुरुषको इसका नित्य अनुशीलन करना चाहिये । जो दाम्भिक, पापाचारी, देवता और गुरुकी निन्दा करनेवाला, साधुमहात्माओंसे द्वेष रखनेवाला और शठ है, उसे इस पुराणका उपदेश कदापि नहीं देना चाहिये । जो शान्त, मनोनिग्रहसे युक्त, सेवापरायण, द्वेषरहित तथा पवित्र हो, उस श्रेष्ठ वैष्णव पुरुषको ही इसका उपदेश देना चाहिये ।

बारह मासोंकी प्रतिपदाके व्रत एवं आवश्यक कृत्योंका वर्णन

श्रीनारदजी बोले—प्रभो ! मैंने आपके मुखसे समस्त पुराणोंका सूत्र, जैसा कि परमेष्ठी ब्रह्माजीने महर्षि मरीचिसे कहा था, सुन लिया । महाभाग ! अब मुझसे क्रमशः तिथियोंके विषयमें निरूपण कीजिये, जिससे व्रतका ठीक-ठीक निश्चय हो जाय । जिस मासमें, जिस पुण्य तिथिको जिसने उपासना की है और उसकी पूजा आदिका जो विधान है, वह सब इस समय बताइये ।

श्रीसनातनजीने कहा—नारद ! सुनो, अब मैं तुमसे तिथियोंके पृथक्-पृथक् व्रतका वर्णन करता हूँ । तिथियोंके जो स्वामी हैं, उन्हींके क्रमसे पृथक्-पृथक् व्रत बताया जाता है, जो सम्पूर्ण सिद्धियोंकी प्राप्ति करनेवाला है । चैत्रमासके शुक्ल पक्षमें प्रथम दिन सूर्योदयकालमें ब्रह्माजीने सम्पूर्ण जगत्की सृष्टि की थी, इसलिये वर्ष और वसन्त-ऋतुके आदिमें बलिराज्य-सम्बन्धी तिथि—अमावास्याको जो प्रतिपदा तिथि प्राप्त होती है, उसीमें सदा विद्वानोंको व्रत करना चाहिये ।

प्रतिपदा तिथि पूर्वविद्धा होनेपर ही व्रत आदिमें ग्रहण करने योग्य है । उस दिन महाशान्ति करनी चाहिये । वह समस्त पापोंका नाश, सब प्रकारके उत्पातोंकी शान्ति तथा कलियुगके दुष्कर्मोंका निवारण करनेवाली होती है । साथ ही वह आयु देनेवाली, पुष्टिकारक तथा धन और सौभाग्यको बढ़ानेवाली है । वह परम मङ्गलमयी, शान्ति, पवित्र होनेके साथ ही इहलोक और परलोकमें भी सुख देनेवाली है । उस तिथिको पहले अग्निरूपधारी भगवान् ब्रह्माकी पूजा करनी चाहिये, फिर क्रमशः सब देवताओंकी पृथक्-पृथक् पूजा करे । इस तरह पूजा और ॐकारपूर्वक नमस्कार करके कुश, जल, तिल और अक्षतके साथ सुवर्ण और वस्त्रसहित दक्षिणा लेकर वेदवेता ब्राह्मणको व्रतकी पूर्तिके लिये दान करना चाहिये । इस प्रकार पूजा-विशेषसे 'सौरि' नामक व्रत सम्पन्न होता है । ब्रह्मन् ! यह मनुष्योंको आरोग्य प्रदान करनेवाला है । मुने ! उसी दिन

१. नामके आदिमें 'ॐ' और अन्तमें 'नमः' जोड़कर बोलना ही ॐकारपूर्वक नमस्कार है; यथा—'ॐ ब्रह्मणे नमः' इत्यादि । अथवा 'ॐ नमः' को एक साथ भी बोल सकते हैं; यथा—'ॐ नमो ब्रह्मणे' इत्यादि ।

२. इसी तिथिको विष्णुधर्मोत्तरपुराणमें 'आरोग्यव्रत'का विधान किया गया है और ब्रह्मपुराणमें 'संवत्सराम्भ-

'विद्याव्रत'^१ भी बताया गया है तथा इसी तिथिको श्रीकृष्णने अजातशत्रु युधिष्ठिरको 'तिलकव्रत'^२ करनेका उपदेश दिया है।

तदनन्तर ज्येष्ठ मासके शुक्ल पक्षकी प्रतिपदाको सूर्योदयकालमें देवमन्दिरसम्बन्धी वाटिकामें उगे हुए मनोहर कनेरवृक्षका पूजन करे। कनेरके वृक्षमें लाल डोरा लपेटकर उसपर गन्ध, चन्दन, धूप आदि चढ़ावे, उगे हुए सप्तधान्यके अङ्कुर, नारंगी और बिजौरा नीबू आदिसे उसकी पूजा करे। फिर अक्षत और जलसे उस वृक्षको सींचकर निम्राङ्कित मन्त्रसे क्षमा-प्रार्थना करे—

करवीरवृषावास नमस्ते भानुवल्लभ।

मौलिमण्डन दुर्गादिदेवानां सततं प्रिय॥

(ना० पूर्व० ११०। १०७)

'करवीर! आप धर्मके निवास-स्थान और भगवान् सूर्यके पुत्र हैं। दुर्गादि देवताओंके मस्तकको विभूषित करनेवाले तथा उनके सदैव प्रिय हैं। आपको नमस्कार है।'

तत्पश्चात् 'आ कृष्णोन०^३' इत्यादि वेदोक्त मन्त्रका उच्चारण करके इसी प्रकार क्षमा-प्रार्थना करे। इस प्रकार भक्तिपूर्वक पूजन करके ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे और वृक्षकी परिक्रमा करके अपने घर जाय^४। श्रावण शुक्ला प्रतिपदाको परम उत्तम 'रोटकव्रत'^५ होता है, जो लक्ष्मी और बुद्धिको देनेवाला है तथा धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षका कारण है। ब्रह्मन्! सोमवारयुक्त श्रावण शुक्ल प्रतिपदा या श्रावणके प्रथम सोमवारसे लेकर

साढ़े तीन मासतक यह व्रत किया जाता है। इसमें प्रतिदिन सोमेर्शर भगवान् शिवकी बिल्वपत्रसे पूजा की जाती है। कार्तिक शुक्ला चतुर्दशीतक इस नियमसे पूजा करके उस दिन उपवासपूर्वक रहे और व्रतपरायण पुरुष पूर्णिमाके दिन पुनः भगवान् शङ्करकी पूजा करे। फिर बाँसके पात्रमें सुवर्णसहित पवित्र एवं अधिक वायन, जो देवताकी प्रसन्नताको बढ़ानेवाला हो, लेकर संकल्पपूर्वक ब्राह्मणको दान करे। मुनीश्वर! यह दान धनकी वृद्धि करनेवाला है। भाद्रपदके शुक्ल पक्षकी प्रतिपदाको कोई 'महत्तमव्रत'^६ एवं कोई 'मौनव्रत'^७ बतलाते हैं। इसमें भगवान् शिवकी पूजा की जाती है। उस दिन मौन रहकर नैवेद्य तैयार करे। अड़तालीस फल और पूए एकत्र करके उनमेंसे सोलह तो ब्राह्मणको दे और सोलह देवताको भोग लगावे एवं शेष सोलह अपने उपयोगमें लावे। सुवर्णमयी शिवकी प्रतिमाको विधानवेत्ता पुरुष कलशके ऊपर स्थापित करके उसकी पूजा करे। फिर वह सब कुछ एक धेनुके सहित आचार्यको दान कर दे। ब्रह्मन्! देवदेव महादेवके इस व्रतका चौदह वर्षोंतक पालन करके नाना प्रकारके भोग भोगनेके पश्चात् देहावसान होनेपर शिवलोकमें जाता है।

ब्रह्मन्! आश्विन शुक्ला प्रतिप्रदाको 'अशोक-व्रत'^८का पालन करके मनुष्य शोकरहित तथा धन-धान्यसे सम्पन्न हो जाता है। उसमें नियमपूर्वक रहकर अशोक वृक्षकी पूजा करनी चाहिये।

विधि' दी गयी है।

१. 'विद्याव्रत'की विधि विष्णुधर्मोत्तरमें तथा गरुडपुराणमें भी उपलब्ध होती है।
२. 'तिलकव्रत' के विषयमें विशेष जानकारी भविष्योत्तरपुराणसे हो सकती है।
३. आ कृष्णोन रजसा वर्तमानो निवेशयन्मृतं मर्त्यं च।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥
४. निर्णयग्रन्थोंके अनुसार भविष्योत्तरपुराणमें इसकी विशेष विधि दी गयी है। वहाँ 'करवीरव्रत' के नामसे इसका उल्लेख किया गया है।
५. व्रतराजमें इस व्रतका विस्तारपूर्वक वर्णन है।
- ६-७. महत्तम और मौन—इन दोनों व्रतोंका विशेष विधान स्कन्दपुराणमें उपलब्ध होता है।

बारहवें वर्ष व्रतके अन्तमें अशोक वृक्षकी सुवर्णमयी मूर्ति बनाकर उसे भक्तिपूर्वक गुरुको समर्पित करनेपर मनुष्य शिवलोकमें प्रतिष्ठित होता है। इसी प्रतिपदाको 'नवरात्रव्रत' आरम्भ करे। पूर्वाह्नकालमें कलशस्थापनपूर्वक देवीकी पूजा करे। गेहूँ और जौके बीजसे अंकुर आरोपण करके प्रतिदिन अपनी शक्तिके अनुसार उपवास, अयाचित अथवा एकभुक्त करके रहे और पूजा, पाठ, जप आदि करता रहे। ब्रह्मन्! मार्कण्डेयपुराणमें देवीके जो तीन चरित्र कहे गये हैं, उनका भोग और मोक्षकी अभिलाषा रखनेवाला पुरुष नौ



दिनोंतक पाठ करे। नवरात्रमें भोजन, वस्त्र आदिके द्वारा कुमारीपूजन उत्तम माना गया है। ब्रह्मन्! इस प्रकार व्रतका आचरण करके मनुष्य इस पृथ्वीपर दुर्गाजीकी कृपासे सम्पूर्ण सिद्धियोंका आश्रय हो जाता है।

कार्तिक शुक्ला प्रतिपदाको नवरात्रमें बताये अनुसार नियमोंका पालन करे। विशेषतः अन्नकूट नामक कर्म भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताको बढ़ानेवाला है। उस दिन गोवर्धनपूजनके लिये सब तरहके पाक और सब गोरसोंका संग्रह करके सबको

अन्नकूट करना चाहिये। इससे सब मनोरथोंकी सिद्धि होती है। सायंकालमें गौओंसहित श्रीगोवर्धन पर्वतका पूजन करके जो उसकी प्रदक्षिणा करता है, वह भोग और मोक्ष पाता है।

मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदाको परम उत्तम 'धनव्रत'का पालन करना चाहिये। रातमें भगवान् विष्णुका पूजन और होम करके अग्निदेवकी सुवर्णमयी प्रतिमाको दो लाल वस्त्रोंसे आच्छादित करके ब्राह्मणको दान दे। ऐसा करके मनुष्य इस पृथ्वीपर धन-धान्यसे सम्पन्न होता है। अग्निदेवके द्वारा उसके समस्त पाप दग्ध हो जाते हैं और वह विष्णुलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

पौष शुक्ला प्रतिपदाको भक्तिपूर्वक सूर्यदेवकी पूजा करके एकभुक्तव्रत करनेवाला मनुष्य सूर्यलोकमें जाता है। माघ शुक्ला प्रतिपदाके दिन अग्निस्वरूप साक्षात् महेश्वरकी विधिपूर्वक पूजा करके मनुष्य इस पृथ्वीपर समृद्धिशाली होता है। फाल्गुन शुक्ला प्रतिपदाको धूलिधूसरित अङ्गोंवाले देवदेव दिग्म्बर शिवको सब ओरसे जलद्वारा स्नान करावे। भगवान् महेश्वर इस लौकिक कर्मसे भी संतुष्ट होकर अपना सायुज्य प्रदान करते हैं। फिर भक्तिपूर्वक भलीभाँति पूजित होनेपर वे क्या नहीं दे सकते! वैशाख शुक्ला प्रतिपदाको विश्वव्यापक भगवान् विष्णुकी विधिपूर्वक पूजा करके ब्रती पुरुष ब्राह्मणोंको भोजन करावे। इसी प्रकार आषाढ़ शुक्ला प्रतिपदाको जगद्गुरु ब्रह्मा एवं विष्णुका पूजन करके ब्राह्मण-भोजन करावे। ऐसा करनेसे विष्णुसहित सर्वलोकेश्वरेश्वर ब्रह्माजी अपना सायुज्य प्रदान करते हैं और वह सम्पूर्ण सिद्धियोंको प्राप्त कर लेता है। द्विजश्रेष्ठ! बारह महीनोंकी प्रतिपदा तिथियोंमें होनेवाले जो व्रत तुम्हें बताये गये हैं, वे भोग और मोक्ष देनेवाले हैं। इन सब व्रतोंमें ब्रह्मचर्य-पालनका विधान है। भोजनके लिये सामान्यतः हविष्यान बताया गया है।

बारह मासोंके द्वितीया-सम्बन्धी व्रतों और आवश्यक कृत्योंका निरूपण

सनातनजी कहते हैं—ब्रह्मन्! सुनो, अब मैं तुम्हें द्वितीयाके व्रत बतलाता हूँ, जिनका भक्ति-पूर्वक पालन करके मनुष्य ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठित होता है। चैत्र शुक्ला द्वितीयाको ब्राह्मी शक्तिके साथ ब्रह्माजीका हविष्यान्न तथा गन्ध आदिसे पूजन करके व्रती पुरुष सम्पूर्ण यज्ञोंका फल पाता है और समस्त मनोवाञ्छित कामनाओंको पाकर अन्तमें ब्रह्मपद प्राप्त करता है। विप्रवर! इसी दिन सायंकाल उगे हुए बालचन्द्रमाका^१ पूजन करनेसे भोग और मोक्षरूप फलकी प्राप्ति होती है। अथवा उस दिन भक्तिपूर्वक अश्विनीकुमारोंकी यत्पूर्वक पूजा करके ब्राह्मणको सोने और चाँदीके नेत्रोंका दान करें। इस व्रतमें दही अथवा घीसे प्राणयात्राका निर्वाह किया जाता है। द्विजेन्द्र! बारह वर्षोंतक 'नेत्रव्रत'का अनुष्ठान करके मनुष्य पृथ्वीका अधिपति होता है। वैशाख शुक्ला द्वितीयाको सप्तधान्ययुक्त कलशके ऊपर विष्णुरूपी ब्रह्माका विधिपूर्वक पूजन करके मनुष्य मनोवाञ्छित भोग भोगनेके पश्चात् विष्णुलोक प्राप्त कर लेता है। ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीयाको सम्पूर्ण भुवनोंके अधिपति ब्रह्मस्वरूप भगवान् भास्करका विधिपूर्वक पूजन करके जो भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराता है, वह सूर्यलोकमें जाता है। आषाढ़मासके शुक्ल पक्षमें जो पुष्ट्रनक्षत्रसे युक्त द्वितीया तिथि आती है, उसमें सुभद्रादेवीके साथ श्रीबलराम और श्रीकृष्णको रथपर बिठाकर व्रती पुरुष ब्राह्मण आदिके साथ नगर आदिमें भ्रमण करावे और किसी जलाशयके निकट जाकर बड़ा भारी उत्सव मनावे। तदनन्तर देवविग्रहोंको विधिपूर्वक पुनः मन्दिरमें विराजमान करके उक्त व्रतकी पूर्तिके लिये ब्राह्मणोंको भोजन करावे। श्रावण कृष्ण द्वितीयाको प्रजापति विश्वकर्मा शयन करते हैं।

अतः वह पुण्यमयी तिथि 'अशून्यशयन' नामसे प्रसिद्ध है। उस दिन अपनी शक्तिके साथ शश्यापर शयन किये हुए नारायणस्वरूप चतुर्मुख ब्रह्माजीकी पूजा करके उन जगदीश्वरको प्रणाम करे।

तदनन्तर सायंकालमें चन्द्रमाके लिये अर्घ्यदान भी आवश्यक बताया गया है, जो सम्पूर्ण सिद्धियोंकी प्राप्ति करनेवाला है। भाद्रपद शुक्ला द्वितीयाको इन्द्ररूपधारी जगद्विधाता ब्रह्माकी विधिपूर्वक पूजा करके मनुष्य सम्पूर्ण यज्ञोंका फल पाता है। आश्विन मासके शुक्लपक्षमें जो पुण्यमयी द्वितीया तिथि आती है, उसमें दिया हुआ दान अनन्त फल देनेवाला कहा जाता है। कार्तिक शुक्ला द्वितीयाको पूर्वकालमें यमुनाजीने यमराजको अपने घर भोजन कराया था, इसलिये यह 'यमद्वितीया' कहलाती है। इसमें बहिनके घर भोजन करना पुष्ट्रवर्धक बताया गया है। अतः बहिनको उस दिन वस्त्र और आभूषण देने चाहिये। उस तिथिको जो बहिनके हाथसे इस लोकमें भोजन करता है, वह सर्वोत्तम रत्न, धन और धान्य पाता है। मार्गशीर्ष शुक्ला द्वितीयाको श्राद्धके द्वारा पितरोंका पूजन करनेवाला पुरुष पुत्र-पौत्रोंसहित आरोग्य लाभ करता है। पौष शुक्ला द्वितीयाको गायके सींगमें लिये हुए जलके द्वारा मार्जन करना और संध्याकालमें बालचन्द्रमाका दर्शन करना मनुष्योंके लिये सम्पूर्ण कामनाओंको देनेवाला है। जो हविष्यान्न भोजन करके इन्द्रियसंयमपूर्वक रहकर अर्घ्यदानसे तथा घृतसहित पुष्ट्र आदिसे बालचन्द्रमाका पूजन करता है, वह धर्म, काम और अर्थकी सिद्धि लाभ करता है। माघशुक्ला द्वितीयाको भानुरूपी प्रजापतिकी विधिपूर्वक अर्चना करके लाल फूल और लाल चन्दन आदिसे उनकी पूजा करनी चाहिये। अपनी शक्तिके

१. विष्णुधर्मोत्तरपुराणके अनुसार यह 'बालेन्दुव्रत' कहा गया है।

२. विष्णुधर्ममें भी इस 'नेत्रव्रत' का वर्णन किया गया है।

अनुसार सोनेकी सूर्यमूर्तिका निर्माण कराकर ताँबेके पात्रको गेहूँ या चावलसे भर दे और वह पात्र भक्तिपूर्वक देवताको समर्पित करके मूर्तिसहित उसे ब्राह्मणको दान कर दे। ब्रह्मन्! इस प्रकार व्रतका पालन करनेपर वह मनुष्य उदित हुए साक्षात् सूर्यके समान इस पृथ्वीपर दुर्जय एवं दुर्धर्ष हो जाता है। इस लोकमें श्रेष्ठ कामनाओंका उपभोग करके अन्तमें वह ब्रह्मपदको प्राप्त होता है। फाल्गुन शुक्ला द्वितीयाको श्रेष्ठ द्विज श्वेत एवं सुगन्धित पुष्टोंसे भगवान् शिवकी पूजा करे। फूलोंसे चँदोवा बनाकर सुन्दर पुष्टमय आभूषणोंसे उनका शृङ्खार करे। फिर धूप, दीप, नाना प्रकारके नैवेद्य और आरती आदिके द्वारा भगवान्‌को प्रसन्न करके पृथ्वीपर पड़कर उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम करे। इस प्रकार देवेश्वर शिवकी आराधना करके मनुष्य रोगसे रहित तथा धन-धान्यसे सम्पन्न हो निश्चय ही सौ वर्षोंतक जीवित रहता है। शुक्लपक्षकी द्वितीया तिथियोंमें जो विधान बताया गया है, वही विधिज्ञ पुरुषोंको कृष्णपक्षकी द्वितीयामें भी



करना चाहिये। पृथक्-पृथक् महीनोंमें नाना रूप धारण करनेवाले अग्निदेव ही द्वितीया तिथियोंमें पूजित होते हैं। इसमें भी पूर्ववत् ब्रह्मचर्य आदिका पालन आवश्यक है।

बारह महीनोंके तृतीया-सम्बन्धी व्रतोंका परिचय

सनातनजी कहते हैं—नारद! सुनो, अब मैं तुम्हें तृतीयाके व्रत बतलाता हूँ जिनका विधिपूर्वक पालन करके नारी शीघ्र सौभाग्य लाभ करती है। ब्रह्मन्! वर-प्राप्तिकी इच्छा रखनेवाली कन्या तथा सौभाग्य, पुत्र एवं पतिकी मङ्गलकामना करनेवाली विवाहिता नारी चैत्र शुक्ला तृतीयाको उपवास करके गौरीदेवी तथा भगवान् शङ्करकी सोने, चाँदी, ताँबे या मिट्टीकी प्रतिमा बनावे और उसे गन्ध-पुष्ट, दूर्वाकाण्ड आदि आचारों तथा सुन्दर वस्त्राभूषणोंसे विधिपूर्वक पूजित करके सधवा ब्राह्मण-पत्रियों अथवा सुलक्षणा ब्राह्मण-कन्याओंको सिन्दूर, काजल और वस्त्राभूषणों आदिसे संतुष्ट करे। तदनन्तर उस प्रतिमाको जलाशयमें विसर्जन कर दे। स्त्रियोंको सौभाग्य देनेवाली जैसी गौरीदेवी

हैं, वैसी तीनों लोकोंमें दूसरी कोई शक्ति नहीं है। वैशाख शुक्ल पक्षकी जो तृतीया है, उसे 'अक्षयतृतीया' कहते हैं। वह त्रेतायुगकी आदि तिथि है। उस दिन जो सत्कर्म किया जाता है, उसे वह अक्षय बना देती है। वैशाख शुक्ला तृतीयाको लक्ष्मीसहित जगद्गुरु भगवान् नारायणका पुष्ट, धूप और चन्दन आदिसे पूजन करना चाहिये। अथवा गङ्गाजीके जलमें स्नान करना चाहिये। ऐसा करनेवाला मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है तथा सम्पूर्ण देवताओंसे वन्दित हो भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है।

ज्येष्ठ मासके शुक्ल पक्षकी जो तृतीया है, वह 'रम्भा-तृतीया' के नामसे प्रसिद्ध है। उस दिन सप्तनीक श्रेष्ठ ब्राह्मणकी गन्ध, पुष्ट और वस्त्र

आदिसे विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिये। यह ब्रत धन, पुत्र और धर्मविषयक शुभकारक बुद्धि प्रदान करता है। आषाढ़ शुक्ला तृतीयाको सप्तलीक ब्राह्मणमें लक्ष्मीसहित भगवान् विष्णुकी भावना करके वस्त्र, आभूषण, भोजन और धेनुदानके द्वारा उनकी पूजा करे; फिर प्रिय वचनोंसे उन्हें अधिक संतुष्ट करे। इस प्रकार सौभाग्यकी इच्छासे प्रेमपूर्वक इस ब्रतका पालन करके नारी धन-धान्यसे सम्पन्न हो देवदेव श्रीहरिके प्रसादसे विष्णुलोक प्राप्त कर लेती है। श्रावण शुक्ला तृतीयाको 'स्वर्णगौरीब्रत' का आचरण करना चाहिये। उस दिन स्त्रीको चाहिये कि वह षोडश उपचारोंसे भवानीकी पूजा करे।

भाद्रपद शुक्ला तृतीयाको सौभाग्यवती स्त्री विधिपूर्वक पाद्य-अर्घ्य आदिके द्वारा भक्ति-भावसे पूजा करती हुई 'हरितालिकाब्रत'का पालन करे। सोने, चाँदी, ताँबे, बाँस अथवा मिट्टीके पात्रमें दक्षिणासहित पकवान रखकर फल और वस्त्रके साथ ब्राह्मणको दान करे। इस प्रकार ब्रतका पालन करनेवाली नारी मनोरम भोगोंका उपभोग करके इस ब्रतके प्रभावसे गौरीदेवीकी सहचरी होती है। आश्विन शुक्ला तृतीयाको 'बृहद् गौरीब्रत'-का आचरण करे। नारद! इससे सम्पूर्ण कामनाओंकी सिद्धि होती है।

कार्तिक शुक्ला तृतीयाको 'विष्णु-गौरीब्रत'का

आचरण करे। उसमें भाँति-भाँतिके उपचारोंसे जगद्वन्द्या लक्ष्मीकी पूजा करके सुवासिनी स्त्रीका मङ्गल-द्रव्योंसे पूजन करनेके पश्चात् उसे भोजन करावे और प्रणाम करके विदा करे। मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीयाको मङ्गलमय 'हरगौरीब्रत' करके पूर्वोक्तविधिसे जगद्म्बाका पूजन करे। इस ब्रतके प्रभावसे स्त्री मनोरम भोगोंका उपभोग करके देवीलोकमें जाती और गौरीके साथ आनन्दका अनुभव करती है। पौष शुक्ला तृतीयाको 'ब्रह्मगौरीब्रत'का आचरण करे। द्विजश्रेष्ठ! इसमें भी पूर्वोक्त विधिसे पूजन करके नारी ब्रह्मगौरीके प्रसादसे उनके लोकमें जाकर आनन्द भोगती है। माघ शुक्ला तृतीयाको ब्रत रखकर पूर्वोक्त विधिसे सौभाग्यसुन्दरीकी पूजा करनी चाहिये और उनके लिये नारियलके साथ अर्घ्य देना चाहिये। इससे प्रसन्न होकर ब्रतसे संतुष्ट हुई देवी अपना लोक प्रदान करती है। फललुनके शुक्ल पक्षमें कुलसौख्यदा-तृतीयाका ब्रत होता है, उसमें गन्ध, पुष्प आदिके द्वारा पूजित होनेपर देवी सबके लिये मङ्गलदायिनी होती हैं। मुने! सम्पूर्ण तृतीयाब्रतोंमें देवीपूजा, ब्राह्मणपूजा, दान, होम और विसर्जन—यह साधारण विधि है। इस प्रकार तुम्हें तृतीयाके ब्रत बताये गये हैं, जो भक्तिपूर्वक पालित होनेपर मनकी अभीष्ट वस्तुएँ देते हैं।

बारह महीनोंके चतुर्थी-ब्रतोंकी विधि और उनका माहात्म्य

सनातनजी कहते हैं—ब्रह्मन्! सुनो, अब मैं तुम्हें चतुर्थीके ब्रत बतलाता हूँ, जिनका पालन करके स्त्री और पुरुष मनोवाञ्छित कामनाओंको प्राप्त कर लेते हैं। चैत्रमासकी चतुर्थीको वासुदेवस्वरूप गणेशजीकी भलीभाँति पूजा करके ब्राह्मणको सुवर्ण दक्षिणा देनेसे मनुष्य सम्पूर्ण देवताओंका वन्दनीय हो भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है। वैशाखकी चतुर्थीको संकर्षण गणेशकी पूजा करके विधिज्ञ पुरुष गृहस्थ ब्राह्मणोंको शङ्ख दान करे तो वह

संकर्षणलोकमें जाकर अनेक कल्पोंतक आनन्दका अनुभव करता है। ज्येष्ठ मासकी चतुर्थीको प्रद्युम्नरूपी गणेशका पूजन करके ब्राह्मणसमूहको फल-मूलका दान करनेसे मनुष्य स्वर्गलोक प्राप्त कर लेता है। आषाढ़की चतुर्थीको अनिरुद्धस्वरूप गणेशकी पूजा करके संन्यासियोंको तूँबीका पात्र दान करनेसे मनुष्य मनोवाञ्छित फल पाता है। ज्येष्ठकी चतुर्थीको एक दूसरा परम उत्तम ब्रत होता है, जिसे 'सतीब्रत' कहते हैं। इस ब्रतका पालन करके स्त्री गणेशमाता

पार्वतीके लोकमें जाकर उन्हींके समान आनन्दकी भागिनी होती है। इसी प्रकार आषाढ़की चतुर्थीको एक दूसरा कल्याणकारी व्रत होता है, क्योंकि वह तिथि रथन्तर कल्पका प्रथम दिन है। उस दिन मनुष्य श्रद्धापूत हृदयसे विधिपूर्वक गणेशजीको पूजा करके देवताओंके लिये दुर्लभ फल भी प्राप्त कर लेता है। मुने! श्रावणकी चतुर्थीको चन्द्रोदय होनेपर विधिज्ञोंमें श्रेष्ठ विद्वान् गणेशजीको अर्घ्य प्रदान करे। उस समय गणेशजीके स्वरूपका ध्यान करना चाहिये। ध्यानके पश्चात् आवाहन आदि सम्पूर्ण उपचारोंसे उनका पूजन करे। फिर लड्डूका नैवेद्य अर्पण करे, जो गणेशजीके लिये प्रीतिदायक है। इस प्रकार व्रत पूरा करके स्वयं भी प्रसादस्वरूप लड्डू खाय तथा रातमें गणेशजीका पूजन करके भूमिपर ही सुखपूर्वक सोये। इस



व्रतके प्रभावसे वह लोकमें मनोवाञ्छित कामनाओंको प्राप्त कर लेता है और परलोकमें भी गणेशजीका पद पाता है। तीनों लोकोंमें इसके समान दूसरा

कोई व्रत नहीं है।

तदनन्तर भाद्रपद कृष्णा चतुर्थीको बहुलागणेशका गन्ध, पुष्प, माला और घास आदिके द्वारा यत्पूर्वक पूजन करना चाहिये। तत्पश्चात् परिक्रमा करके सामर्थ्य हो तो दान करे। दानकी शक्ति न हो तो इस बहुला गौको नमस्कार करके विसर्जन करे। इस प्रकार पाँच, दस या सोलह वर्षोंतक इस व्रतका पालन करके उद्यापन करे। उस समय दूध देनेवाली गौका दान करना चाहिये। इस व्रतके प्रभावसे मनुष्य मनोरम भोगोंका उपभोग करके देवताओंद्वारा सत्कृत हो गोलोकधाममें जाता है। भाद्रपद शुक्ल चतुर्थीको सिद्धिविनायक-व्रतका पालन करे। इसमें आवाहन आदि समस्त उपचारोंद्वारा गणेशजीका पूजन करना चाहिये। पहले एकाग्रचित्त होकर सिद्धिविनायकका ध्यान करे। उनके एक दाँत है। कान सूपके समान जान पड़ता है। उनका मुँह हाथीके मुखके समान है। वे चार भुजाओंसे सुशोभित हैं। उन्होंने हाथोंमें पाश और अंकुश धारण कर रखे हैं। उनकी अङ्गकान्ति तपाये हुए सुवर्णके समान देदीप्यमान है। उनके इक्कीस नाम लेकर उन्हें भक्तिपूर्वक इक्कीस पत्ते समर्पित करे। अब तुम उन नामोंको श्रवण करो। 'सुमुखाय नमः' कहकर शमीपत्र, 'गणाधीशाय नमः' से भँगरैयाका पत्ता, 'उमापुत्राय नमः' से बिल्वपत्र, 'गजमुखाय नमः' से दूर्वादल, 'लम्बोदराय नमः' से बेरका पत्ता, 'हरसूनवे नमः' से धतूरका पत्ता, 'शूर्पकण्ठाय नमः' से तुलसीदल, 'वक्रतुण्डाय नमः' से सेमका पत्ता, 'गुहाग्रजाय नमः' से अपामार्गका पत्ता, 'एकदन्ताय नमः' से बनभंटा या भटकटैयाका पत्ता, 'हेरम्बाय नमः' से सिंदूर (सिंदूरचर्व अथवा सिंदूर-वृक्षका पत्ता), 'चतुर्होत्रे नमः' से तेजपात और 'सर्वेश्वराय नमः' से अगस्त्यका पत्ता चढ़ावे*। यह सब

* यहाँ इक्कीस नामोंसे इक्कीस पत्ते अर्पण करनेकी बात लिखकर तेरह नामोंका ही उल्लेख किया गया है। संग्रह ग्रन्थोंमें उपर्युक्त नामोंके अतिरिक्त आठ नाम और आठ प्रकारके पत्तोंका निर्देश इस प्रकार किया गया

गणेशजीकी प्रसन्नताको बढ़ानेवाला है। तत्पश्चात् दो दूर्वादल लेकर गन्ध, पुष्प और अक्षतके साथ गणेशजीपर चढ़ावे। इस प्रकार पूजा करके भक्तिभावसे नैवेद्यरूपमें पाँच लड्डू निवेदन करे। फिर आचमन कराकर नमस्कार और प्रार्थना करके देवताका विसर्जन करे। मुने! सब सामग्रियोंसहित गणेशजीकी स्वर्णमयी प्रतिमा आचार्यको अर्पित करे और ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे। नारद! इस प्रकार पाँच वर्षोंतक भक्तिपूर्वक गणेशजीकी पूजा और उपासना करनेवाला पुरुष इस लोक और परलोकके शुभ भोगोंको प्राप्त कर लेता है। इस चतुर्थीकी रातमें कभी चन्द्रमाकी ओर न देखे। जो देखता है उसे झूठा कलङ्क प्राप्त होता है, इसमें संशय नहीं है। यदि चन्द्रमा दीख जाय तो उस दोषकी शान्तिके लिये इस पौराणिक मन्त्रका पाठ करे—

**सिंहः प्रसेनमवधीत् सिंहो जाम्बवता हतः।
सुकुमारक मा रोदीस्तव होष स्यमन्तकः॥**

(ना० पूर्व० ११३। ३९)

‘सिंहने प्रसेनको मारा और सिंहको जाम्बवान्-ने मार गिराया। सुकुमार बालक! तू रो मत। यह स्यमन्तक अब तेरा ही है।’

आश्विन शुक्ला चतुर्थीको पुरुषसूक्ष्मद्वारा षोडशोपचारसे कपर्दीश विनायककी पूजा करे। कार्तिक कृष्ण चतुर्थीको ‘कर्कचतुर्थी’ (करवा चौथ)–का व्रत बताया गया है। इस व्रतमें केवल स्त्रियोंका ही अधिकार है। इसलिये उसका विधान बताया है—स्त्री स्नान करके वस्त्राभूषणोंसे विभूषित हो गणेशजीकी पूजा करे। उनके आगे पकवानसे भरे हुए दस करवे रखे और भक्तिसे पवित्रचित्त होकर उन्हें देवदेव गणेशजीको समर्पित करे। समर्पणके समय यह कहना चाहिये कि

है—‘विकटाय नमः’ से कनेरका पत्ता, ‘इभुण्डाय नमः’ से अश्मातपत्र, ‘विनायकाय नमः’ से आकका पत्ता, ‘कपिलाय नमः’ से अर्जुनका पत्ता, ‘वटवे नमः’ से देवदारुका पत्ता, ‘भालचन्द्राय नमः’ से मरुआका पत्ता, ‘सुराग्रजाय नमः’ से गान्धारी-पत्र और ‘सिद्धिविनायकाय नमः’ से केतकी-पत्र अर्पण करे।

‘भगवान् कपर्दि गणेश मुझपर प्रसन्न हों।’ तत्पश्चात् सुवासिनी स्त्रियों और ब्राह्मणोंको इच्छानुसार आदरपूर्वक उन करवोंको बाँट दे। इसके बाद रातमें चन्द्रोदय होनेपर चन्द्रमाको विधिपूर्वक अर्घ्य दे। व्रतकी पूर्तिके लिये स्वयं भी मिष्टान भोजन करे। इस व्रतको सोलह या बारह वर्षोंतक करके नारी इसका उद्यापन करे। उसके बाद इसे छोड़ दे अथवा स्त्रीको चाहिये कि सौभाग्यकी इच्छासे वह जीवनभर इस व्रतको करती रहे; क्योंकि स्त्रियोंके लिये इस व्रतके समान सौभाग्यदायक व्रत तीनों लोकोंमें दूसरा कोई नहीं है।

मुनीश्वर! मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्थीसे लेकर एक वर्षतकका समय प्रत्येक चतुर्थीको एकभुक्त (एक समय भोजन) करके बितावे और द्वितीय वर्ष उक्त तिथिको केवल रातमें एक बार भोजन करके व्यतीत करे। तृतीय वर्षमें प्रत्येक चतुर्थीको अयाचित (बिना माँगे मिले हुए) अन्न एक बार खाकर रहे और चौथा वर्ष उक्त तिथिको उपवासपूर्वक रहकर बितावे। इस प्रकार विधिपूर्वक व्रतका पालन करते हुए क्रमशः चार वर्ष पूरे करके अन्तमें व्रत-स्नान करे। उस समय महाब्रती मानव सोनेकी गणेशमूर्ति बनवावे। यदि असमर्थ हो तो वर्णक (हल्दी-चूर्ण)–द्वारा ही गणेश-प्रतिमा बना ले। तदनन्तर विविध रंगोंसे धरतीपर सुन्दर दलोंसहित कमल अङ्कित करके उसके ऊपर कलश स्थापित करे। कलशके ऊपर ताँबेका पात्र रखे। उस पात्रको सफेद चावलसे भर दे। चावलके ऊपर युगल वस्त्रसे आच्छादित गणेशजीको विराजमान करे। तदनन्तर गन्ध आदि सामग्रियोंद्वारा उनकी पूजा करे। फिर गणेशजी प्रसन्न हों, इस उद्देश्यसे लड्डूका नैवेद्य अर्पण करे। रातमें गीत, वाद्य और पुराण-कथा आदिके द्वारा जागरण करे। फिर निर्मल

प्रभात होनेपर स्नान करके तिल, चावल, जौ, पीली सरसों, धी और खाँड़ मिली हवनसामग्रीसे विधिपूर्वक होम करे। गण, गणाधिप, कूष्माण्ड, त्रिपुरान्तक, लम्बोदर, एकदन्त, रुक्मदंष्ट्र, विश्रप, ब्रह्मा, यम, वरुण, सोम, सूर्य, हुताशन, गन्धमादी तथा परमेष्ठी—इन सोलह नामोंद्वारा प्रत्येकके आदिमें प्रणव और अन्तमें चतुर्थी विभक्ति और 'नमः' पद लगाकर अग्निमें एक-एक आहुति दे। इसके बाद 'बक्तुण्डाय हुम्' इस मन्त्रके द्वारा एक-सौ आठ आहुति दे। तत्पश्चात् व्याहतियोंद्वारा यथाशक्ति होम करके पूर्णाहुति दे। दिव्यालोकोंका पूजन करके चौबीस ब्राह्मणोंको लड्डू और खीर भोजन करावे। इसके बाद आचार्यको दक्षिणासहित सवत्सा गौदान करे एवं दूसरे ब्राह्मणोंको यथाशक्ति भूयसी दक्षिणा दे। फिर प्रणाम और परिक्षमा करके उन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको विदा करनेके पश्चात् स्वयं भी प्रसन्नचित्त होकर भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। मनुष्य इस व्रतका पालन करके गणेशजीके प्रसादसे इहलोकमें उत्तम भोग भोगता और परलोकमें भगवान् विष्णुका सायुज्य लाभ करता है। नारद! कुछ लोग इसका नाम 'वरव्रत' कहते हैं। इसका विधान भी यही है और फल भी उसके समान ही है। पौष मासकी चतुर्थीको भक्तिपूर्वक विष्णेश्वर गणेशकी प्रार्थना करके एक ब्राह्मणको लड्डू भोजन करावे और दक्षिणा दे। मुने! ऐसा करनेसे व्रती पुरुष धन-सम्पत्तिका भागी होता है।

माघ कृष्णा चतुर्थीको 'संकष्टव्रत' बतलाया जाता है। उसमें उपवासका संकल्प लेकर व्रती पुरुष सबेरेसे चन्द्रोदयकालतक नियमपूर्वक रहे। मनको काबूमें रखे। चन्द्रोदय होनेपर मिट्टीकी गणेशमूर्ति बनाकर उसे पीढ़ेपर स्थापित करे। गणेशजीके साथ उनके आयुध और वाहन भी होने चाहिये। मूर्तिमें गणेशजीकी स्थापना करके बोड्शोपचारसे विधिपूर्वक उनका पूजन करे। फिर मोदक तथा गुड़में बने हुए तिलके लड्डूका

नैवेद्य अर्पण करे। तत्पश्चात् ताँबेके पात्रमें लाल चन्दन, कुश, दूर्वा, फूल, अक्षत, शमीपत्र, दधि और जल एकत्र करके चन्द्रमाको अर्घ्य दे। उस समय निमाङ्कित मन्त्रका उच्चारण करे—

गगनार्णवमाणिक्य चन्द्र दक्षायणीपते।

गृहाणार्घ्यं मया दत्तं गणेशप्रतिरूपक॥

(ना० पूर्व० ११३। ७७)

'गगनरूपी समुद्रके माणिक्य चन्द्रमा! दक्षकन्या रोहिणीके प्रियतम! गणेशके प्रतिविम्ब! आप मेरा दिया हुआ यह अर्घ्य स्वीकार कीजिये।'

इस प्रकार गणेशजीको यह दिव्य तथा पापनाशक अर्घ्य देकर यथाशक्ति उत्तम ब्राह्मणोंको भोजन करानेके पश्चात् स्वयं भी उनकी आज्ञा लेकर भोजन करे। ब्रह्मन्! इस प्रकार कल्याणकारी 'संकष्टव्रत' का पालन करके मनुष्य धन-धान्यसे सम्पन्न होता है। वह कभी कष्टमें नहीं पड़ता। माघ शुक्ला चतुर्थीको परम उत्तम गौरीव्रत किया जाता है। उस दिन योगिनी-गणोंसहित गौरीजीकी पूजा करनी चाहिये। मनुष्यों और उनमें भी विशेषतः स्त्रियोंको कुन्द, पुष्प, कुञ्जम, लाल सूत्र, लाल फूल, महावर, धूप, दीप, बलि, गुड़, अदरख, दूध, खीर, नमक और पालक आदिसे गौरीजीकी पूजा करनी चाहिये। अपनी सौभाग्यवृद्धिके लिये सौभाग्यवती स्त्रियों और उत्तम ब्राह्मणोंकी भी पूजा करनी चाहिये। उसके बाद बन्धु-बान्धवोंके साथ स्वयं भी भोजन करे। विप्रवर! यह सौभाग्य तथा आरोग्य बढ़ानेवाला 'गौरीव्रत' है। स्त्रियों और पुरुषोंको प्रतिवर्ष इसका पालन करना चाहिये। कुछ लोग इसे 'दुणिधव्रत' कहते हैं। किन्हीं-किन्हींके मतमें इसका नाम 'कुण्ड-व्रत' है। कुछ दूसरे लोग इसे 'ललिताव्रत' अथवा 'शान्तिव्रत' भी कहते हैं। मुने! इस तिथिमें किया हुआ स्नान, दान, जप और होम सब कुछ गणेशजीकी कृपासे सदाके लिये सहस्रगुना हो जाता है। फाल्गुन मासकी चतुर्थीको

मङ्गलमय 'दुष्पिठराजव्रत' बताया गया है। उस दिन तिलके पीठेसे ब्राह्मणोंको भोजन कराकर मनुष्य स्वयं भी भोजन करे। गणेशजीकी आराधनामें संलग्न होकर तिलोंसे ही दान, होम और पूजन आदि करनेपर मनुष्य गणेशके प्रसादसे सिद्धि प्राप्त कर लेता है। मनुष्यको चाहिये कि सोनेकी गणेशमूर्ति बनाकर यत्नपूर्वक उसकी पूजा करे

और श्रेष्ठ ब्राह्मणको उसका दान कर दे। इससे समस्त सम्पदाओंकी वृद्धि होती है। विप्रेन्द्र! जिस किसी मासमें भी चतुर्थी तिथि रविवार या मङ्गलवारसे युक्त हो तो वह विशेष फल देनेवाली होती है। शुक्ल या कृष्ण पक्षकी सभी चतुर्थी तिथियोंमें भक्तिपरायण पुरुषोंको देवेश्वर गणेशका ही पूजन करना चाहिये।

सभी मासोंकी पञ्चमी तिथियोंमें करने योग्य व्रत-पूजन आदिका वर्णन

सनातनजी कहते हैं—ब्रह्मन्! सुनो, अब मैं तुम्हें पञ्चमीके व्रत कहता हूँ, जिनका भक्तिपूर्वक पालन करनेपर मनुष्य सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। चैत्रके शुक्लपक्षकी पञ्चमी तिथिको 'मत्स्यजयन्ती' कहते हैं। इसमें भक्तोंको मत्स्यावतार-



विग्रहकी पूजा और तत्सम्बन्धी महोत्सव करने चाहिये। इसे 'श्रीपञ्चमी' भी कहते हैं। अतः उस दिन गन्ध आदि उपचारों तथा खीर आदि नैवेद्योंद्वारा श्रीलक्ष्मीजीका भी पूजन करना चाहिये। जो उस दिन लक्ष्मीजीकी पूजा करता है, उसे लक्ष्मी कभी नहीं छोड़ती। उसी दिन 'पृथ्वीव्रत',

'चान्द्र-व्रत' तथा 'हयग्रीवव्रत' भी होता है। अतः उनकी पृथक्-पृथक् सिद्धि चाहनेवाले पुरुषोंको शास्त्रोक्त विधिसे उन-उन व्रतोंका पालन करना चाहिये। जो मनुष्य वैशाखकी पञ्चमीको सम्पूर्ण नागगणोंसे युक्त शेषनागकी पूजा करता है, वह मनोवाञ्छित फल पाता है। इसी प्रकार विद्वान् पुरुष ज्येष्ठकी पञ्चमी तिथिको पितरोंका पूजन करे। उस दिन ब्राह्मण-भोजन करानेसे सम्पूर्ण कामनाओं और अभीष्ट फलकी प्राप्ति होती है। मुने! आषाढ़ शुक्ल पञ्चमीको सर्वव्यापी वायुकी परीक्षा की जाती है। गाँवसे बाहर निकलकर धरतीपर खड़ा रहे और वहाँ एक बाँस खड़ा करे। बाँसके डंडेके अग्रभागमें पञ्चाङ्गी पताका लगा ले। तदनन्तर बाँसके मूल भागमें सब दिशाओंकी ओर लोकपालोंकी स्थापना एवं पूजा करके वायुकी परीक्षा करे। प्रथम आदि यामों (प्रहरों)-में जिस-जिस दिशाकी ओरसे वायु चलती है, उसी-उसी दिक्पाल या लोकपालकी भलीभाँति पूजा करे। इस प्रकार चार प्रहरतक वहाँ निराहार रहकर सायंकाल अपने घर आवे और थोड़ा भोजन करके एकाग्रचित्त हो लोकपालोंको नमस्कार करके पवित्र भूमिपर सो जाय। उस दिन रातके चौथे प्रहरमें जो स्वप्न होता है, वह निश्चय ही सत्य होता है—यह भगवान् शिवका कथन है। यदि अशुभ स्वप्न हो तो भगवान् शिवकी पूजामें तत्पर हो उपवासपूर्वक आठ पहर

वितावे। फिर आठ ब्राह्मणोंको भोजन कराकर मनुष्य शुभ फलका भागी होता है। यह 'शुभाशुभ-निदर्शनब्रत' कहा गया है, जो मनुष्योंके इहलोक और परलोकमें भी सौभाग्यजनक होता है।

श्रावण मासके कृष्णपक्षकी चतुर्थीको जब थोड़ा दिन शेष रहे तो कच्चा अन्न (जितना दान देना हो) पृथक्-पृथक् पात्रोंमें रखकर विद्वान् पुरुष उन पात्रोंमें जल भर दे। तदनन्तर वह सब जल निकाल दे। फिर दूसरे दिन सबेरे सूर्योदय होनेपर विधिवत् स्नान करके देवताओं, ऋषियों तथा पितरोंका भलीभाँति पूजन करे। उनके आगे नैवेद्य स्थापित करे और वह पहले दिनका धोया हुआ कच्चा अन्न प्रसन्नतापूर्वक याचकोंको देवे। तत्पश्चात् प्रदोषकालमें शिवमन्दिरमें जाकर लिङ्गस्वरूप भगवान् शिवका गन्ध, पुष्प आदि सामग्रियोंके द्वारा सम्पूर्ण पूजन करे। फिर सहस्र या सौ बार पञ्चाक्षरी विद्या ('नमः शिवाय' मन्त्र)-का जप करे। तदनन्तर उनका स्तवन करे। फिर सदा अन्नकी सिद्धिके लिये भगवान् शिवसे प्रार्थना करे। इसके बाद अपने घर आकर ब्राह्मण आदिको पकवान देकर स्वयं भी मौनभावसे भोजन करे। विप्रवर! यह 'अन्नब्रत' है, मनुष्योंद्वारा विधिपूर्वक इसका पालन होनेपर यह सम्पूर्ण अन्नसम्पत्तियोंका उत्पादक और परलोकमें सद्गति देनेवाला होता है।

श्रावण मासके शुक्लपक्षकी पञ्चमीके दिन आस्तिक मनुष्योंको चाहिये कि वे अपने दरवाजेके दोनों ओर गोबरसे सपाँकी आकृति बनावें और गन्ध, पुष्प आदिसे उनकी पूजा करें। तत्पश्चात् इन्द्राणीदेवीकी पूजा करें। सोने, चाँदी, दही, अक्षत, कुश, जल, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य आदिसे उन सबकी पूजा करके परिक्रमा करे और उस द्रव्यको प्रणाम करके भक्तिभावसे प्रार्थनापूर्वक श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको समर्पित करे। नारद! इस प्रकार भक्तिभावसे द्रव्य दान करनेवाले

पुरुषपर स्वर्ण आदि समृद्धियोंके दाता धनाध्यक्ष कुबेर प्रसन्न होते हैं। फिर भक्तिभावसे ब्राह्मणोंके भोजन करानेके पश्चात् स्वयं भी स्त्री-पुत्र और सगे-सम्बन्धियोंके साथ भोजन करे।

भाद्रपद मासके कृष्ण पक्षकी पञ्चमीको दूधसे नागोंको तृप्त करे। जो ऐसा करता है उसकी सात पीढ़ियोंतकके लोग साँपसे निर्भय हो जाते हैं। भाद्रपदके शुक्ल पक्षकी पञ्चमीको श्रेष्ठ ऋषियोंकी पूजा करनी चाहिये। प्रातःकाल नदी आदिके तटपर जाकर सदा आलस्यरहित हो स्नान करे। फिर घर आकर यत्नपूर्वक मिट्टीकी वेदी बनावे। उसे गोबरसे लीपकर पुष्पोंसे सुशोभित करे। इसके बाद कुशा बिछाकर उसके ऊपर गन्ध, नाना प्रकारके पुष्प, धूप और सुन्दर दीप आदिके द्वारा सात ऋषियोंका पूजन करे। कश्यप, अत्रि, भद्राज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और वसिष्ठ—ये सात ऋषि माने गये हैं। इनके लिये विधिवत् अर्घ्य तैयार करके अर्घ्यदान दे। बुद्धिमान् पुरुषको चाहिये कि उनके लिये बिना जोते-बोये उत्पन्न हुए श्यामाक (साँवाके चावल) आदिसे नैवेद्य तैयार करे। वह नैवेद्य उन्हें अर्पण करके उन ऋषियोंका विसर्जन करनेके पश्चात् स्वयं भी वही प्रसादस्वरूप अन्न भोजन करे। इस ब्रतका पालन करके मनुष्य मनोवाञ्छित फल भोगता और सप्तर्षियोंके प्रसादसे श्रेष्ठ विमानपर बैठकर दिव्यलोकमें जाता है।

आश्विन शुक्ला पञ्चमीको 'उपाङ्गललिताब्रत' होता है। नारद! यथाशक्ति ललिताजीकी स्वर्णमयी मूर्ति बनाकर षोडशोपचारसे उनकी विधिवत् पूजा करे। ब्रतकी पूर्तिके लिये श्रेष्ठ ब्राह्मणको पकवान, फल, धी और दक्षिणा दान करे। तत्पश्चात् निम्राङ्गितरूपसे प्रार्थना एवं विसर्जन करे—

सवाहना शक्तियुता वरदा पूजिता मया।
मातर्मामनुगृहाथ गम्यतां निजमन्दिरम्॥

(ना० पूर्व० ११४। ५२)

'मैंने वाहन और शक्तियोंसे युक्त वरदायिनी

ललितादेवीका पूजन किया है। माँ! तुम मुझपर अनुग्रह करके अपने मन्दिरको पधारो।'

द्विजश्रेष्ठ! कार्तिक शुक्ला पञ्चमीको सब पापोंका नाश करनेके लिये श्रद्धापूर्वक परम उत्तम 'जयाव्रत' करना चाहिये। ब्रह्मन्! एकाग्रचित्त हो विधिपूर्वक षोडशोपचारसे जयादेवीकी पूजा करके पवित्र तथा वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत हो एक ब्राह्मणको भोजन करावे और दक्षिणा देकर उसे विदा करे। तत्पश्चात् स्वयं मौन होकर भोजन करे। जो भक्तिपूर्वक जयाके दिन स्नान करता है, उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं। विप्रवर! अश्वमेध

यज्ञके अन्तमें स्नान करनेसे जो फल बताया गया है, वही जयाके दिन भी स्नान करनेसे प्राप्त होता है। मार्गशीर्ष शुक्ला पञ्चमीको विधिपूर्वक नागोंकी पूजा करके मनुष्य उनसे अभय पाकर बन्धु-बान्धवोंके साथ प्रसन्न रहता है। पौष मासके शुक्ल पक्षकी पञ्चमीको भगवान् मधुसूदनकी पूजा करके मनुष्य मनोवाञ्छित कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। (इसी प्रकार माघ और फाल्गुनके लिये समझना चाहिये) नारद! प्रत्येक मासके शुक्ल और कृष्णपक्षमें भी पञ्चमीको पितरों और नागोंकी पूजा सर्वथा उत्तम मानी गयी है।

वर्षभरकी षष्ठी तिथियोंमें पालनीय व्रत एवं देवपूजन आदिकी विधि और महिमा

सनातनजी कहते हैं—विप्रवर! सुनो, अब मैं तुमसे षष्ठीके व्रतोंका वर्णन करता हूँ, जिनका यथार्थरूपसे अनुष्ठान करके मनुष्य यहाँ सम्पूर्ण मनोरथोंको प्राप्त कर लेता है। चैत्र शुक्ला षष्ठीको परम उत्तम 'कुमारव्रत'^१ का विधान किया गया है। उसमें नाना प्रकारकी पूजा-विधिसे भगवान् षडाननकी^२ आराधना करके मनुष्य सर्वगुणसम्पन्न एवं चिरंजीवी पुत्र प्राप्त कर लेता है। वैशाख शुक्ला षष्ठीको कार्तिकेयजीकी पूजा करके मनुष्य मातृसुखलाभ करता है। ज्येष्ठ मासके शुक्ल पक्षकी षष्ठीको विधिपूर्वक सूर्यदेवकी पूजा करके उनकी कृपासे मनुष्य मनोवाञ्छित भोग पाता है। आषाढ़ शुक्ला षष्ठीको परम उत्तम 'स्कन्दव्रत'^३ करना चाहिये। उस दिन उपवास करके शिव तथा पार्वतीके प्रिय पुत्र स्कन्दजीकी पूजा करनेसे मनुष्य पुत्र-पौत्रादि सन्तानों और मनोवाञ्छित भोगोंको प्राप्त कर लेता है। श्रावण शुक्ला षष्ठीको उत्तम भक्तिभावसे युक्त हो षोडशोपचारद्वारा शरजन्मा भगवान् स्कन्दकी आराधना करनी चाहिये। ऐसा करनेवाला पुरुष षडाननकी कृपासे अभीष्ट मनोरथ प्राप्त कर लेता है। भाद्रपद मासके कृष्ण पक्षकी

षष्ठीको 'ललिताव्रत' बताया गया है। उस दिन नारी विधिपूर्वक प्रातःकाल स्नान करनेके पश्चात् श्वेत वस्त्र धारण करके श्वेत मालासे अलंकृत हो नदी-संगमकी बालुका लेकर उसके पिण्ड बनाकर बाँसके पात्रमें रखे। इस प्रकार पाँच पिण्ड रखकर उसमें वन-विलासिनी ललितादेवीका ध्यान करे। फिर कमल, कनेर, नेवारी (वनमल्लिका), मालती, नील कमल, केतकी और तगरका संग्रह करके इनमेंसे एक-एकके एक सौ आठ या अद्वाईस फूल ग्रहण करे। उन फूलोंकी अक्षत-कलिकाएँ ग्रहण करके उन्हींसे देवीकी पूजा करनी चाहिये। पूजनके पश्चात् सामने खड़े होकर उन शिवप्रिया ललितादेवीकी इस प्रकार प्रार्थना करे—

गङ्गाद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नीलपर्वते।

स्नात्वा कनखले देवि हरं लब्धवती पतिम्॥

ललिते सुभगे देवि सुखसौभाग्यदायिनि।

अनन्तं देहि सौभाग्यं महां तुभ्यं नमो नमः॥

(ना० पूर्व० ११५। १३-१५)

'देवि! आपने गङ्गाद्वार, कुशावर्त, बिल्वक, नीलपर्वत और कनखल तीर्थमें स्नान करके भगवान् शिवको पतिरूपमें प्राप्त किया है। सुख

१-२ कार्तिकेय।

और सौभाग्य देनेवाली सुन्दरी ललितादेवी ! आपको बारम्बार नमस्कार है, आप मुझे अक्षय सौभाग्य प्रदान कीजिये ।'

इस मन्त्रसे चम्पाके सुन्दर फूलोंद्वारा ललितादेवीकी विधिपूर्वक पूजा करके उनके आगे नैवेद्य रखे । खीरा, ककड़ी, कुम्हड़ा, नारियल, अनार, बिजौरा नीबू, तुंडीर, कारवेल्ल और चिर्भट आदि सामयिक फलोंसे देवीके आगे शोभा करके बढ़े हुए धानके अङ्कुर, दीपोंकी पंक्ति, अगुरु, धूप, सौहालक, करञ्जक, गुड़, पुष्प, कर्णवेष्ट (कानके आभूषण), मोदक, उपमोदक तथा अपने वैभवके अनुसार अनेक प्रकारके नैवेद्य आदिद्वारा विधिवत् पूजा करके रातमें जागरणका उत्सव मनावे । इस प्रकार जागरण करके सप्तमीको सबेरे ललिताजीको नदीके तटपर ले जाय । द्विजोत्तम ! वहाँ गन्ध, पुष्पसे गाजे-बाजेके साथ पूजा करके वह नैवेद्य आदि सामग्री श्रेष्ठ ब्राह्मणको दे । फिर स्थान करके घर आकर अग्रिमें होम करे । देवताओं, पितरों और मनुष्योंका पूजन करके सुवासिनी स्त्रियों, कन्याओं तथा पन्द्रह ब्राह्मणोंको भोजन करावे । भोजनके पश्चात् बहुत-सा दान देकर उन सबको विदा करे । अनेकानेक व्रत, तपस्या, दान और नियमसे जो फल प्राप्त होता है, वह इसी व्रतसे यहीं उपलब्ध हो जाता है । तदनन्तर नारी मृत्युके पश्चात् सनातन शिवधाममें पहुँचकर ललितादेवीके साथ उनकी सखी होकर चिरकालतक आनन्द भोगती है और पुरुष भगवान् शिवके समीप रहकर सुखी होता है ।

भाद्रपद मासके शुक्ल पक्षमें जो षष्ठी आती है, उसे 'चन्दनष्ठी' कहते हैं । उस दिन देवीकी पूजा करके मनुष्य देवीलोकको प्राप्त कर लेता है । यदि वह षष्ठी रोहिणी नक्षत्र, व्यतीपात योग और मङ्गलवारसे संयुक्त हो तो उसका नाम 'कपिलाष्ठी' होता है । कपिलाष्ठीके दिन व्रत एवं नियममें तत्पर होकर सूर्यदेवकी पूजा करके

मनुष्य भगवान् भास्करके प्रसादसे मनोवाञ्छित कामनाओंको पा लेता है । देवर्षिप्रवर ! उस दिन किया हुआ अन्नदान, होम, जप तथा देवताओं, ऋषियों और पितरोंका तर्पण आदि सब कुछ अक्षय जानना चाहिये । कपिलाष्ठीको भगवान् सूर्यकी प्रसन्नताके लिये वस्त्र, माला और चन्दन आदिसे दूध देनेवाली कपिला गायकी पूजा करके उसे वेदज्ञ ब्राह्मणको दान कर देना



चाहिये । ब्रह्मन् ! आश्विन शुक्ला षष्ठीको गन्ध आदि माङ्गलिक द्रव्यों और नाना प्रकारके नैवेद्योंसे कात्यायनीदेवीकी पूजा करनी चाहिये । पूजाके पश्चात् देवेश्वरी कात्यायनीदेवीसे क्षमा-प्रार्थना और उन्हें प्रणाम करके उनका विसर्जन करे । यहाँ बालूकी मूर्तिमें कात्यायनीकी प्रतिष्ठा करके उनकी पूजा करनी चाहिये । ऐसा करके कात्यायनीदेवीकी कृपासे कन्या मनके अनुरूप वर पाती है और विवाहिता नारी मनोवाञ्छित पुत्र प्राप्त करती है । कार्तिक शुक्ला षष्ठीको महात्मा षड्गाननने सम्पूर्ण देवताओंद्वारा दी हुई महाभागा देवसेनाको प्राप्त किया था । अतः इस

तिथिको सम्पूर्ण मनोहर उपचारोंद्वारा सुरश्रेष्ठ देवसेना और षडानन कार्तिकेयकी भलीभाँति पूजा करके मनुष्य अपने मनके अनुकूल अनुपम सिद्धि प्राप्त करता है। द्विजोत्तम! उसी तिथिको अग्निपूजा बतायी गयी है। पहले अग्निदेवकी पूजा करके नाना प्रकारके द्रव्योंसे होम करना चाहिये।

मार्गशीर्ष शुक्ला षष्ठीको गन्ध, पुष्प, अक्षत, फल, वस्त्र, आभूषण तथा भाँति-भाँतिके नैवेद्योंद्वारा स्कन्दका पूजन करना चाहिये। मुनिश्रेष्ठ! यदि वह षष्ठी रविवार तथा शतभिषा नक्षत्रसे युक्त हो तो उसे 'चम्पाषष्ठी' कहते हैं। उस दिन सुख चाहनेवाले पुरुषको पापनाशक भगवान् विश्वेश्वरका दर्शन, पूजन, ज्ञान और स्मरण करना चाहिये। उस दिन किया हुआ स्नान-दान आदि सब शुभ कर्म अक्षय होता है। विप्रवर! पौष मासके शुक्ल पक्षकी षष्ठीको सनातन विष्णुरूपी जगत्पालक भगवान् दिनेश प्रकट हुए थे। अतः सब प्रकारका सुख चाहनेवाले पुरुषोंको उस दिन गन्ध आदि द्रव्यों, नैवेद्यों तथा वस्त्राभूषण आदिके द्वारा उनका पूजन करना चाहिये। माघ मासमें जो

शुक्ल पक्षकी षष्ठी आती है, उसे 'वरुणषष्ठी' कहते हैं। उसमें रक्त चन्दन, रक्त वस्त्र, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्यद्वारा विष्णुस्वरूप सनातन वरुणदेवताकी पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार विधिपूर्वक पूजन करके मनुष्य जो-जो चाहता है, वही-वही फल वरुणदेवकी कृपासे प्राप्त करके प्रसन्न होता है। नारद! फाल्गुन मासके शुक्ल पक्षकी षष्ठीको विधिपूर्वक भगवान् पशुपतिकी मृण्मयी मूर्ति बनाकर विविध उपचारोंसे उनकी पूजा करनी चाहिये। शतरुद्रीके मन्त्रोंसे पृथक्-पृथक् पञ्चामृत एवं जलद्वारा नहलाकर श्वेत चन्दन लगावे; फिर अक्षत, सफेद फूल, बिल्वपत्र, धतुरके फूल, अनेक प्रकारके फल और भाँति-भाँतिके नैवेद्योंसे भलीभाँति पूजा करके विधिवत् आरती उतारे। तदनन्तर क्षमा-प्रार्थना करके प्रणामपूर्वक उन्हें कैलासके लिये विसर्जन करे। मुने! जो स्त्री अथवा पुरुष इस प्रकार भगवान् शिवकी पूजा करते हैं, वे इहलोकमें श्रेष्ठ भोगोंका उपभोग करके अन्तमें भगवान् शिवके स्वरूपको प्राप्त होते हैं।

बारह मासोंके सप्तमी-सम्बन्धी व्रत और उनके माहात्म्य

सनातनजी कहते हैं—सुनो, अब मैं तुम्हें सप्तमीके व्रत बतलाता हूँ। चैत्र शुक्ला सप्तमीको गाँवसे बाहर किसी नदी या जलाशयमें स्नान करे। फिर घर आकर एक वेदी बनावे और उसे गोबरसे लीपकर उसके ऊपर सफेद बालू फैला दे। उसपर अष्टदल कमल लिखकर उसकी कार्णिकामें भगवान् सूर्यकी स्थापना करे। पूर्वके दलमें यज्ञसाधक दो देवताओंका न्यास करे। अग्निकोणके दलमें दो यज्ञसाधक गन्धवाँका न्यास करे। दक्षिणदलमें दो अप्सराओंका न्यास करे। मुनिश्रेष्ठ! नैऋत्य-दलमें दो राक्षसोंको स्थापित करे। पश्चिमदलमें यज्ञमें सहायता पहुँचानेवाले काद्रवेयसंज्ञक दो महानागोंका न्यास करे। द्विजोत्तम!

वायव्यदलमें दो यातुधानोंका, उत्तरदलमें दो ऋषियोंका और ऐशान्यदलमें एक ग्रहका न्यास करे। इन सबका गन्ध, माला, चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य और पान-सुपारी आदिके द्वारा पूजन करना चाहिये। इस प्रकार पूजा करके सूर्यदेवके लिये घीसे एक सौ आठ आहुति दे तथा अन्य लोगोंके लिये नाम-मन्त्रसे वेदीपर ही क्रमशः आठ-आठ आहुतियाँ दे। द्विजश्रेष्ठ! तदनन्तर पूर्णाहुति दे और ब्राह्मणोंको अपनी शक्तिके अनुसार दक्षिणा अर्पित करे। इस प्रकार सब विधान करके मनुष्य पूर्ण सौख्य लाभ करता है और शरीरका अन्त होनेपर सूर्यमण्डल भेदकर परम पदको प्राप्त होता है।

वैशाख शुक्ला सप्तमीको राजा जहुने स्वयं क्रोधवश गङ्गाजीको पी लिया था और पुनः अपने दाहिने कानके छिद्रसे उनका त्याग किया था। अतः वहाँ प्रातःकाल स्नान करके निर्मल जलमें गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि सम्पूर्ण उपचारोंद्वारा गङ्गाजीका पूजन करना चाहिये। तदनन्तर एक सहस्र घट दान करना चाहिये। 'गङ्गाव्रत'में यही कर्तव्य है। यह सब भक्तिपूर्वक किया जाय तो गङ्गाजी सात पीढ़ियोंको निःसंदेह स्वर्गमें पहुँचा देती हैं। इसी तिथिको 'कमलव्रत' भी बताया गया है। तिलसे भरे हुए पात्रमें सुवर्णमय सुन्दर कमल रखकर उसे दो वस्त्रोंसे ढँककर गन्ध, धूप आदिके द्वारा उसकी पूजा करे। तत्पश्चात्—

नमस्ते पद्महस्ताय नमस्ते विश्वधारिणे।
दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोऽस्तु ते॥

(ना० पूर्व० ११६। १५-१६)

'हाथमें कमल धारण करनेवाले भगवान् सूर्यको नमस्कार है। सम्पूर्ण विश्वको धारण करनेवाले भगवान् सविताको नमस्कार है। दिवाकर! आपको नमस्कार है। प्रभाकर! आपको नमस्कार है।'

इस प्रकार देवेश्वर सूर्यको नमस्कार करके सूर्यस्तके समय जलसे भरे हुए घड़ेके साथ वह कमल और एक कपिला गाय ब्राह्मणको दान दे। उस दिन अखण्ड उपवास और दूसरे दिन भोजन करना चाहिये। ब्राह्मणोंको भक्तिभावसे भोजन करानेसे व्रत सफल होता है। उसी दिन 'निम्बसप्तमी'- का व्रत बताया जाता है। द्विजश्रेष्ठ नारद! उसमें 'ॐ खखोल्काय नमः' इस मन्त्रद्वारा नीमके पत्तेसे भगवान् भास्करकी पूजाका विधान है। पूजनके पश्चात् नीमका पत्ता खाय और मौन होकर भूमिपर शयन करे। दूसरे दिन ब्राह्मणोंको भोजन कराकर स्वयं भी भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। यह 'निम्बपत्रव्रत' है, जो इसका पालन करनेवाले पुरुषोंको सब प्रकारका सुख देनेवाला है। इसी दिन 'शर्करासप्तमी' भी कही

गयी है। शर्करासप्तमी अश्वमेध यज्ञका फल देनेवाली, सब दुःखोंको शान्त करनेवाली और सन्तानपरम्पराको बढ़ानेवाली है। इसमें शक्करका दान करना, शक्कर खाना और खिलाना कर्तव्य है। यह व्रत भगवान् सूर्यको विशेष प्रिय है। जो परम भक्तिभावसे इसका पालन करता है, वह सद्गतिको प्राप्त होता है।

ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमीको साक्षात् भगवान् सूर्यस्वरूप इन्द्र उत्पन्न हुए हैं। ब्रह्मन्! जो उपवासपूर्वक जितेन्द्रियभावसे विधि-विधानके साथ उनकी पूजा करता है, वह देवराज इन्द्रके प्रसादसे



स्वर्गलोकमें स्थान पाता है। विप्रेन्द्र! आषाढ़ शुक्ला सप्तमीको विवस्वान् नामक सूर्य प्रकट हुए थे; अतः उस तिथिमें गन्ध, पुष्प आदि पृथक्-पृथक् सामग्रियोंद्वारा उनकी भलीभाँति पूजा करके मनुष्य भगवान् सूर्यका सायुज्य प्राप्त कर लेता है।

त्रिवर्ण शुक्ला सप्तमीको 'अव्यङ्ग' नामक शुभ व्रत करना चाहिये। इसमें सूर्यदेवकी पूजाके अन्तमें उनकी प्रसन्नताके लिये कपासके सूतका बना हुआ साढ़े चार हाथका वस्त्र दान करना

चाहिये। यह व्रत विशेष कल्याणकारी है। यदि यह सप्तमी हस्त नक्षत्रसे युक्त हो तो पापनाशिनी कही गयी है। इसमें किया हुआ दान, जप और होम सब अक्षय होता है। भाद्रपद शुक्ला सप्तमीको 'आमुक्ताभरणव्रत' बतलाया गया है। इसमें उमासहित भगवान् महेश्वरकी पूजाका विधान है। गङ्गाजल आदि षोडशोपचारसे भगवान् का पूजन, प्रार्थना और नमस्कार करके सम्पूर्ण कामनाओंकी सिद्धिके लिये उनका विसर्जन करना चाहिये। इसीको 'फलसप्तमी' भी कहते हैं। नारियल, बैगन, नारंगी, बिजौरा नीबू, कुम्हड़ा, बनभंटा और सुपारी—इन सात फलोंको महादेवजीके आगे रखकर सात तनुओं और सात गाँठोंसे युक्त एक डोरा भी चढ़ावे। फिर पराभक्तिसे उनका पूजन करके उस डोरेको स्त्री बायें हाथमें बाँध ले और पुरुष दाहिने हाथमें। जबतक वर्ष पूरा न हो जाय तबतक उसे धारण किये रहे। सात ब्राह्मणोंको खीर भोजन कराकर उन्हें विदा करे। उसके बाद बुद्धिमान् पुरुष व्रतकी पूर्णताके लिये स्वयं भी भोजन करे। पहले बताये हुए सातों फल सात ब्राह्मणोंको देने चाहिये। विप्रवर! इस प्रकार सात वर्षोंतक व्रतका पालन करके विधिवत् उपासना करनेपर व्रतधारी मनुष्य महादेवजीका सायुज्य प्राप्त कर लेता है। आश्विनके शुक्ल पक्षमें जो सप्तमी आती है, उसे 'शुभ सप्तमी' जानना चाहिये। उसमें स्नान और पूजा करके तथा श्रेष्ठ ब्राह्मणोंकी आज्ञा ले व्रतका आरम्भ करके कपिला गायका पूजन एवं प्रार्थना करे—

त्वामहं दद्धि कल्याणि प्रीयतामर्यमा स्वयम्।
पालय त्वं जगत्कृत्स्नं यतोऽसि धर्मसम्भवा॥

(ना० पूर्व० ११६। ४१-४२)

'कल्याणी! मैं तुम्हारा दान करता हूँ, इससे साक्षात् भगवान् सूर्य प्रसन्न हों। तुम सम्पूर्ण जगत्का पालन करो; क्योंकि धर्मसे उत्पन्न हुई हो।'

ऐसा कहकर वेदवेत्ता ब्राह्मणको नमस्कार करके उसे गाय और दक्षिणा दे। ब्रह्मन्! फिर स्वयं पञ्चगव्य पान करके रहे। इस प्रकार व्रत करके दूसरे दिन उत्तम ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उनसे शेष बचे हुए प्रसादस्वरूप अन्नको स्वयं भोजन करे। जिसने श्रद्धापूर्वक इस शुभ सप्तमी नामक व्रतको किया है, वह देवदेव महादेवजीके प्रसादसे भोग और मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

कार्तिकके शुक्ल पक्षमें 'शाकसप्तमी' नामक व्रत करना चाहिये। उस दिन स्वर्णकमलसहित सात प्रकारके शाक सात ब्राह्मणोंको दान करे और स्वयं शाक भोजन करके ही रहे। दूसरे दिन ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उन्हें भोजन-दक्षिणा दे और स्वयं भी मौन होकर भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमीको 'मित्र-व्रत' बताया गया है। भगवान् विष्णुका जो दाहिना नेत्र है, वही साकार होकर कशयपके तेज और अदितिके गर्भसे 'मित्र' नामधारी दिवाकरके रूपमें प्रकट हुआ है। अतः ब्रह्मन्! इस तिथिमें शास्त्रोक्त विधिसे उन्हींका पूजन करना चाहिये। पूजन करके मधुर आदि सामग्रियोंसे सात ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उन्हें सुवर्ण-दक्षिणा देकर विदा करे। तत्पश्चात् स्वयं भी भोजन करे। विधिपूर्वक इस व्रतका पालन करके मनुष्य निश्चय ही सूर्यके लोकमें जाता है। पौष शुक्ला सप्तमीको 'अभ्यव्रत' होता है। उस दिन उपवास करके पृथ्वीपर खड़ा हो तीनों समय सूर्यदेवकी पूजा करे। तत्पश्चात् दूधमिश्रित अन्नसे बँधा हुआ एक सेर मोदक ब्राह्मणको दान करके सात ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उन्हें सुवर्णकी दक्षिणा दे विदा करके स्वयं भी भोजन करे। यह सबको अभ्य देनेवाला माना गया है। दूसरे ब्राह्मण उसी दिन 'मार्तण्डव्रत'का उपदेश करते हैं। दोनों एक ही देवता होनेके कारण विद्वानोंने

उन्हें एक ही व्रत कहा है। माघ मासके कृष्ण पक्षकी सप्तमीको 'सर्वांसि' नामक व्रत होता है। उस दिन उपवास करके सुवर्णके बने हुए सूर्यविम्बकी गन्ध, पुष्प आदिसे पूजा करे तथा रात्रिमें जागरण करके दूसरे दिन सात ब्राह्मणोंको खीर भोजन करावे। उन ब्राह्मणोंको दक्षिणा, नारियल और अगुरु अर्पण करके दूसरी दक्षिणाके साथ सुवर्णमय सूर्यविम्ब आचार्यको समर्पित करे। फिर विशेष प्रार्थनापूर्वक उन्हें विदा करके स्वयं भोजन करे। यह व्रत सम्पूर्ण कामनाओंको देनेवाला कहा गया है। इस व्रतके प्रभावसे सर्वथा अद्वैतज्ञान सिद्ध होता है।

माघ शुक्ला सप्तमीको 'अचलाव्रत' बताया गया है। यह 'त्रिलोचनजयन्ती' है। इसे सर्वपापहारिणी माना गया है। इसीको 'रथसप्तमी' भी कहते हैं, जो 'चक्रवर्ती' पद प्रदान करनेवाली है। उस दिन सूर्यकी सुवर्णमयी प्रतिमाको सुवर्णमय घोड़े जुते हुए सुवर्णके ही रथपर बिठाकर जो सुवर्ण दक्षिणाके साथ भावभक्तिपूर्वक उसका दान करता है, वह भगवान् शङ्खरके लोकमें जाकर आनन्द भोगता है। यही 'भास्करसप्तमी' भी कहलाती है, जो

करोड़ों सूर्य-ग्रहणोंके समान है। इसमें अरुणोदयके समय स्नान किया जाता है। आक और बेरके सात-सात पत्ते सिरपर रखकर स्नान करना चाहिये। इससे सात जन्मोंके पापोंका नाश होता है। इसी सप्तमीको 'पुत्रदायक' व्रत भी बताया गया है। स्वयं भगवान् सूर्यने कहा है—'जो माघ शुक्ला सप्तमीको विधिपूर्वक मेरी पूजा करेगा, उसपर अधिक सन्तुष्ट होकर मैं अपने अंशसे उसका पुत्र होऊँगा।' इसलिये उस दिन इन्द्रियसंयमपूर्वक दिन-रात उपवास करे और दूसरे दिन होम करके ब्राह्मणोंको दही, भात, दूध और खीर आदि भोजन करावे। फाल्गुन शुक्ला सप्तमीको 'अर्कपुट' नामक व्रतका आचरण करे। अर्कके पत्तोंसे अर्क (सूर्य)- का पूजन करे और अर्कके पत्ते ही खाय तथा 'अर्क' नामका सदा जप करे। इस प्रकार किया हुआ यह 'अर्कपुटव्रत' धन और पुत्र देनेवाला तथा सब पापोंका नाश करनेवाला है। कोई-कोई विधिपूर्वक होम करनेसे इसे 'यज्ञव्रत' मानते हैं। द्विजश्रेष्ठ! सब मासोंकी सम्पूर्ण सप्तमी तिथियोंमें भगवान् सूर्यकी आराधना समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली बतायी गयी है।

बारह महीनोंके अष्टमी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा

सनातनजी कहते हैं—नारद! चैत्र मासके शुक्ल पक्षकी अष्टमीको भवानीका जन्म बताया जाता है। उस दिन सौ परिक्रमा करके उनकी यात्राका महान् उत्सव मनाना चाहिये। उस दिन जगदम्बाका दर्शन मनुष्योंके लिये सर्वथा आनन्द देनेवाला है। उसी दिन अशोककलिका खानेका विधान है। जो लोग चैत्र मासके शुक्ल पक्षकी अष्टमीको पुनर्वसु नक्षत्रमें अशोककी आठ कलिकाओंका पान करते हैं, वे कभी शोक नहीं पाते। उस दिन रातमें देवीकी पूजाका विधान होनेसे वह तिथि 'महाष्टमी' भी कही

गयी है। वैशाख मासके शुक्ल पक्षकी अष्टमी तिथिको उपवास करके स्वयं जलसे स्नान करे और अपराजिता-देवीको जटामाँसी तथा उशीर (खस)-मिश्रित जलसे स्नान कराकर गन्ध आदिसे उनकी पूजा करे। फिर शर्करासे तैयार किया हुआ नैवेद्य भोग लगावे। दूसरे दिन नवमीको पारणासे पहले कुमारी कन्याओंको देवीका शर्करामय प्रसाद भोजन करावे। ब्रह्मन्! ऐसा करनेवाला मनुष्य देवीके प्रसादसे ज्योतिर्मय विमानमें बैठकर प्रकाशमान सूर्यकी भाँति दिव्य लोकोंमें विचरता है।

ज्येष्ठ मासके कृष्ण पक्षकी अष्टमीको भगवान् त्रिलोचनकी पूजा करके मनुष्य सम्पूर्ण देवताओंसे वन्दित हो एक कल्पतक शिवलोकमें निवास करता है। जो मनुष्य ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमीको देवीकी पूजा करता है, वह गन्धर्वों और अप्सराओंके साथ विमानपर विचरण करता है। आषाढ़ मासके शुक्ल पक्षकी अष्टमीको हल्दीमिश्रित जलसे स्नान करके वैसे ही जलसे देवीको भी स्नान करावे और विधिपूर्वक उनकी पूजा करे। तदनन्तर शुद्ध जलसे स्नान कराकर कपूर और चन्दनका लेप लगावे। तत्पश्चात् शर्करायुक्त नैवेद्य अर्पण करके आचमन करावे। फिर ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उन्हें सुवर्ण और दक्षिणा दे। तदनन्तर उन्हें विदा करके स्वयं मौन होकर भोजन करे। इस व्रतका पालन करके मनुष्य देवीलोकमें जाता है। श्रावण शुक्ला अष्टमीको विधिपूर्वक देवीका यजन करके दूधसे उन्हें नहलावे और मिष्ठान निवेदन करे, तत्पश्चात् दूसरे दिन ब्राह्मणोंको भोजन कराकर स्वयं भी भोजन करके व्रत समाप्त करे। यह संतान बढ़ानेवाला व्रत है। श्रावण मासके कृष्ण पक्षकी अष्टमीको 'दशाफल' नामका व्रत होता है*। उस दिन उपवास-व्रतका संकल्प लेकर स्नान और नित्यकर्म करके काली तुलसीके दस पत्तोंसे 'कृष्णाय नमः', 'विष्णवे नमः', 'अनन्ताय नमः', 'गोविन्दाय नमः', 'गरुडध्वजाय नमः', 'दामोदराय नमः', 'हृषीकेशाय नमः', 'पद्मनाभाय नमः', 'हरये नमः', 'प्रभवे नमः'—इन दस नामोंका उच्चारण करके प्रतिदिन भगवान् श्रीकृष्णका पूजन करे। तदनन्तर परिक्रमापूर्वक नमस्कार करे। इस प्रकार इस उत्तम व्रतको दस दिनतक करता रहे। इसके आदि, मध्य और अन्तमें श्रीकृष्ण-मन्त्रद्वारा चरुसे एक सौ आठ बार

विधिपूर्वक होम करे। होमके अन्तमें विद्वान् पुरुष विधिके अनुसार भलीभाँति आचार्यकी पूजा करे। सोने, ताँबे, मिट्टी अथवा बाँसके पात्रमें सोनेका सुन्दर तुलसीदल बनवाकर रखे। साथ ही भगवान् श्रीकृष्णकी सुवर्णमयी प्रतिमा भी स्थापित करके उसकी विधिपूर्वक पूजा करे और वस्त्र तथा आभूषणोंसे विभूषित बछड़ेसहित गौका दान भी करे। दस दिनोंतक प्रतिदिन भगवान् श्रीकृष्णको दस-दस पूरी अर्पण करे। उन पूरियोंको ब्रती पुरुष विधिज्ञ ब्राह्मणको दे डाले अथवा स्वयं भोजन करे। द्विजोत्तम! दसवें दिन यथाशक्ति शश्यादान करे। तत्पश्चात् द्रव्यसहित सुवर्णमयी मूर्ति आचार्यको समर्पित करे। ब्रतके अन्तमें दस ब्राह्मणोंको प्रत्येकके लिये दस-दस पूरियाँ देवे। इस प्रकार दस वर्षोंतक उत्तम व्रतका पालन करके विधिपूर्वक उपवासका निर्वाह कर लेनेपर मनुष्य सम्पूर्ण कामनाओंसे सम्पन्न होता है और अन्तमें भगवान् श्रीकृष्णका सायुज्य प्राप्त कर लेता है।

यही 'कृष्ण-जन्माष्टमी' तिथि है, जो मनुष्योंके सब पापोंको हर लेनेवाली कही गयी है। श्रीकृष्णके जन्मके दिन केवल उपवास करनेमात्रसे मनुष्य सात जन्मोंके पापोंसे मुक्त हो जाता है। विद्वान् पुरुष उपवास करके नदी आदिके निर्मल जलमें तिलमिश्रित जलसे स्नान करे। फिर उत्तम स्थानमें बने हुए मण्डपके भीतर मण्डल बनावे। मण्डलके मध्यभागमें ताँबे या मिट्टीका कलश स्थापित करे। उसके ऊपर ताँबेका पात्र रखे। उस पात्रके ऊपर दो वस्त्रोंसे ढकी हुई श्रीकृष्णकी सुवर्णमयी सुन्दर प्रतिमा स्थापित करे। फिर वाद्य आदि उपचारोंद्वारा स्नेहपूर्ण हृदयसे उसकी पूजा करे। कलशके सब ओर पूर्व आदि क्रमसे देवकी, वसुदेव, यशोदा, नन्द, व्रज, गोपगण,

* अमावास्यातक मास माननेवालोंकी दृष्टिसे यह श्रावण मासके कृष्ण पक्षकी अष्टमी कही गयी है। जो पूर्णिमातक ही मास मानते हैं उनकी दृष्टिसे यह अष्टमी भाद्रपद कृष्ण पक्षमें पड़ती है।

गोपीवृन्द तथा गोसमुदायकी पूजा करे। तत्पश्चात् आरती करके अपराध क्षमा कराते हुए भक्तिपूर्वक प्रणाम करे। उसके बाद आधी रातक वहीं रहे। आधी रातमें पुनः श्रीहरिको पञ्चामृत तथा शुद्ध जलसे स्थान कराये और गन्ध-पुष्प आदिसे पुनः उनकी पूजा करे। नारद! धनिया, अजवाइन, सोंठ, खाँड़ और धीके मेलसे नैवेद्य तैयार करके उसे चाँदीके पात्रमें रखकर भगवान्‌को अर्पण करे। फिर दशावतारधारी श्रीहरिका चिन्तन करते हुए पुनः आरती करके चन्द्रोदय होनेपर चन्द्रमाको अर्घ्य दे। उसके बाद देवेश्वर श्रीकृष्णसे क्षमा-प्रार्थना करके व्रती पुरुष पौराणिक स्तोत्र-पाठ और गीत-वाद्य आदि अनेक कार्यक्रमोंद्वारा रात्रिका शेष भाग व्यतीत करे। तदनन्तर प्रातःकाल श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको मिष्ठान भोजन करावे और उन्हें प्रसन्नतापूर्वक दक्षिणा देकर विदा करे। तत्पश्चात् भगवान्‌की सुवर्णमयी प्रतिमाको स्वर्ण, धेनु और भूमिसहित आचार्यको दान करे। फिर और भी दक्षिणा देकर उन्हें विदा करनेके पश्चात् स्वयं भी स्त्री, पुत्र, सुहृद तथा भृत्यवर्गके साथ भोजन करे। इस प्रकार व्रत करके मनुष्य श्रेष्ठ विमानपर बैठकर साक्षात् गोलोकमें जाता है। इस जन्माष्टमीके समान दूसरा कोई व्रत तीनों लोकोंमें नहीं है, जिसके करनेसे करोड़ों एकादशियोंका फल प्राप्त हो जाता है। भाद्रपद शुक्ला अष्टमीको मनुष्य 'राधाव्रत' करे। इसमें भी पूर्ववत् कलशके ऊपर स्थापित श्रीराधाकी स्वर्णमयी प्रतिमाका पूजन करना चाहिये। मध्याह्नकालमें श्रीराधाजीका पूजन करके एकभुक्त व्रत करे। यदि शक्ति हो तो भक्त पुरुष पूरा उपवास करे। फिर दूसरे दिन भक्तिपूर्वक सुवासिनी स्त्रियोंको भोजन कराकर आचार्यको प्रतिमा दान करे। तत्पश्चात् स्वयं भी भोजन करे। इस प्रकार इस व्रतको समाप्त करना चाहिये। ब्रह्मण! व्रती पुरुष विधिपूर्वक इस 'राधाष्टमीव्रत'के करनेसे व्रजका रहस्य जान



लेता तथा राधापरिकरोंमें निवास करता है।

इसी तिथिको 'दूर्वाष्टमीव्रत' भी बताया गया है। पवित्र स्थानमें उगी हुई दूबपर शिवलिङ्गकी स्थापना करके गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, दही, अक्षत और फल आदिके द्वारा भक्तिपूर्वक उसकी पूजा करे। पूजाके अन्तमें एकाग्रचित्त होकर अर्घ्य दे। अर्घ्य देनेके पश्चात् परिक्रमा

करके वहीं ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उन्हें दक्षिणा, उत्तम फल तथा सुगन्धित मिष्ठान देकर विदा करे; फिर स्वयं भी भोजन करके अपने घर जाय। विप्रवर! इस प्रकार यह 'दूर्वाष्टमी' मनुष्योंके लिये पुण्यदायिनी तथा उनका पाप हर लेनेवाली है। यह चारों वर्णों और विशेषतः स्त्रियोंके लिये अवश्यकर्तव्य व्रत है। ब्रह्मन्! जब वह अष्टमी ज्येष्ठा नक्षत्रसे संयुक्त हो तो उसे 'ज्येष्ठा अष्टमी' के नामसे जानना चाहिये। वह पूजित होनेपर सब पापोंका नाश करनेवाली है। इस तिथिसे लेकर सोलह दिनोंतक महालक्ष्मीका व्रत बताया गया है। पहले इस प्रकार संकल्प करे—

करिष्येऽहं महालक्ष्मीव्रतं ते त्वत्परायणः।
तदविघ्नेन मे यातु समाप्तं त्वत्प्रसादतः॥

(ना० पूर्व० ११७। ५५)

'देवि! मैं आपकी सेवामें तत्पर होकर आपके इस महालक्ष्मीव्रतका पालन करूँगा। आपकी कृपासे यह व्रत बिना किसी विघ्नबाधाके परिपूर्ण हो।'

ऐसा कहकर दाहिने हाथमें सोलह तन्तु और सोलह गाँठोंसे युक्त डोरा बाँध ले। तबसे व्रती पुरुष प्रतिदिन गन्ध आदि उपचारोंद्वारा महालक्ष्मीकी पूजा करे। पूजाका यह क्रम आश्विन कृष्णा अष्टमीतक चलाता रहे। व्रत पूरा हो जानेपर विद्वान् पुरुष उसका उद्यापन करे। वस्त्र धेरकर एक मण्डप बना ले। उसके भीतर सर्वतोभद्रमण्डलकी रचना करे और उस मण्डलमें कलशकी प्रतिष्ठा करके दीपक जला दे। फिर अपनी बाँहसे डोरा उतारकर कलशके नीचे रख दे। इसके बाद सोनेकी चार प्रतिमाएँ बनवावे, वे सब-की-सब महालक्ष्मीस्वरूप हों। फिर पञ्चामृत और जलसे उन सबको स्नान करावे तथा षोडशोपचारसे विधिपूर्वक पूजा करके वहाँ जागरण करे। तदनन्तर आधी रातके समय चन्द्रोदय होनेपर श्रीखण्ड आदि द्रव्योंसे विधिपूर्वक अर्ध्य अर्पण करे। यह अर्ध्य चन्द्रमण्डलमें स्थित

महालक्ष्मीके उद्देश्यसे देना चाहिये। अर्ध्य देनेके पश्चात् महालक्ष्मीकी प्रार्थना करे और फिर व्रत करनेवाली स्त्री श्रोत्रिय ब्राह्मणोंकी पत्नियोंका रोली, महावर और काजल आदि सौभाग्यसूचक द्रव्योंद्वारा भलीभाँति पूजन करके उन्हें भोजन करावे। तत्पश्चात् बिल्व, कमल और खीरसे अग्निमें आहुति दे। ब्रह्मन्! उक्त वस्तुओंके अभावमें केवल घीकी आहुति दे। ग्रहोंके लिये समिधा और तिलका हवन करे। सब रोगोंकी शान्तिके उद्देश्यसे भगवान् मृत्युज्ञयके लिये भी आहुति देनी चाहिये। चन्दन, तालपत्र, पुष्पमाला, अक्षत, दूर्वा, लाल सूत, सुपारी, नारियल तथा नाना प्रकारके भक्ष्य पदार्थ—सबको नये सूपेमें रखे। प्रत्येक वस्तु सोलहकी संख्यामें हो। उन सब वस्तुओंको दूसरे सूपसे ढक दे। तदनन्तर व्रती पुरुष निप्राङ्गित मन्त्र पढ़ते हुए उपर्युक्त सब वस्तुएँ महालक्ष्मीको समर्पित करे—

क्षीरोदार्णवसम्भूता लक्ष्मीश्वन्द्रसहोदरा ।
व्रतेनानेन संतुष्टा भवताद्विष्णुवल्लभा ॥

(ना० पूर्व० ११७। ७०-७१)

'क्षीरसागरसे प्रकट हुई चन्द्रमाकी सहोदर भगिनी श्रीविष्णुवल्लभा महालक्ष्मी इस व्रतसे सन्तुष्ट हों।'

पूर्वोक्त चार प्रतिमाएँ श्रोत्रिय ब्राह्मणको अर्पित करे। इसके बाद चार ब्राह्मणों और सोलह सुवासिनी स्त्रियोंको मिष्ठान भोजन कराकर दक्षिणा देकर उन्हें विदा करे। फिर नियम समाप्त करके इष्ट भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। विप्रवर! यह महालक्ष्मीका व्रत है। इसका विधिपूर्वक पालन करके मनुष्य इहलोकके इष्ट भोगोंका उपभोग करनेके बाद चिरकालतक लक्ष्मीलोकमें निवास करता है।

विप्रवर! आश्विन मासके शुक्लपक्षमें जो अष्टमी आती है, उसे 'महाष्टमी' कहा गया है। उसमें सभी उपचारोंसे दुर्गाजीके पूजनका विधान

है। जो 'महाष्टमी' को उपवास अथवा एकभुक्त व्रत करता है, वह सब ओरसे वैभव पाकर देवताकी भाँति चिरकालतक आनन्दमग्न रहता है। कार्तिक कृष्णपक्षमें अष्टमीको 'कर्काष्टमी' नामक व्रत कहा गया है। उसमें यत्नपूर्वक उमासहित भगवान् शङ्करकी पूजा करनी चाहिये। जो सर्वगुणसम्पन्न पुत्र और नाना प्रकारके सुखकी अधिलाष्ठा रखते हैं, उन व्रती पुरुषोंको चन्द्रोदय होनेपर सदा चन्द्रमाके लिये अर्घ्यदान करना चाहिये। कार्तिकके शुक्लपक्षमें गोपाष्टमीका व्रत बताया गया है। उसमें गौओंकी पूजा करना, गोग्रास देना, गौओंकी परिक्रमा करना, गौओंके पीछे-पीछे चलना और गोदान करना आदि कर्तव्य है। जो समस्त सम्पत्तियोंकी इच्छा रखता हो, उसे उपर्युक्त कार्य अवश्य करने चाहिये। मार्गशीर्ष मासके कृष्णपक्षकी अष्टमीको 'अनघाष्टमी-व्रत' कहा गया है। उसमें अनेक पुत्रोंसे युक्त अनघ और अनघा—इन दोनों पति-पत्नीकी कुशमयी प्रतिमा बनायी जाती है। उस युगल जोड़ीको गोबरसे लीपे हुए शुभ स्थानमें स्थापित करके गन्ध-पुष्ट आदि विविध उपचारोंसे उनकी पूजा करे। फिर ब्राह्मण पति-पत्नीको भोजन कराकर दक्षिणा देकर विदा करे। स्त्री हो या पुरुष

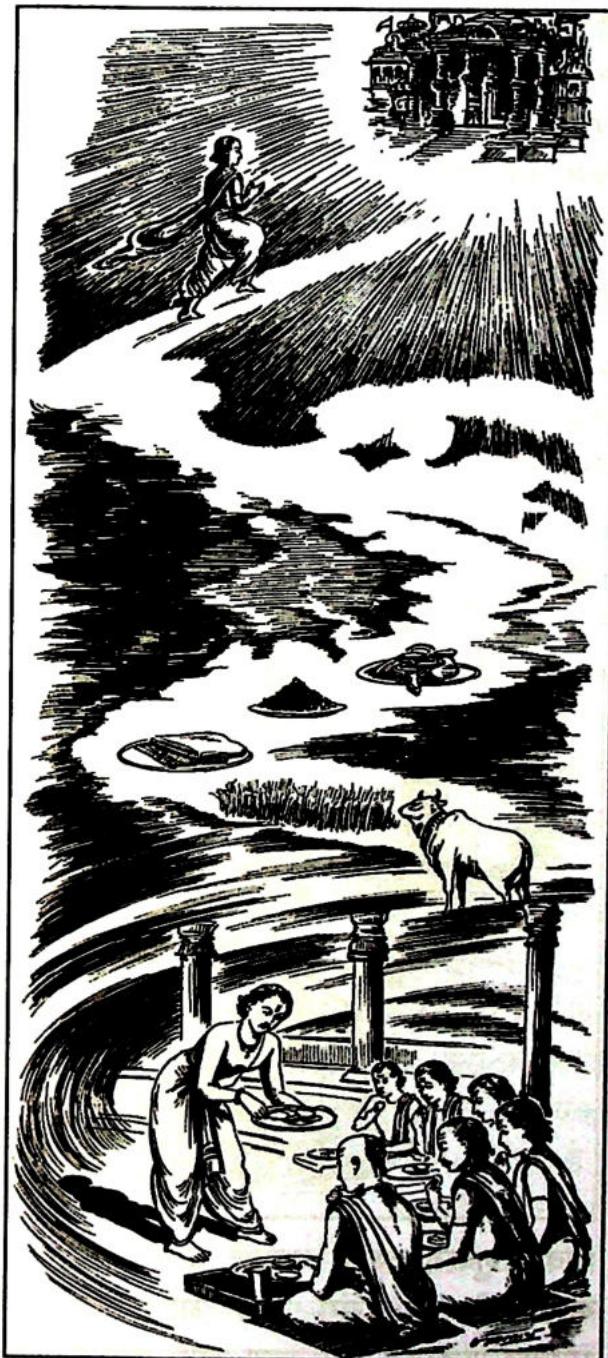
विधिपूर्वक इस व्रतका अनुष्ठान करके उत्तम लक्षणोंसे युक्त पुत्र पाता है।

मार्गशीर्ष शुक्ला अष्टमीको कालभैरवके समीप उपवासपूर्वक जागरण करके मनुष्य बड़े-बड़े पापोंसे मुक्त हो जाता है। पौष शुक्ल अष्टमीको अष्टकासंज्ञक श्राद्ध पितरोंको एक वर्षतक तृप्ति देनेवाला और कुल-संततिको बढ़ानेवाला है। उस दिन भक्तिपूर्वक शिवकी पूजा करके केवल भक्तिका आचरण करते हुए मनुष्य भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त कर लेता है। माघ मासके कृष्णपक्षकी अष्टमीको सम्पूर्ण कामनाओंको पूर्ण करनेवाली भद्रकाली देवीकी भक्तिभावसे पूजा करे। जो अविच्छिन्न संतति और विजय चाहता हो, वह माघ मासके शुक्लपक्षकी अष्टमीको भीष्मजीका तर्पण करे। ब्रह्मन्! फाल्गुन मासके कृष्णपक्षकी अष्टमीको व्रतपरायण पुरुष समस्त कामनाओंकी सिद्धिके लिये भीमादेवीकी आराधना करे। फाल्गुन शुक्ला अष्टमीको गन्ध आदि उपचारोंसे शिव और शिवाकी भलीभाँति पूजा करके मनुष्य सम्पूर्ण सिद्धियोंका अधीश्वर हो जाता है। सभी मासोंके दोनों पक्षोंमें अष्टमीके दिन विधिपूर्वक शिव और पार्वतीकी पूजा करके मनुष्य मनोवाज्ञित फल प्राप्त कर लेता है।

नवमी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा

सनातनजी कहते हैं—विप्रेन्द्र! अब मैं तुमसे नवमीके व्रतोंका वर्णन करता हूँ लोकमें जिनका पालन करके मनुष्य मनोवाज्ञित फल पाते हैं। चैत्रके शुक्लपक्षमें नवमीको 'श्रीरामनवमी' का व्रत होता है। उसमें भक्तियुक्त पुरुष यदि शक्ति हो तो विधिपूर्वक उपवास करे। जो अशक्त हो, वह मध्याह्नकालीन जन्मोत्सवके बाद एक समय भोजन करके रहे। ब्राह्मणोंको मिष्ठान भोजन कराकर भगवान् श्रीरामको प्रसन्न करे। गौ, भूमि, तिल,

सुवर्ण, वस्त्र और आभूषण आदिके दानसे भी श्रीरामप्रीतिका सम्पादन करे। जो मनुष्य इस प्रकार भक्तिपूर्वक 'श्रीरामनवमीव्रत' का पालन करता है, वह सम्पूर्ण पापोंका नाश करके भगवान् विष्णुके परम धामको जाता है। वैशाखमें दोनों पक्षोंकी नवमीको जो विधिपूर्वक चण्डिका-पूजन करता है, वह विमानसे विचरण करता हुआ देवताओंके साथ आनन्द भोगता है। ज्येष्ठ शुक्ला नवमीको श्रेष्ठ मनुष्य उपवासपूर्वक उमादेवीका



विधिवत् पूजन करके कुमारी कन्याओं तथा ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उन्हें अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा देकर अगहनीके चावलका भात दूधके साथ खाय। जो मनुष्य इस 'उमाव्रत' का विधिपूर्वक पालन करता है, वह इस लोकमें श्रेष्ठ भोगोंको भोगकर अन्तमें स्वर्गलोकमें स्थान पाता है। विप्रेन्द्र! जो आषाढ़ मासके दोनों पक्षोंमें

नवमीको रातमें ऐरावतपर विराजमान शुक्लवर्ण इन्द्राणीका भलीभाँति पूजन करता है, वह देवलोकमें दिव्य विमानपर विचरता हुआ दिव्य भोगोंका उपभोग करता है। विप्रवर! जो श्रावण मासके दोनों पक्षोंकी नवमीको उपवास अथवा केवल रातमें भोजन करता और 'कौमारी चण्डका' की आराधना करता है, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, भाँति-भाँतिके नैवेद्य अर्पण करके और कुमारी कन्याओंको भोजन कराकर जो उस पापहारिणी देवीकी परिचर्यामें तत्पर रहता है तथा इस प्रकार भक्तिपूर्वक उस उत्तम 'कौमारीव्रत' का पालन करता है, वह विमानद्वारा सनातन देवीलोकमें जाता है।

भाद्रपद शुक्ला नवमीको 'नन्दनवमी' कहते हैं। उस दिन जो नाना प्रकारके उपचारेंद्वारा दुग्धदेवीकी विधिवत् पूजा करता है, वह अश्वमेध-यज्ञका फल पाकर विष्णुलोकमें प्रतिष्ठित होता है। कार्तिक मासके शुक्लपक्षमें जो नवमी आती है, उसे 'अक्षयनवमी' कहते हैं। उस दिन पीपलवृक्षकी जड़के समीप देवताओं, ऋषियों तथा पितरोंका विधिपूर्वक तर्पण करे और सूर्यदेवताको अर्च्य दे। तत्पश्चात् ब्राह्मणोंको मिष्टान भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा दे और स्वयं भी भोजन करे। इस प्रकार जो भक्तिपूर्वक 'अक्षयनवमी' को जप, दान, ब्राह्मणपूजन और होम करता है, उसका वह सब कुछ अक्षय होता है, ऐसा ब्रह्माजीका कथन है। मार्गशीर्ष शुक्ला नवमीको 'नन्दनीनवमी' कहते हैं। जो उस दिन उपवास करके गन्ध आदिसे जगदम्बाका पूजन करता है, वह निश्चय ही अश्वमेध-यज्ञके फलका भागी होता है। विप्रवर! यौष मासके शुक्लपक्षकी नवमीको एक समय भोजनके व्रतका पालन करते हुए महामायाका पूजन करे। इससे वाजपेय यज्ञके फलकी प्राप्ति होती है। माघ शुक्ला नवमी लोकपूजित 'महानन्दा' के नामसे विख्यात है, जो मानवोंके लिये सदा आनन्ददायिनी

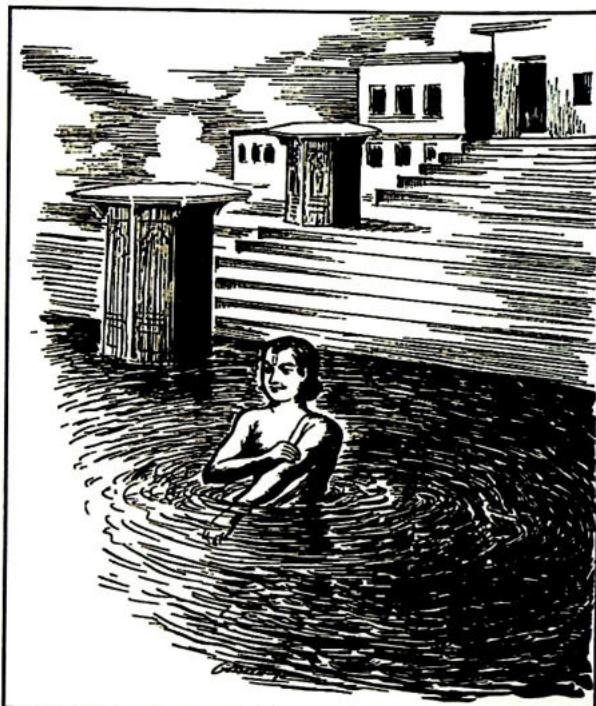
होती है। उस दिन किया हुआ स्नान, दान, जप, होम और उपवास सब अक्षय होता है। द्विजोत्तम! फाल्गुन मासके शुक्लपक्षकी जो नवमी तिथि है, वह परम पुण्यमयी 'आनन्दा नवमी' कहलाती

है। वह सब पापोंका नाश करनेवाली मानी गयी है। जो उस दिन उपवास करके 'आनन्दा'का पूजन करता है, वह मनोवाञ्छित कामनाओंको प्राप्त कर लेता है।

बारह महीनोंके दशमी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा

सनातनजी कहते हैं—नारद! अब मैं तुम्हें दशमीके व्रत बतलाता हूँ, जिनका भक्तिपूर्वक पालन करके मनुष्य धर्मराजका प्रिय होता है। चैत्र शुक्ला दशमीको सामयिक फल, फूल और गन्ध आदिसे धर्मराजका पूजन करना चाहिये। उस दिन पूरा उपवास या एक समय भोजन करके रहे। व्रतके अन्तमें चौदह ब्राह्मणोंको भोजन करावे और अपनी शक्तिके अनुसार दक्षिणा दे। विप्रवर! जो इस प्रकार धर्मराजकी पूजा करता है, वह धर्मकी आज्ञासे देवताओंकी समता प्राप्त कर लेता है और फिर उससे च्युत नहीं होता। जो मानव वैशाख शुक्ला दशमीको गन्ध आदि उपचारों तथा श्वेत और सुगन्धित पुष्टोंसे भगवान् विष्णुकी पूजा करके उनकी सौ परिक्रमा करता और यज्ञपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराता है, वह भगवान् विष्णुके लोकमें स्थान पाता है। सरिताओंमें श्रेष्ठ जड्हपुत्री गङ्गा ज्येष्ठ शुक्ला दशमीको स्वर्गसे इस पृथ्वीपर उतरी थीं, इसलिये वह तिथि पुण्यदायिनी मानी गयी है। ज्येष्ठ मास, शुक्लपक्ष, हस्त नक्षत्र, बुध दिन, दशमी तिथि, गर करण, आनन्द योग, व्यतीपात, कन्याराशिके चन्द्रमा और वृष्णराशिके सूर्य—इन दसोंका योग महान् पुण्यमय बताया गया है। इन दस योगोंसे युक्त दशमी तिथि दस पाप हर लेती है। इसलिये उसे 'दशहरा' कहते हैं। जो इस 'दशहरा'में गङ्गाजीके पास पहुँचकर प्रसन्नचित्त हो विधिपूर्वक गङ्गाजीके जलमें स्नान करता है, वह भगवान् विष्णुके धाममें जाता है। मनु आदि

स्मृतिकारोंने आषाढ़ शुक्ला दशमीको पुण्य-तिथि कहा है, अतः उसमें किये जानेवाले स्नान, जप, दान और होम स्वर्गलोककी प्राप्ति करानेवाले हैं।



श्रावण शुक्ला दशमी सम्पूर्ण आशाओंकी पूर्ति करनेवाली है। इसमें गन्ध आदि उपचारोंसे भगवान् शङ्करकी पूजा उत्तम मानी गयी है। उस दिन किया हुआ उपवास या नक्तव्रत, ब्राह्मणभोजन, जप, सुवर्णदान तथा धेनु आदिका दान सब पापोंका नाशक बताया गया है।

द्विजश्रेष्ठ! भाद्रपद शुक्ला दशमीको 'दशावतार-व्रत' किया जाता है। उस दिन जलाशयमें स्नान करके सन्ध्यावन्दन तथा देवता, ऋषि और पितरोंका तर्पण करनेके पश्चात् एकाग्रचित्त हो दशावतार

विग्रहोंकी पूजा करनी चाहिये। मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, त्रिविक्रम (वामन), परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध तथा कल्पि—इन दसोंकी सुवर्णमयी मूर्तिं बनवाकर विधिपूर्वक पूजा करे और दस ब्राह्मणोंका सत्कार करके उन्हें उन मूर्तियोंका दान कर दे। नारद! उस दिन उपवास या एक समय भोजनका व्रत करके ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उन्हें विदा करके एकाग्रचित्त हो स्वयं इष्टजनोंके साथ भोजन करे। जो भक्तिपूर्वक इस व्रतका पालन करता है, वह इस लोकमें उत्तम भोग भोगकर अन्तमें विमानद्वारा सनातन विष्णुलोकको जाता है। आश्विन शुक्ला दशमीको 'विजयादशमी' कहते हैं। उस दिन प्रातःकाल घरके आँगनमें गोबरके चार पिण्ड मण्डलाकार रखे। उनके भीतर श्रीराम, लक्ष्मण, भरत तथा शत्रुघ्न—इन चारोंकी पूजा करे। गोबरके ही बने हुए चार ढक्कनदार पात्रोंमें भीगा हुआ धान और चाँदी रखकर उसे धुले हुए वस्त्रसे ढक देना चाहिये। फिर पिता, माता, भाई, पुत्र, स्त्री और भृत्यसहित गन्ध, पुष्प और नैवेद्य आदिसे उस धान्यकी विधिपूर्वक पूजा करके नमस्कार करे। फिर पूजित ब्राह्मणोंको भोजन कराकर स्वयं भी भोजन करे। इस प्रकारकी विधिका पालन करके मनुष्य निश्चय ही एक वर्षतक सुखी और धन-धान्यसे सम्पन्न होता है। नारद! कार्तिक शुक्ला दशमीको 'सार्वभौम-व्रत'का पालन करे। उस दिन उपवास या एक समय भोजनका व्रत करके आधी रातके समय घर अथवा गाँवसे बाहर पूरे आदिके द्वारा दसों दिशाओंमें बलि दे। गोबरसे लिपी हुई भूमिपर मण्डल बनाकर उसमें अष्टदल कमल अङ्कित करे और उसमें गणेश आदि देवताओंकी पूजा करे।

मार्गशीर्ष शुक्ला दशमीको 'आरोग्यव्रत'का आचरण करे। दस ब्राह्मणोंका गन्ध आदिसे पूजन करे और उन्हें दक्षिणा देकर विदा करे। स्वयं उस दिन एक समय भोजन करके रहे। इस

प्रकार व्रत करके मनुष्य इस भूतलपर आरोग्य पाता और धर्मराजके प्रसादसे देवलोकमें देवताकी भाँति आनन्दका अनुभव करता है। पौष शुक्ला दशमीको विश्वेदेवोंकी पूजा करनी चाहिये। विश्वेदेव दस हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं—क्रतु, दक्ष, वसु, सत्य, काल, काम, मुनि, गुरु, विप्र और राम। इन सबमें भगवान् विष्णु भलीभाँति विराजमान हैं। विश्वेदेवोंकी कुशमयी प्रतिमाएँ बनाकर उन्हें कुशके ही आसनोंपर स्थापित करे। आसनोंपर स्थित हो जानेपर उनमेंसे प्रत्येकका गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य आदिके द्वारा पूजन करे। प्रत्येकको दक्षिणा देकर प्रणाम करनेके अनन्तर उन सबका विसर्जन करे। उनपर चढ़ी हुई दक्षिणाको श्रेष्ठ द्विजों अथवा गुरुको समर्पित करे। विप्रर्षे! इस प्रकार एक समय भोजनका व्रत करके जो व्रती पुरुष उक्त विधिका पालन करता है, वह उभय लोकके उत्तम भोगोंका अधिकारी होता है। नारद! माघ शुक्ला दशमीको इन्द्रियसंयमपूर्वक उपवास करके अङ्गिरा नामवाले दस देवताओंकी स्वर्णमयी प्रतिमा बनाकर गन्ध आदि उपचारोंसे उनकी भलीभाँति पूजा करनी चाहिये। आत्मा, आयु, मन, दक्ष, मद, प्राण, बर्हिष्मान्, गविष्ठ, दत्त और सत्य—ये दस अङ्गिरा हैं। उनकी पूजा करके दस ब्राह्मणोंको मिष्टान भोजन करावे और उक्त स्वर्णमयी मूर्तियाँ उन्हींको अर्पित कर दे। इससे स्वर्गलोककी प्राप्ति होती है। फाल्गुन शुक्ला दशमीको चौदह यमोंकी पूजा करे। यम, धर्मराज, मृत्यु, अन्तक, वैवस्वत, काल, सर्वभूतक्षय, औदुम्बर, दध्न, नील, परमेष्ठी, वृकोदर, चित्र और चित्रगुप्त—ये चौदह यम हैं। गन्ध आदि उपचारोंसे इनकी भलीभाँति पूजा करके कुशसहित तिलमिश्रित जलकी तीन-तीन अङ्गलियोंसे प्रत्येकका तर्पण करे। तदनन्तर ताँबेके पात्रमें लाल चन्दन, तिल, अक्षत, जौ और जल रखकर उन सबके द्वारा सूर्यको अर्घ्य दे। अर्घ्यका मन्त्र इस प्रकार है—

एहि सूर्यं सहस्रांशो तेजोराशे जगत्पते।
गृहाणाद्यं मया दत्तं भक्त्या मामनुकम्पय॥

(ना० पूर्व० १११। ६३)

‘सहस्रों किरणोंसे सुशोभित तेजोराशि जगदीश्वर सूर्यदेव! आइये, भक्तिपूर्वक मेरा दिया हुआ अर्घ्य स्वीकार कीजिये। साथ ही मुझे अपनी सहज कृपासे अपनाइये।’

इस मन्त्रसे अर्घ्य देकर चौदह ब्राह्मणोंको भोजन करावे तथा रजतमयी दक्षिणा दे। उन्हें विदा करके स्वयं भी भोजन करे। ब्रह्मन्! इस प्रकार विधिका पालन करके मनुष्य धर्मराजकी कृपासे इहलोकके धन, पुत्र आदि देवदुर्लभ भोगोंको भोगता है और देहावसान होनेपर श्रेष्ठ विमानपर बैठकर भगवान् विष्णुके लोकका भागी होता है।

द्वादश मासके एकादशी-व्रतोंकी विधि और महिमा तथा दशमी आदि तीन दिनोंके पालनीय विशेष नियम

सनातनजी कहते हैं—मुने! दोनों पक्षोंकी एकादशीको मनुष्य निराहार रहे और एकाग्रचित्त हो नाना प्रकारके पुष्टियोंसे शुभ एवं विचित्र मण्डप बनावे। फिर शास्त्रोक्त विधिसे भलीभाँति स्नान करके उपवास और इन्द्रियसंयमपूर्वक श्रद्धा और एकाग्रताके साथ नाना प्रकारके उपचार जप, होम, प्रदक्षिणा, स्तोत्रपाठ, दण्डवत्-प्रणाम तथा मनको प्रिय लगनेवाले जय-जयकारके शब्दोंसे विधिवत् श्रीविष्णुकी पूजा करे तथा रात्रिमें जागरण करे। ऐसा करनेसे मनुष्य भगवान् विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है। चैत्र शुक्ला एकादशीको उपवास करके श्रेष्ठ मनुष्य तीन दिनके लिये आगे बताये जानेवाले सभी नियमोंका पालन करनेके पश्चात् द्वादशीको भक्तिपूर्वक सनातन वासुदेवकी षोडशोपचारसे पूजा करे। तदनन्तर ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा दे और उनको विदा करके स्वयं भी भोजन करे। यह ‘कामदा’ नामक एकादशी है, जो सब पापोंका नाश करनेवाली है। यदि भक्तिपूर्वक इस तिथिको उपवास किया जाय तो यह भोग और मोक्ष देनेवाली होती है। वैशाख कृष्ण एकादशीको ‘वैरुद्धिनी’ कहते हैं। उस दिन उपवास करके दूसरे दिन भगवान् मधुसूदनकी पूजा करनी चाहिये। इसमें सुवर्ण, अन्न, कन्या और धेनुका

दान उत्तम माना गया है। वैरुद्धिनीका व्रत करके नियमपरायण मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो वैष्णवपद प्राप्त कर लेता है। वैशाख शुक्ला एकादशीको ‘मोहिनी’ कहते हैं। उस दिन उपवास करके दूसरे दिन स्नानके पश्चात् गन्ध आदिसे भगवान् पुरुषोत्तमकी पूजा करे। तदनन्तर ब्राह्मणभोजन कराकर वह सब पातकोंसे मुक्त हो जाता है।

ज्येष्ठ कृष्ण एकादशीको ‘अपरा’ कहते हैं। उस दिन नियमपूर्वक उपवास करके द्वादशीको प्रातः—काल नित्यकर्मसे निवृत्त हो भगवान् त्रिविक्रमकी विधिवत् पूजा करे। तदनन्तर श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा दे। ऐसा करनेवाला मानव सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है। ज्येष्ठ शुक्ला एकादशीको ‘निर्जला’ एकादशी कहते हैं। द्विजोत्तम! सूर्योदयसे लेकर सूर्योदयतक निर्जल उपवास करके दूसरे दिन द्वादशीके प्रातः—काल नित्यकर्म करनेके अनन्तर विविध उपचारोंसे भगवान् हृषीकेशका पूजन करे। तदनन्तर भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराकर मनुष्य चौबीस एकादशियोंका फल प्राप्त कर लेता है। आषाढ़ कृष्ण एकादशीको ‘योगिनी’ कहते हैं। उस दिन उपवास करके द्वादशीको नित्यकर्मके पश्चात् भगवान् नारायणकी पूजा करे। तत्पश्चात् श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा दे।

ऐसा करनेवाला पुरुष सम्पूर्ण दानोंका फल पाकर भगवान् विष्णुके धाममें आनन्दका अनुभव करता है। मुने! आषाढ़ शुक्ला एकादशीको उपवास करके सुन्दर मण्डप बनाकर उसमें विधिपूर्वक भगवान् विष्णुकी प्रतिमा स्थापित करे। वह प्रतिमा सोने या चाँदीकी बनी हुई अत्यन्त सुन्दर हो। उसकी चारों भुजाएँ शङ्ख, चक्र, गदा और पद्मसे



सुशोभित हों। उसे पीताम्बर धारण कराया गया हो और वह अच्छी तरह बिछे हुए सुन्दर पलंगपर विराज रही हो। तदनन्तर मन्त्रपाठपूर्वक पञ्चमृत एवं शुद्ध जलसे स्नान कराकर पुरुषसूक्तके सोलह मन्त्रोंसे षोडशोपचार पूजन करे। पाद्यसमर्पणसे लेकर आरती उतारनेतक सोलह उपचार होते हैं। तत्पश्चात् श्रीहरिकी इस प्रकार प्रार्थना करे—

सुमे त्वयि जगन्नाथं जगत्सुमं भवेदिदम्।
विबुद्धे त्वयि बुद्धं च जगत्सर्वं चराचरम्॥

(ना० पूर्व १२०। २३)

‘जगन्नाथ! आपके सो जानेपर यह सम्पूर्ण जगत् सो जाता है और आपके जाग्रत् होनेपर यह सम्पूर्ण चराचर जगत् भी जाग्रत् रहता है।’

इस प्रकार प्रार्थना करके भक्त पुरुष चातुर्मास्यके लिये शास्त्रविहित नियमोंको यथाशक्ति ग्रहण करे। तदनन्तर द्वादशीको प्रातःकाल षोडशोपचारद्वारा भगवान् शेषशायीकी पूजा करे। तत्पश्चात् ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उन्हें दक्षिणासे संतुष्ट करे। फिर स्वयं भी मौनभावसे भोजन करे। इस विधिसे भगवान्की ‘शयनी’ एकादशीका व्रत करके मनुष्य भगवान् विष्णुकी कृपासे भोग एवं मोक्षका भागी होता है। द्विजश्रेष्ठ! श्रावणके कृष्णपक्षमें एकादशीको ‘कामिका’ व्रत होता है। उस दिन श्रेष्ठ मनुष्य नियमपूर्वक उपवास करके द्वादशीको नित्यकर्मका सम्पादन करनेके अनन्तर षोडशोपचारसे भगवान् श्रीधरका पूजन करे। तदनन्तर ब्राह्मणोंको भोजन करा उन्हें दक्षिणा देकर विदा करनेके पश्चात् स्वयं भी भाई-बच्चुओंके साथ भोजन करे। जो इस प्रकार उत्तम ‘कामिकव्रत’ करता है, वह इस लोकमें सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्तकर भगवान् विष्णुके परम धाममें जाता है। श्रावण शुक्ला एकादशीको ‘पुत्रदा’ कहते हैं। उस दिन उपवास करके द्वादशीको नियमपूर्वक रहकर षोडशोपचारसे भगवान् जनार्दनकी पूजा करे। तदनन्तर ब्राह्मणभोजन कराकर उन्हें दक्षिणा दे। इस प्रकार करनेवाला इहलोकमें उनसे सद्गुणसम्पन्न पुत्र पाकर सम्पूर्ण देवताओंसे वन्दित हो साक्षात् भगवान् विष्णुके धाममें जाता है।

भाद्रपद कृष्ण एकादशीको ‘अजा’ कहते हैं। उस दिन उपवास करके द्वादशीके दिन विभिन्न उपचारोंसे भगवान् उपेन्द्रकी पूजा करनी चाहिये। फिर ब्राह्मणोंको मिष्ठान भोजन कराकर दक्षिणा दे विदा करे। इस प्रकार भक्तिपूर्वक एकाग्रभावसे ‘अजा’ एकादशीका व्रत करके मनुष्य इहलोकमें सम्पूर्ण उत्तम भोगोंको भोगता और अन्तमें वैष्णवधामको जाता है। भाद्रपद शुक्ला एकादशीका नाम ‘पद्मा’ है। उस दिन उपवास करके नित्य पूजन करनेके अनन्तर ब्राह्मणको जलसे भरा घट

दान करे। द्विजोत्तम! पहलेसे स्थापित प्रतिमाका उत्सव करके उसे जलाशयके निकट ले जाय और जलसे स्पर्श कराकर उसकी विधिपूर्वक पूजा करे। फिर उसे घरमें लाकर बायीं करवटसे सुला दे। तदनन्तर प्रातःकाल द्वादशीको गन्ध आदि उपचारोंद्वारा भगवान् वामनकी पूजा करे। तत्पश्चात् ब्राह्मणोंको भोजन कराकर दक्षिणा दे विदा करे। जो इस प्रकार 'पद्मा'का परम उत्तम व्रत करता है, वह इस लोकमें भोग पाकर अन्तमें इस प्रपञ्चसे मुक्त हो जाता है। आश्विन कृष्ण एकादशीको 'इन्दिरा' कहते हैं। उस दिन उपवास करके शालग्राम शिलाके समुख मध्याह्नकालमें श्राद्ध करे। ब्रह्मन्! यह भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला होता है। तदनन्तर द्वादशीको प्रातःकाल भगवान् पद्मनाभकी पूजा करके विद्वान् पुरुष ब्राह्मणोंको भोजन करावे और दक्षिणा देकर उन्हें विदा करनेके पश्चात् स्वयं भी भोजन करे। इस प्रकार 'इन्दिरा एकादशी'का व्रत करनेवाला मनुष्य इस लोकमें मनोवाञ्छित भोगोंको भोगकर करोड़ों पितरोंका उद्धार करके अन्तमें भगवान् विष्णुके धाममें जाता है। विप्रवर! आश्विन शुक्ल एकादशीको 'पापांकुशा' कहते हैं। उस दिन विधिपूर्वक उपवास करके द्वादशीके दिन भगवान् विष्णुकी पूजा करे। तदनन्तर श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भोजन करा उन्हें दक्षिणा दे भक्तिभावसे प्रणाम करके विदा करे। फिर स्वयं भी भोजन करे। जो मनुष्य इस प्रकार भक्तिपूर्वक पापांकुशा एकादशीका व्रत करता है, वह इस लोकमें उत्तम भोगोंको भोगकर भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है।

द्विजश्रेष्ठ! कार्तिक कृष्णपक्षमें 'रमा' नामकी एकादशीको विधिवत् ज्ञान करके द्वादशीको प्रातः-काल केशी दैत्यका वध करनेवाले, देवताओंके भी देवता सनातन भगवान् केशवकी पूजा करे। तदनन्तर ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उन्हें दक्षिणा देकर विदा करे। इस प्रकार व्रत करके

मनुष्य इस लोकमें मनोवाञ्छित भोग भोगनेके पश्चात् विमानद्वारा वैकुण्ठमें जाकर भगवान् लक्ष्मीपतिका सामीप्य लाभ करता है। कार्तिक शुक्ला एकादशीको 'प्रबोधिनी' कहते हैं। उस दिन उपवास करके रातमें सोये हुए भगवान् को गीत आदि माङ्गलिक उत्सवोंद्वारा जगाये। उस समय ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेदके विविध मन्त्रों और नाना प्रकारके वाद्योंके द्वारा भगवान् को जगाना चाहिये। द्राक्षा, ईख, अनार, केला और सिंधाड़ा आदि वस्तुएँ भगवान् को अर्पित करनी चाहिये। तत्पश्चात् रात बीतनेपर दूसरे दिन सबेरे ज्ञान और नित्यकर्म करके पुरुषसूक्तके मन्त्रोंद्वारा भगवान् गदादामोदरकी षोडशोपचारसे पूजा करनी चाहिये। फिर ब्राह्मणोंको भोजन करा उन्हें दक्षिणासे संतुष्ट करके विदा करे। इसके बाद आचार्यको भगवान् की स्वर्णमयी प्रतिमा और धेनुका दान करना चाहिये। इस प्रकार जो भक्ति और आदरपूर्वक 'प्रबोधिनी एकादशी'का व्रत करता है, वह इस लोकमें श्रेष्ठ भोगोंका उपभोग करके अन्तमें वैष्णवपद प्राप्त कर लेता है।

मार्गशीर्ष मासके कृष्णपक्षकी एकादशीको 'उत्पन्ना' एकादशी कहते हैं। उस दिन उपवास करके द्वादशीको गन्ध आदि उपचारोंसे भगवान् श्रीकृष्णकी पूजा करे। तत्पश्चात् श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भोजन करा उन्हें दक्षिणा दे विदा करके स्वयं भी इष्टजनोंके साथ एकाग्र होकर भोजन करे। इस प्रकार जो भक्तिभावसे 'उत्पन्ना'का व्रत करता है, वह अन्तकालमें श्रेष्ठ विमानपर बैठकर भगवान् विष्णुके लोकमें चला जाता है। मार्गशीर्ष शुक्ल एकादशीको 'मोक्षा' (मोक्षदा) एकादशी कहते हैं। उस दिन उपवास करके द्वादशीको प्रातःकाल सम्पूर्ण उपचारोंसे विश्वरूपधारी भगवान् अनन्तकी पूजा करे। फिर ब्राह्मणोंको भोजन कराये और दक्षिणा देकर विदा करनेके पश्चात् स्वयं भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। इस प्रकार व्रत

करके मनुष्य इहलोकमें मनोवाञ्छित भोगोंको भोगकर पहले और पीछेकी दस-दस पीढ़ियोंका उद्धार करके भगवान् श्रीहरिके धाममें जाता है। पौष मासके कृष्णपक्षकी एकादशीको 'सफला' कहते हैं। उस दिन उपवास करके द्वादशीको सभी उपचारोंसे भगवान् अच्युतकी पूजा करे। फिर ब्राह्मणोंको मिष्ठान भोजन करावे और दक्षिणा देकर विदा करे। ब्रह्मन्! इस प्रकार 'सफला' एकादशीका विधिपूर्वक व्रत करके मनुष्य इहलोकमें सम्पूर्ण भोगोंका उपभोग करके अन्तमें वैष्णवपदको प्राप्त होता है। पौष शुक्ला एकादशीको 'पुत्रदा' कहा गया है। उस दिन उपवास करके द्वादशीके दिन अर्घ्य आदि उपचारोंसे भगवान् चक्रधारी विष्णुकी पूजा करे। फिर श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भोजन करा दक्षिणा दे विदा करके अपने इष्ट भाई-बन्धुओंके साथ शेष अन्न स्वयं भोजन करे। विग्रवर! इस प्रकार व्रत करनेवाला मनुष्य इहलोकमें मनोवाञ्छित भोग भोगकर अन्तमें श्रेष्ठ विमानपर आरूढ़ हो भगवान् विष्णुके धाममें जाता है।

द्विजश्रेष्ठ! माघके कृष्णपक्षमें 'षट्तिला' एकादशीको उपवास करके तिलोंसे ही स्नान, दान, तर्पण, हवन, भोजन एवं पूजनका काम ले। फिर द्वादशीको प्रातःकाल सब उपचारोंसे भगवान् वैकुण्ठकी पूजा करे। फिर ब्राह्मणोंको भोजन करा उन्हें दक्षिणा देकर विदा करे। इस प्रकार एकाग्रचित्त हो विधिपूर्वक व्रत करके मनुष्य इहलोकमें मनोवाञ्छित भोग भोगकर अन्तमें विष्णुपद प्राप्त कर लेता है। माघ शुक्ला एकादशीका नाम 'जया' है। उस दिन उपवास करके द्वादशीको प्रातःकाल परम पुरुष भगवान् श्रीपतिकी अर्चना करे। तदनन्तर ब्राह्मणोंको भोजन करा दक्षिणा दे विदा करके शेष अन्न अपने भाई-बन्धुओंके साथ स्वयं एकाग्रचित्त होकर भोजन करे। विग्रवर! जो इस प्रकार भगवान् केशवको संतुष्ट करनेवाला व्रत करता है, वह इहलोकमें श्रेष्ठ भोगोंको भोगकर

अन्तमें भगवान् विष्णुके धाममें जाता है। फाल्गुन कृष्ण एकादशीका नाम 'विजया' है। उस दिन उपवास करके द्वादशीको प्रातःकाल गन्ध आदि उपचारोंसे भगवान् योगीश्वरकी पूजा करे। तदनन्तर ब्राह्मणोंको भोजन करा दक्षिणासे संतुष्ट करके उन्हें विदा करनेके पश्चात् स्वयं मौन होकर भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। इस प्रकार व्रत करनेवाला मानव इहलोकमें अभीष्ट भोगोंको भोगकर देहान्त होनेके बाद देवताओंसे सम्मानित हो भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है। द्विजोत्तम! फाल्गुनके शुक्लपक्षमें 'आमलकी' एकादशीको उपवास करके द्वादशीको प्रातःकाल सम्पूर्ण उपचारोंसे भगवान् पुण्डरीकाक्षका भक्तिपूर्वक पूजन करे। तदनन्तर ब्राह्मणोंको उत्तम अन्न भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा दे। इस प्रकार फाल्गुनके शुक्लपक्षमें 'आमलकी' नामवाली एकादशीको विधिपूर्वक पूजन आदि करके मनुष्य भगवान् विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है। ब्रह्मन्! चैत्रके कृष्णपक्षमें 'पापमोचनी' नामवाली एकादशीको उपवास करके द्वादशीको प्रातःकाल षोडशोपचारसे भगवान् गोविन्दकी पूजा करे। तत्पश्चात् ब्राह्मणोंको भोजन करा दक्षिणा दे उन्हें विदा करके स्वयं भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। जो इस प्रकार इस 'पापमोचनी'का व्रत करता है, वह तेजस्वी विमानद्वारा भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है।

ब्रह्मन्! इस प्रकार कृष्ण तथा शुक्लपक्षमें एकादशीका व्रत मोक्षदायक कहा गया है। एकादशी व्रत तीन दिनमें साध्य होनेवाला बताया गया है। वह सब व्रतोंमें उत्तम और पापोंका नाशक है, अतः उसका महान् फल जानना चाहिये। नारद! इन तीन दिनके भीतर चार समयका भोजन त्याग देना चाहिये। प्रथम और अन्तिम दिनमें एक-एक बारका और बिचले दिनमें दोनों समयका भोजन त्याज्य है। अब मैं तुम्हें इस तीन दिनके व्रतमें पालन करने योग्य नियम बतलाता हूँ। काँसका

बर्तन, मांस, मसूर, चना, कोदो, शाक, मधु, पराया अन्न, पुनर्भोजन (दो बार भोजन) और मैथुन—दशमीके दिन इन दस वस्तुओंसे वैष्णव पुरुष दूर रहे। जुआ खेलना, नींद लेना, पान खाना, दाँतुन करना, दूसरेकी निन्दा करना, चुगली खाना, चोरी करना, हिंसा करना, मैथुन करना, क्रोध करना और झूठ बोलना—एकादशीको ये ग्यारह बातें न करे। काँस, मांस, मदिरा, मधु, तेल, झूठ बोलना, व्यायाम करना, परदेशमें जाना,

दुबारा भोजन, मैथुन, जो स्पर्श करने योग्य नहीं है उनका स्पर्श करना और मसूर खाना—द्वादशीको इन बारह वस्तुओंको न करे*। विप्रवर! इस प्रकार नियम करनेवाला पुरुष यदि शक्ति हो तो उपवास करे। यदि शक्ति न हो तो बुद्धिमान् पुरुष एक समय भोजन करके रहे, किंतु रातमें भोजन न करे। अथवा अयाचित वस्तु (बिना माँगे मिली हुई चीज) -को उपयोग करे, किंतु ऐसे महत्त्वपूर्ण व्रतका त्याग न करे।

बारह महीनोंके द्वादशी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा तथा आठ महाद्वादशियोंका निरूपण

सनातनजी कहते हैं—अनघ! अब मैं तुमसे द्वादशीके व्रतोंका वर्णन करता हूँ जिनका पालन करके मनुष्य भगवान् विष्णुका अत्यन्त प्रिय होता है। चैत्र शुक्ला द्वादशीको 'मदनव्रत'का आचरण करे। सफेद चावलसे भरे हुए एक नूतन कलशकी स्थापना करे, जिसमें कोई छेद न हो। वह अनेक प्रकारके फलोंसे युक्त इक्षुदण्डसंयुक्त दो श्वेत वस्त्रोंसे आच्छादित, श्वेत चन्दनसे चर्चित, नाना प्रकारके भक्ष्य पदार्थोंसे सम्पन्न तथा अपनी शक्तिके अनुसार सुवर्णसे सुशोभित हो। उसके ऊपर गुड़सहित ताँबेका पात्र रखे। उस पात्रमें कामस्वरूप भगवान् अच्युतका गन्ध आदि उपचारोंसे पूजन करे। द्वादशीको उपवास करके दूसरे दिन प्रातः-काल पुनः भगवान्की पूजा करे। वहाँ चढ़ी हुई वस्तुएँ ब्राह्मणको दे दे। फिर ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उन्हें दक्षिणा दे। इस प्रकार

एक वर्षतक प्रत्येक द्वादशीको यह व्रत करके आचार्यको घृत-धेनुसहित सब सामग्रियोंसे युक्त शश्यादान दे। तदनन्तर वस्त्र आदिसे ब्राह्मण-दम्पतिकी पूजा करके उन्हें सुवर्णमय कामदेव तथा दूध देनेवाली श्वेत गौ दान करे। दान करते समय यह कहे कि 'कामरूपी श्रीहरि मुझपर प्रसन्न हों।' जो इस विधिसे 'मदनद्वादशीव्रत'-का पालन करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुकी समता प्राप्त कर लेता है। इसी तिथिको 'भर्त्तद्वादशी'का व्रत बताया गया है। इसमें सुन्दर शश्या बिछाकर उसपर लक्ष्मीसहित भगवान् विष्णुको स्थापित करके उनके ऊपर फूलोंसे मण्डप बनावे। तत्पश्चात् व्रती पुरुष गन्ध आदि उपचारोंसे भगवान्की पूजा करे। माङ्गलिक गीत, वाद्य आदिके द्वारा रातमें जागरण करे, फिर दूसरे दिन प्रातःकाल शश्यासहित भगवान् विष्णुकी

* अथ ते नियमान् वच्च व्रते ह्यस्मिन् दिनत्रये। कांस्यं मांसं मसूरान् चणकान् कोद्रवांस्तथा॥
शाकं मधुं परान्नं च पुनर्भोजनमैथुने। दशम्यां दश वस्तुनि वर्जयेद्वैष्णवः सदा॥
द्यूतक्रीडां च निद्रां च ताम्बूलं दन्तधावनम्। परापवादं पैशुन्यं स्तेयं हिंसां तथा रतिम्॥
कोपं ह्यनृतवाक्यं च एकादश्यां विवर्जयेत्। कांस्यं मांसं सुरां क्षौद्रं तैलं वितथभाषणम्॥
व्यायामं च प्रवासं च पुनर्भोजनमैथुने। अस्पृश्यस्पर्शमासूरे द्वादश्यां द्वादश त्यजेत्॥

सुवर्णमयी प्रतिमाका श्रेष्ठ ब्राह्मणको दान करे। ब्राह्मणोंको भोजन कराकर दक्षिणाद्वारा उन्हें संतुष्ट करके विदा करे। इस तरह व्रत करनेवाले पुरुषका दाम्पत्यसुख चिरस्थायी होता है और वह सात जन्मोंतक इहलोक और परलोकके अभीष्ट भोगोंको भोगता रहता है।

वैशाख शुक्ला द्वादशीको उपवास और इन्द्रियसंयमपूर्वक गन्ध आदि उपचारोंद्वारा भक्तिभावसे भगवान् माधवकी पूजा करे। फिर तृप्तिजनक मधुर पकवान और एक घड़ा जल ब्राह्मणको विधिपूर्वक देवे। 'भगवान् माधव मुझपर प्रसन्न हों', यही उसका उद्देश्य होना चाहिये। ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशीको गन्ध आदि उपचारोंके द्वारा भगवान् त्रिविक्रमकी पूजा करके व्रती पुरुष ब्राह्मणको मिष्ठानसे भरा हुआ करवा निवेदन करे। तत्पश्चात् एक समय भोजनका व्रत करे। इस व्रतसे संतुष्ट होकर देवदेव भगवान् त्रिविक्रम जीवनमें विपुल भोग और अन्तमें मोक्ष भी देते हैं। आषाढ़ शुक्ला द्वादशीको गन्ध आदिसे पृथक्-पृथक् बारह ब्राह्मणोंकी पूजा करके उन्हें

मिष्ठान भोजन करावे। फिर उनके लिये वस्त्र छड़ी, यज्ञोपवीत, अँगूठी और जलपात्र—इन वस्तुओंको भक्तिपूर्वक दान करे। 'भगवान् विष्णु मुझपर प्रसन्न हों'—यही उस दानका उद्देश्य होना चाहिये। श्रावण शुक्ला द्वादशीको व्रती पुरुष भगवत्परायण हो गन्ध आदि उपचारोंसे भक्तिपूर्वक भगवान् श्रीधरकी पूजा करे। फिर उत्तम ब्राह्मणोंको दही-भात भोजन कराकर चाँदीकी दक्षिणा दे, उन्हें नमस्कार करके विदा करे। मन-ही-मन यह भावना करे कि 'मेरे इस व्रतसे देवेश्वर भगवान् श्रीधर प्रसन्न हों।' भाद्रपद शुक्ला द्वादशीको व्रती पुरुष भगवान् वामनकी पूजा करके उनके आगे बारह ब्राह्मणोंको खीर भोजन करावे। तत्पश्चात् स्वर्णमयी दक्षिणा दे। वह भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताको करनेवाला होता है। आश्विन शुक्ला द्वादशीको गन्ध आदि उपचारोंसे भगवान् पद्मनाभकी पूजा करे और उनके आगे ब्राह्मणोंको मिष्ठान भोजन करावे। साथ ही वस्त्र और सुवर्ण-दक्षिणा दे। द्वितीय ! इस व्रतसे संतुष्ट होकर भगवान् पद्मनाभ श्वेतद्वीपकी प्रासि कराते हैं और इहलोकमें भी मनोवाज्ज्ञत भोग प्रदान करते हैं। कार्तिक मासके कृष्णपक्षमें 'गोवत्सद्वादशी' का व्रत होता है। उसमें बछड़ेसहित गौकी आकृति लिखकर सुगन्धित चन्दन आदिके द्वारा तथा पुष्पमालाओंसे उसकी पूजा करे। फिर ताम्रपात्रमें फूल, अक्षत और तिल रखकर उन सबके द्वारा विधिपूर्वक अर्घ्य दान करे। नारद! निमाङ्कित मन्त्रसे उसके चरणोंमें अर्घ्य देना चाहिये—

क्षीरोदार्णवसम्पूते सुरासुरनमस्कृते।
सर्वदेवमये देवि सर्वदेवैरलंकृते॥
मातर्मातर्गवां मातर्गृह्णाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते॥

(ना० पूर्व० १२१। ३०-३१)

'क्षीरसागरसे प्रकट हुई, सर्वदेवभूषिता, देव-

दानववन्दिता, सम्पूर्ण देवस्वरूपा देवि! तुम्हें नमस्कार है। मातः! गोमातः! यह अर्ध्य ग्रहण कीजिये।'

तदनन्तर उड़द आदिसे बने हुए बड़े निवेदन करे। इस प्रकार अपने वैभवके अनुसार दस, पाँच या एक बड़ा अर्पण करना चाहिये। उस समय इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये—

सुरभे त्वं जगन्माता नित्यं विष्णुपदे स्थिता ।

सर्वदेवमयि ग्रासं मया दत्तमिमं ग्रस ॥

सर्वदेवमये देवि सर्वदेवैरलंकृते ।

मातर्माभिलषितं सफलं कुरु नन्दिनि ॥

(ना० पूर्व० १२१। ३२—३४)

'सुरभी! तुम सम्पूर्ण जगत्की माता हो और सदा भगवान् विष्णुके धाममें निवास करती हो। सर्वदेवमयी देवि! मेरे दिये हुए इस ग्रासको ग्रहण करो। देवि! तुम सर्वदेवस्वरूपा हो। सम्पूर्ण देवता तुम्हें विभूषित करते हैं। माता नन्दिनी! मेरी अभिलाषा सफल करो।'

द्विजोत्तम! उस दिन तेलका पका हुआ और बटलोईका पका हुआ अब्र न खाय। गायका दूध, दही, घी और तक्र भी त्याग दे। ब्रह्मन्! कार्तिक शुक्ला द्वादशीको गन्ध आदि उपचारोंसे एकाग्रचित्त हो भगवान् दामोदरकी पूजा करे और उनके आगे बारह ब्राह्मणोंको पकवान भोजन करावे। तदनन्तर जलसे भरे हुए घड़ोंको वस्त्रसे आच्छादित और पूजित करके सुपारी, लड्डू और सुवर्णके साथ उन सबको प्रसन्नतापूर्वक अर्पण करे। ऐसा करनेपर मनुष्य भगवान् विष्णुका प्रिय भक्त और सम्पूर्ण भोगोंका भोक्ता होता है और शरीरका

अन्त होनेपर वह भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त कर लेता है।

मार्गशीर्ष शुक्ला द्वादशीको परम उत्तम 'साध्य-व्रत'का अनुष्ठान करना चाहिये। मनोभाव, प्राण, नर, अपान, वीर्यवान्, चिति, हय, नय, हंस, नारायण, विभु और प्रभु—ये बारह साध्यगण कहे गये हैं^१। चावलोंपर इनका आवाहन करके गन्ध-पुष्प आदिके द्वारा पूजन करना चाहिये। तदनन्तर 'भगवान् नारायण प्रसन्न हों', इस भावनासे बारह श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उन्हें उत्तम दक्षिणा दे विदा करे। उसी दिन 'द्वादशादित्य' नामक व्रत भी विख्यात है। उस दिन बुद्धिमान् पुरुष बारह आदित्योंकी पूजा करे। धाता, मित्र, अर्यमा, पूषा, शक्र, अंश, वरुण, भग, त्वष्टा, विवस्वान्, सविता और विष्णु—ये बारह आदित्य बताये गये हैं^२। प्रत्येक मासके शुक्लपक्षकी द्वादशीको यज्ञपूर्वक बारह आदित्योंकी पूजा करते हुए एक वर्ष व्यतीत करे। व्रतके अन्तमें सोनेकी बारह प्रतिमाएँ बनवाये और विधिपूर्वक उनकी पूजा करके बारह श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको सत्कारपूर्वक मिष्ठान भोजन करावे। तत्पश्चात् व्रती पुरुष प्रत्येक ब्राह्मणको एक-एक प्रतिमा दे। इस प्रकार द्वादशादित्य नामक व्रत करके मनुष्य सूर्यलोकमें जा वहाँके भोगोंका चिरकालतक उपभोग करनेके पश्चात् पृथ्वीपर धर्मात्मा मनुष्य होता है। मनुष्ययोनिमें उसे रोग नहीं होते। उस व्रतके पुण्यसे वह पुनः उसी व्रतको पाता है और पुनः उसके पुण्यसे सूर्यमण्डलको भेदकर निरञ्जन, निराकार एवं निर्द्वन्द्व ब्रह्मको प्राप्त होता है।

१. मनोभवस्तथा प्राणो नरोऽपानश्च वीर्यवान्। चितिर्हयो नयश्चैव हंसो नारायणस्तथा ॥
विभुश्चापि प्रभुश्चैव साध्या द्वादशा कीर्तिः ।

(ना० पूर्व० १२१। ५१-५२)

२. धाता मित्रोऽर्यमा पूषा शक्रोऽशो वरुणो भगः। त्वष्टा विवस्वान् सविता विष्णुद्वादश ईरिताः ॥

(ना० पूर्व० १२१। ५५-५६)

द्विजोत्तम ! उक्त तिथिको ही 'अखण्ड' नामक व्रत कहा गया है। उसमें भगवान् जनार्दनकी सुवर्णमयी मूर्ति बनाकर गन्ध, पुष्ट आदिसे उसकी पूजा करके भगवान्‌के आगे बारह ब्राह्मणोंको भोजन करावे। प्रत्येक मासकी द्वादशीको ऐसा करके स्वयं रातमें भोजन करे और जितेन्द्रिय भावसे रहे। तत्पश्चात् वर्ष पूरा होनेपर उस स्वर्ण-मूर्तिका विधिपूर्वक पूजन करके दूध देनेवाली गायके साथ उसका आचार्यको दान करे। तदनन्तर बारह श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको खाँड़ और खीर भोजन कराकर उन्हें बारह सुवर्णखण्डकी दक्षिणा दे नमस्कार करे। इस प्रकार व्रत पूरा करके जो भगवान् जनार्दनको प्रसन्न करता है, वह सुवर्णमय विमानसे श्रीविष्णुके परम धाममें जाता है।

पौष मासके कृष्णपक्षकी द्वादशीको 'रूप-व्रत' बताया गया है। ब्रह्मन् ! व्रती पुरुषको चाहिये कि वह दशमीको विधिपूर्वक ज्ञान करके सफेद या किसी एक रंगवाली गायके गोबरको धरतीपर गिरनेसे पहले आकाशमेंसे ही ले ले। उस गोबरसे एक सौ आठ पिण्ड बनाकर उन्हें ताँबे या मिट्टीके पात्रमें रखकर धूपमें सुखा ले। फिर एकादशीको उपवास करके भगवान् विष्णुकी स्वर्णमयी प्रतिमाका विधिपूर्वक पूजन और रात्रिमें जागरण करे। सुन्दर मङ्गलमय गीतवाद्य, स्तोत्र-पाठ और जप आदिके द्वारा जागरणका कार्य सफल बनावे। तत्पश्चात् प्रातः-काल जलसे भरे हुए कलशपर तिलसे भरा पात्र रखकर उसके ऊपर उस स्वर्णमयी प्रतिमाको रखे और विभिन्न उपचारोंसे उसकी पूजा करे। इसके बाद दो काष्ठोंके रगड़ने आदिके द्वारा नूतन अग्नि उत्पन्न करके उसकी पूजा करे और विद्वान् पुरुष उस प्रचलित अग्निमें तिल और घीसहित एक-एक गोमय-पिण्डका विष्णुसम्बन्धी द्वादशाक्षर*-

मन्त्रसे होम करे। तत्पश्चात् पूर्णाहुति करके प्रेमपूर्ण हृदयसे प्रसन्नतापूर्वक एक सौ आठ ब्राह्मणोंको खीर भोजन करावे। फिर कलशसहित वह प्रतिमा आचार्यको अर्पित करे। तदनन्तर दूसरे ब्राह्मणोंको यथाशक्ति दक्षिणा दे। पुरुष हो या स्त्री, इस व्रतका आदरपूर्वक पालन करके वह रूप और सौभाग्य प्राप्त कर लेती है।

माघ शुक्ला द्वादशीको शालग्रामशिलाकी विधिपूर्वक भक्तिभावसे पूजा करके उसके मुख्यभागमें सुवर्ण रखे। फिर उसे चाँदीके पात्रमें रखकर दो श्वेत वस्त्रोंसे ढक दे। तत्पश्चात् वेदवेत्ता ब्राह्मणको उसका दान दे। दान देनेके पश्चात् उस ब्राह्मणको खाँड़ और घीके साथ हितकर खीरका भोजन करावे, यह करके स्वयं एक समय भोजनका व्रत करते हुए भगवान् विष्णुके चिन्तनमें लगा रहे। ऐसा करनेवाला पुरुष यहाँ मनोवाञ्छित भोग भोगनेके पश्चात् विष्णुधाम प्राप्त कर लेता है। ब्रह्मन् ! फाल्गुन मासके शुक्लपक्षकी द्वादशीको श्रीहरिकी सुवर्णमयी प्रतिमाका गन्ध-पुष्ट आदिसे पूजन करके उसे वेदवेत्ता ब्राह्मणको दान कर दे। फिर बारह ब्राह्मणोंको भोजन करा उन्हें दक्षिणा देकर विदा करे। उसके बाद स्वयं भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। त्रिस्पृशा, उन्मीलनी, पक्षवर्धिनी, वञ्जुली, जया, विजया, जयन्ती तथा अपराजिता—ये आठ प्रकारकी द्वादशी तिथियाँ सब पापोंका नाश करनेवाली हैं। इनमें सदा उपवासपूर्वक व्रत रहना चाहिये।

श्रीनारदजीने पूछा—ब्रह्मन् ! इन सब द्वादशियोंका लक्षण कैसा है ? और उनका फल कैसा होता है, वह सब मुझे बताइये। इसके सिवा अन्य पुण्यदायक तिथियोंका भी परिचय दीजिये।

सूतजी कहते हैं—महर्षियो ! देवर्षि नारदने द्विजश्रेष्ठ सनातनजीसे जब इस प्रकार प्रश्न किया

* ३० नमो भगवते वासुदेवाय।

तो सनातन मुनिने अपने भाई महाभागवत नारदजीकी प्रशंसा करके कहा ।

सनातनजी बोले— भैया ! तुम तो साधु पुरुषोंके संशयका निवारण करनेवाले हो । तुमने यह बहुत सुन्दर प्रश्न किया है । मैं तुम्हें महाद्वादशियोंके पृथक्-पृथक् लक्षण और फल बतलाता हूँ । जिस दिन एकादशी सूर्योदयसे पहले— अरुणोदयकालमें ही निवृत्त हो गयी हो, (दिनभर द्वादशी हो और रातके अन्तिम भागमें त्रयोदशी आ गयी हो) उस दिन 'त्रिस्पृशा' नामवाली द्वादशी होती है । उसका महान् फल होता है । नारद ! जो मनुष्य उसमें उपवास करके भगवान् गोविन्दका पूजन करता है, वह निश्चय ही एक हजार अश्वमेध-यज्ञका फल पाता है । जब अरुणोदयकालमें एकादशी तिथि दशमीसे विद्ध हो (और एकादशी पूरे दिन रहकर दूसरे दिन भी कुछ कालतक विद्यमान हो) तो उस प्रथम दिनकी एकादशीको छोड़कर दूसरे दिन महाद्वादशीको उपवास करे (उसे 'उन्मीलनी' द्वादशी कहते हैं) । उस उन्मीलनी व्रतमें उत्तम पूजाकी विधिसे भगवान् वासुदेवका यजन करके मनुष्य एक सहस्र राजसूय-यज्ञका फल पाता है । जब सूर्योदयकालमें दशमी एकादशीका स्पर्श करती हो (और द्वादशीकी वृद्धि हुई हो) तो उस एकादशीको त्यागकर 'वञ्जुली' नामवाली उस महाद्वादशीको ही सदा उपवास करना चाहिये । उसमें सबको सदा अभयदान करनेवाले परम पुरुष संकर्षणदेवका गन्ध आदि उपचारोंसे भक्तिपूर्वक पूजन करे । यह महाद्वादशी सम्पूर्ण यज्ञोंका फल देनेवाली, सब पापोंको हर लेनेवाली तथा समस्त सम्पदाओंको देनेवाली कही गयी है । विप्रवर ! जब पूर्णिमा अथवा अमावास्या नामकी तिथियाँ बढ़ जाती हैं, तो उस पक्षकी द्वादशीका नाम 'पक्षवर्धिनी' होता है, जो महान् फल देनेवाली

है । उसमें सम्पूर्ण ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले तथा पुत्र और पौत्रोंको बढ़ानेवाले जगदीश्वर भगवान् प्रद्युम्ना पूजन करना चाहिये । जब शुक्लपक्षमें द्वादशी तिथि मध्य नक्षत्रसे युक्त हो तो उसका नाम 'जया' होता है । वह सम्पूर्ण शत्रुओंका विनाश करनेवाली है । उसमें समस्त कामनाओंके दाता और मनुष्योंको सम्पूर्ण सौभाग्य प्रदान करनेवाले लक्ष्मीपति भगवान् अनिरुद्धकी आराधना करनी चाहिये । जब शुक्लपक्षमें द्वादशी तिथि श्रवण नक्षत्रसे युक्त हो तो वह 'विजया' नामसे प्रसिद्ध होती है । उसमें सदा समस्त भोगोंके आश्रय तथा सम्पूर्ण सौख्य प्रदान करनेवाले भगवान् गदाधरकी पूजा करनी चाहिये । विप्रवर ! 'विजया'में उपवास करके मनुष्य सम्पूर्ण तीर्थोंका फल पाता है । जब शुक्लपक्षमें द्वादशी रोहिणी नक्षत्रसे युक्त होती है, तब वह महापुण्यमयी 'जयन्ती' नामसे प्रसिद्ध होती है । उसमें मनुष्योंको सिद्धि देनेवाले भगवान् वामनकी अर्चना करनी चाहिये । यह तिथि उपवास करनेपर सम्पूर्ण ब्रतोंका फल देती है, समस्त दानोंका फल प्रस्तुत करती है और भोग तथा मोक्ष देनेवाली होती है । जब शुक्लपक्षमें द्वादशी तिथि पुष्य नक्षत्रसे युक्त हो तो उसे 'अपराजिता' कहा गया है । वह सम्पूर्ण ज्ञान देनेवाली है । उसमें संसार-बन्धनका नाश करनेवाले, ज्ञानके समुद्र तथा रोग-शोकसे रहित भगवान् नारायणकी आराधना करनी चाहिये । उस तिथिको उपवास करके ब्राह्मणभोजन करानेवाला मनुष्य उस व्रतके पुण्यसे ही संसार-बन्धनसे मुक्त हो जाता है ।

जब आषाढ़ शुक्ला द्वादशीको अनुराधा नक्षत्र हो, तब दो व्रत करने चाहिये । यहाँ एक ही देवता है, इसलिये दो व्रत करनेमें दोष नहीं है । जब भाद्रपद शुक्ला द्वादशीको श्रवण नक्षत्रका योग हो और कार्तिक शुक्ला द्वादशीको रेवती

नक्षत्रका संयोग हो तो एकादशी और द्वादशी दोनों दिन व्रत रहने चाहिये। विप्रवर! इनके सिवा अन्यत्र द्वादशीको एक समय भोजन करके व्रत रहना चाहिये। यह व्रत स्वभावसे ही सब

पातकोंका नाश करनेवाला बताया गया है। द्वादशीसहित एकादशीका व्रत नित्य माना गया है, अतः यहाँ उसका उद्यापन नहीं कहा गया। इसे जीवनपर्यन्त करते रहना चाहिये।

त्रयोदशी-सम्बन्धी व्रतोंकी विधि और महिमा

सनातनजी कहते हैं—नारद! अब मैं तुम्हें त्रयोदशीके व्रत बतलाता हूँ, जिनका भक्तिपूर्वक पालन करके मनुष्य इस पृथ्वीपर सौभाग्यशाली होता है। चैत्र कृष्णपक्षकी त्रयोदशी शनिवारसे युक्त हो तो 'महावारुणी' मानी गयी है। यदि उसमें गङ्गा-स्नानका अवसर मिले तो वह कोटि सूर्यग्रहणोंसे अधिक फल देनेवाली है। चैत्रके कृष्णपक्षमें त्रयोदशीको शुभ योग, शतभिषा नक्षत्र और शनिवारका योग हो तो वह 'महामहावारुणी'- के नामसे विख्यात होती है। ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशीको 'दौर्भाग्यशमनव्रत' होता है। उस दिन नदीके जलमें स्नान करके पवित्र स्थानमें उत्पन्न हुए सफेद मदार, आक और लाल कनेरकी पूजा करे। उस समय आकाशमें सूर्यकी ओर देखकर निम्राङ्कित मन्त्रका उच्चारण करते हुए प्रार्थना करे—

**मन्दारकरवीराका भवन्तो भास्करांशजाः।
पूजिता मम दौर्भाग्यं नाशयन्तु नमोऽस्तु वः॥**

(ना० पूर्व० १२२। २०-२१)

'मदार! कनेर! और आक! आप लोग भगवान् भास्करके अंशसे उत्पन्न हुए हैं। अतः पूजित होकर मेरे दुर्भाग्यका नाश करें, आपको नमस्कार है।'

इस प्रकार जो भक्तिपूर्वक एक-एक वर्षतक इन तीनों वृक्षोंकी पूजा करता है, उसका दुर्भाग्य नष्ट हो जाता है। आषाढ़ शुक्ला त्रयोदशीको एक समय भोजनका व्रत करे। भगवती पार्वती और भगवान् शङ्कर—इन दोनों जगदीश्वरोंकी

यथाशक्ति सोने, चाँदी अथवा मिट्टीकी मूर्ति बनाकर उनकी पूजा करे। भगवती उमा सिंहपर बैठी हों और भगवान् शङ्कर वृषभपर। नारद!



इन दोनों प्रतिमाओंको देवमन्दिर, गोशाला अथवा ब्राह्मणके घरमें वेदमन्त्रद्वारा स्थापित करके लगातार पाँच दिनतक नित्य पूजन तथा एक समय भोजनके व्रतका पालन करे। तदनन्तर अन्तिम दिन प्रातःकाल स्नान करके पुनः उन दोनों प्रतिमाओंकी पूजा करे। फिर वेद-वेदाङ्कके ज्ञानसे सुशोभित ब्राह्मणको वे दोनों विग्रह समर्पित कर दे। पाँच वर्षोंतक प्रतिवर्ष इसी प्रकार करना चाहिये। पाँचवाँ वर्ष बीतनेपर दूध देनेवाली दो गौओंके साथ उन दोनों प्रतिमाओंका

दान करे। स्त्री हो या पुरुष—जो इस प्रकार इस शुभ व्रतका पालन करता है, वह सात जन्मोंतक दाम्पत्यसुखसे बच्चित नहीं होता—उसका दाम्पत्य-सम्बन्ध बीचमें खण्डित नहीं होता।

भाद्रपद शुक्ला त्रयोदशीको 'गोत्रिरात्रव्रत' बताया गया है। उस दिन भगवान् लक्ष्मीनारायणकी सोने या चाँदीकी प्रतिमा बनवाकर उसे पञ्चामृतसे स्नान करावे। तत्पश्चात् शुभ अष्टदल मण्डलमें पीठपर उस भगवद्विग्रहको स्थापित करके सुन्दर वस्त्र चढ़ाकर गन्ध आदिसे उसकी पूजा करे। तत्पश्चात् आरती करके अन्न और जलसहित घटदान करे। नारद! इस प्रकार तीन दिनतक सब विधिका पालन करके व्रतके अन्तमें गौका पूजन करे और भलीभाँति धनकी दक्षिणा देकर निम्राङ्कित मन्त्रसे गौको नमस्कारपूर्वक दान दे—
पञ्च गावः समुत्पन्ना मध्यमाने महोदधौ।
तासां मध्ये तु या नन्दा तस्यै धेवै नमो नमः॥

(ना० पूर्व० १२२। ३६-३७)

'जब क्षीरसमुद्रका मन्थन होने लगा, उस समय उससे पाँच गौएँ उत्पन्न हुईं। उनके मध्यमें जो नन्दा नामवाली गौ है, उस धेनुको बारम्बार नमस्कार है।'

तदनन्तर नीचे लिखे मन्त्रसे गायकी प्रदक्षिणा करके उसे ब्राह्मणको दान दे। (मन्त्र इस प्रकार है—)

गावो ममाग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः।

गावो मे पार्श्वतः सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

(ना० पूर्व० १२२। ३८)

'गौएँ मेरे आगे रहें, गौएँ मेरे पीछे रहें, गौएँ मेरे बगलमें रहें और मैं गौओंके बीचमें निवास करूँ।'

तत्पश्चात् ब्राह्मणदम्पतिका पूर्णतः सत्कार करके उन्हें भोजन करावे और उन्हें आदरपूर्वक लक्ष्मी-नारायणकी प्रतिमा दान करे। सहस्रों अश्वमेध

और सैकड़ों राजसूय यज्ञोंका अनुष्ठान करके मनुष्य जिस फलको पाता है, उसीको वह 'गोत्रिरात्रव्रत'से पा लेता है। आश्विन शुक्ला त्रयोदशीको तीन राततक 'अशोकव्रत' करे। उस दिन नारी उपवासपरायण हो अशोककी सुवर्णमयी प्रतिमा बनवाकर शास्त्रीय विधिसे उसकी प्रतिदिन पूजा और आदरपूर्वक एक सौ आठ परिक्रमा करे। उस समय इस मन्त्रका उच्चारण करना चाहिये—

हरेण निर्मितः पूर्वं त्वमशोक कृपालुना।
लोकोपकारकरणस्तत्प्रसीद शिवप्रिय॥

(ना० पूर्व० १२२। ४३)

'अशोक! तुम्हें पूर्वकालमें परम कृपालु भगवान् शङ्करने उत्पन्न किया है। तुम सम्पूर्ण जगत्का उपकार करनेवाले हो; अतः शिवप्रिय अशोक! तुम मुझपर प्रसन्न होओ।'

तदनन्तर तीसरे दिन, उस अशोकवृक्षमें भगवान् शङ्करकी विधिवत् पूजा करके ब्राह्मणको भोजन करावे और उसे अशोक-प्रतिमाका दान करे। इस प्रकार व्रत करनेवाली नारी कभी वैधव्यका कष्ट नहीं पाती। वह पुत्र-पौत्र आदिके साथ रहकर अपने पतिकी अत्यन्त प्रियतमा होती है। कार्तिक कृष्णा त्रयोदशीको एकाग्रचित्त हो एक समय भोजनका व्रत करे। प्रदोषकालमें तेलका दीपक जलाकर उसकी यत्नपूर्वक पूजा करे और घरके द्वारपर बाहरके भागमें उस दीपकको इस उद्देश्यसे रखे कि इसके दानसे यमराज मुझपर प्रसन्न हों। विप्रेन्द्र! ऐसा करनेपर मनुष्यको यमराजकी पीड़ा नहीं प्राप्त होती। द्विजोत्तम! कार्तिक शुक्ला त्रयोदशीको मनुष्य एक समय भोजन करके व्रत रखे। प्रदोषकालमें पुनः स्नान करके मौन और एकाग्रचित्त हो बत्तीस दीपकोंकी पद्मक्षिसे भगवान् शिवको आलोकित करे। घीसे दीपकोंको जलाये और गन्ध आदिसे भगवान् शिवकी पूजा करे।

फिर नाना प्रकारके फलों और नैवेद्योंद्वारा उन्हें संतुष्ट करे। तदनन्तर निम्नलिखित नामोंसे देवेश्वर शिवकी स्तुति करे—

रुद्र, भीम, नीलकण्ठ और वेधा (स्नष्टा)-को नमस्कार है। कपर्दी (जटा-जूटधारी), सुरेश तथा व्योमकेशको नमस्कार है। वृषध्वज, सोम तथा सोमनाथको नमस्कार है। दिगम्बर, भृङ्ग, उमाकान्त और वद्धी (वृद्धि करनेवाले) शिवको नमस्कार है। तपोमय, व्यास और शिपिविष्ट (तेजस्वी) भगवान् शङ्करको नमस्कार है। व्यालप्रिय (सर्पोंको पसंद करनेवाले), व्याल (सर्पस्वरूप) और व्यालपति शिवको नमस्कार है। महीधर (पर्वतरूप), व्योम (आकाशस्वरूप) और पशुपतिको नमस्कार है। त्रिपुरहन्ता, सिंह, शार्दूल तथा वृषभको नमस्कार है। मित, मितनाथ, सिद्ध, परमेष्ठी, वेदगीत, गुस और वेदगुह्य शिवको नमस्कार है। दीर्घ, दीर्घरूप, दीर्घार्थ, महीयान्, जगदाधार और व्योमस्वरूप शिवको नमस्कार है। कल्याणस्वरूप, विशिष्ट-पुरुष, शिष्ट (साधु-महात्मा), परमात्मा, गजकृत्तिधर (वस्त्ररूपसे हाथीका चमड़ा धारण करनेवाले), अन्धकासुरहन्ता भगवान् शिवको नमस्कार है। नील, लोहित एवं शुक्ल वर्णवाले, चण्डमुण्डप्रिय, भक्तिप्रिय, देवस्वरूप, दक्षयज्ञनाशक तथा अविनाशी शिवको नमस्कार है। महेश ! आपको नमस्कार है। महादेव ! सबका संहार करनेवाले आपको नमस्कार है। आपके तीन नेत्र हैं। आप तीनों वेदोंके आश्रय हैं। वेदाङ्गस्वरूप आपको बार-बार नमस्कार है। आप अर्थ हैं, अर्थस्वरूप हैं और परमार्थ हैं, आपको नमस्कार है। विश्वरूप, विश्वमय तथा विश्वनाथ भगवान् शिवको नमस्कार है। जो सबका कल्याण करनेवाले शङ्कर हैं, कालस्वरूप हैं तथा कालके कला-काष्ठा आदि छोटे-छोटे अवयवरूप हैं; जिनका कोई रूप नहीं है, जिनके

विविध रूप हैं तथा जो सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म हैं, उन भगवान् शिवको नमस्कार है। प्रभो ! आप शमशानमें निवास करनेवाले हैं, आप चर्ममय वस्त्र धारण करते हैं; आपको नमस्कार है। आपके मस्तकपर चन्द्रमाका मुकुट सुशोभित है, आप भयंकर भूमिमें निवास करते हैं, आपको नमस्कार है। आप दुर्ग (कठिनतासे प्राप्त होने योग्य), दुर्गपार (कठिनाइयोंसे पार लगानेवाले), दुर्गावियवसाक्षी (पार्वतीजीके अङ्ग-प्रत्यङ्गका दर्शन करनेवाले), लिङ्गरूप, लिङ्गमय और लिङ्गोंके अधिपति हैं, आपको नमस्कार है। आप प्रभावरूप हैं। प्रभावरूप प्रयोजनके साधक हैं, आपको बारम्बार नमस्कार है। आप कारणोंके भी कारण, मृत्युञ्जय तथा स्वयम्भूस्वरूप हैं, आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आपके तीन नेत्र हैं। शितिकण्ठ ! आप तेजकी निधि हैं। गौरीजीके साथ नित्य संयुक्त रहनेवाले और मङ्गलके हेतुभूत हैं, आपको नमस्कार है।

विप्रवर ! पिनाकधारी महादेवजीके गुणोंका प्रतिपादन करनेवाले इन नामोंका पाठ करके महादेवजीकी परिक्रमा करनेसे मनुष्य भगवान्‌के निज धाममें जाता है। ब्रह्मन् ! इस प्रकार व्रत करके मनुष्य महादेवजीके प्रसादसे इहलोकके सम्पूर्ण भोग भोगकर अन्तमें शिवधाम प्राप्त कर लेता है। पौष शुक्ला त्रयोदशीको अच्युत श्रीहरिका पूजन करके सब मनोरथोंकी सिद्धिके लिये श्रेष्ठ ब्राह्मणको धीसे भरा हुआ पात्र दान करे। ब्रह्मन् ! माघ शुक्ला त्रयोदशीसे लेकर तीन दिनतक ‘माघ-स्नान’ का व्रत होता है, जो नाना प्रकारके मनोवाच्छित फलको देनेवाला है। माघ मासमें प्रयागमें तीन दिन स्नान करनेवाले पुरुषको जो फल प्राप्त होता है, वह एक हजार अश्वमेध-यज्ञ करनेसे भी इस पृथ्वीपर सुलभ नहीं होता। वहाँ किया हुआ स्नान, जप, होम और दान अनन्तगुना अथवा अक्षय हो जाता है। फाल्गुन

मासके शुक्ल पक्षकी त्रयोदशीको उपवास करके भगवान् जगन्नाथको प्रणाम करे। तत्पश्चात् 'धनदब्रत' प्रारम्भ करे। नाना प्रकारके रंगोंसे एक पट्टपर यक्षपति महाराज कुबेरकी आकृति अङ्कित कर ले और भक्तिभावसे गन्ध आदि उपचारोंद्वारा उसकी पूजा करे।

द्विजोत्तम ! इस प्रकार प्रत्येक मासके शुक्लपक्षकी त्रयोदशीको मनुष्य कुबेरकी पूजा करे। उस दिन वह उपवास करके रहे या एक समय भोजन करे। तदनन्तर एक वर्षमें ब्रतकी समाप्ति होनेपर पुनः सुवर्णमयी निधियोंके साथ धनाध्यक्ष कुबेरकी भी सुवर्णमयी प्रतिमा बनाकर पञ्चामृत आदि स्नानों, षोडश उपचारों और भाँति-भाँतिके नैवेद्योंसे

भक्ति एवं एकाग्रताके साथ पूजन करे। तत्पश्चात् वस्त्र, माला, गन्ध और आभूषणोंसे बछड़ेसहित शुभ गौको अलंकृत करके वेदवेत्ता ब्राह्मणके लिये विधिपूर्वक दान करे। फिर बारह या तेरह ब्राह्मणोंको मिष्टान्न भोजन कराकर वस्त्र आदिसे आचार्यकी पूजा करके पूर्वोक्त प्रतिमा उन्हें अर्पण करे। फिर ब्राह्मणोंको यथाशक्ति दक्षिणा दे, उन्हें नमस्कार करके विदा करे। इसके बाद बुद्धिमान् पुरुष इष्ट-बन्धुओंके साथ एकाग्रचित्त हो स्वयं भोजन करे। विप्रवर ! इस प्रकार ब्रत पूर्ण करनेपर निर्धन मनुष्य धन पाकर इस पृथ्वीपर दूसरे कुबेरकी भाँति विख्यात हो आनन्दका अनुभव करता है।

वर्षभरके चतुर्दशीब्रतोंकी विधि और महिमा

सनातनजी कहते हैं—नारद ! सुनो, अब मैं तुम्हें चतुर्दशीके ब्रत बतलाता हूँ, जिनका पालन करके मनुष्य इस लोकमें सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। चैत्र शुक्ला चतुर्दशीको कुंकुम, अगुरु, चन्दन, गन्ध आदि उपचार, वस्त्र तथा मणियोंद्वारा भगवान् शिवकी बड़ी भारी पूजा करनी चाहिये। चँदोवा, ध्वज एवं छत्र आदि देकर मातृकाओंका भी पूजन करना चाहिये। विप्रवर ! जो उपवास अथवा एक समय भोजन करके इस प्रकार पूजन करता है, वह मनुष्य इस पृथ्वीपर अश्वमेध-यज्ञसे भी अधिक पुण्यलाभ करता है। इसी तिथिको गन्ध, पुष्प आदिके द्वारा दमनक-पूजन करके पूर्णिमाको कल्याणस्वरूप भगवान् शिवकी सेवामें समर्पित करना चाहिये। वैशाख कृष्णा चतुर्दशीको उपवास करके प्रदोषकालमें स्नान करे और श्वेत वस्त्र धारण करके विद्वान् पुरुष गन्ध आदि उपचारों तथा बिल्वपत्रोंसे शिवलिङ्गकी पूजा करे। श्रेष्ठ ब्राह्मणको निमन्त्रण देकर उसे भोजन करानेके बाद दूसरे दिन स्वयं

भोजन करे। द्विजश्रेष्ठ ! इसी प्रकार समस्त कृष्णा चतुर्दशियोंमें धन और संतानकी इच्छा रखनेवाले पुरुषको यह शिवसम्बन्धी ब्रत करना चाहिये। वैशाख शुक्ला चतुर्दशीको 'श्रीनृसिंहब्रत' का अनुष्ठान करे। यदि शक्ति हो तो उपवासपूर्वक ब्रत करना



चाहिये और यदि शक्ति न हो तो एक समय भोजन करके करना चाहिये। सायंकालमें दैत्यसूदन भगवान् नृसिंहको पञ्चामृत आदिसे स्नान कराकर षोडशोपचारसे उनकी पूजा करे। तत्पश्चात् इस मन्त्रका उच्चारण करते हुए भगवान्-से क्षमा-प्रार्थना करे—

तस्हाटककेशान्त ज्वलत्पावकलोचन।
वज्राधिकनखस्पर्श दिव्यसिंह नमोऽस्तु ते॥

(ना० पूर्व० १२३। ११)

‘दिव्यसिंह! आपके अयाल तपाये हुए सोनेके समान दमक रहे हैं, नेत्र प्रज्वलित अग्निके समान दहक रहे हैं और आपके नखोंका स्पर्श वज्रसे भी अधिक कठोर है, आपको नमस्कार है।’

देवेश्वर भगवान् नृसिंहसे इस प्रकार प्रार्थना करके ब्रती पुरुष मिट्ठीकी वेदीपर सोये। इन्द्रियों और क्रोधको काबूमें रखे और सब प्रकारके भोगोंसे अलग रहे। जो इस प्रकार प्रत्येक वर्षमें विधिपूर्वक उत्तम ब्रतका पालन करता है, वह सम्पूर्ण भोगोंको भोगकर अन्तमें श्रीहरिके पदको प्राप्त कर लेता है। मुनीश्वर! इसी तिथिको ॐकारेश्वरकी यात्रा करनी चाहिये। वहाँ ॐकारेश्वरके पूजनका अवसर दुर्लभ है। उनका दर्शन पापोंका नाश करनेवाला है। ॐकारेश्वरका पूजन, ध्यान, जप और दर्शन जो भी हो जाय, वह मनुष्योंके लिये ज्ञान और मोक्ष देनेवाला बताया गया है। इस तिथिको पापनाशक ‘लिङ्गब्रत’ भी करना चाहिये। आटेका शिवलिङ्ग बनाकर उसे पञ्चामृतसे स्नान करावे। फिर उसपर कुंकुमका लेप करे और वस्त्र, आभूषण, धूप, दीप तथा नैवेद्यके द्वारा उसकी पूजा करे। जो इस प्रकार सब मनोरथोंकी सिद्धि प्रदान करनेवाले पिष्टमय शिवलिङ्गका पूजन करता है, वह महादेवजीकी कृपासे भोग और मोक्ष प्राप्त कर लेता है। ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशीको दिनमें पञ्चाग्निका सेवन करे

और सायंकाल सुवर्णमयी धेनुका दान करे। यह ‘रुद्र-ब्रत’ कहा गया है। जो मनुष्य आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशीको देश-कालमें उत्पन्न हुए फूलोंद्वारा भगवान् शिवका पूजन करता है, वह समस्त सम्पदाओंको प्राप्त कर लेता है। द्विजश्रेष्ठ! श्रावण शुक्ला चतुर्दशीको अपनी शाखामें बतायी हुई विधिके अनुसार पवित्रारोपण करना चाहिये। पहले पवित्रकको सौ बार अभिमन्त्रित करके देवीको समर्पित करे। स्त्री हो या पुरुष यदि वह पवित्रारोपण करता है तो महादेवजीके प्रसादसे भोग एवं मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशीको उत्तम ‘अनन्त-ब्रत’का पालन करना चाहिये। इसमें एक समय भोजन किया जाता है। एक सेर गेहूँका आटा लेकर उसे शक्कर और धीमें मिलाकर पकावे—पूआ तैयार करे और वह भगवान् अनन्तको अर्पण करे। इससे पहले कपास अथवा रेशमके सुन्दर सूतको चौदह गाँठोंसे युक्त करके उसका गन्ध आदि उपचारोंसे पूजन करे। फिर पुराने सूतको बाँहमेंसे उतारकर उसे किसी जलाशयमें डाल दे और नये अनन्त सूत्रको नारी बार्यों भुजामें और पुरुष दार्यों भुजामें बाँध ले। आटेका पूआ या पिट्ठी पकाकर दक्षिणासहित उसका दान करे। फिर स्वयं भी परिमित मात्रामें उसे भोजन करे। इस प्रकार इस उत्तम ब्रतका चौदह वर्षोंतक पालन करना चाहिये। इसके बाद विद्वान् पुरुष उसका उद्यापन करे। मुने! रँगे हुए चावलोंसे सुन्दर सर्वतोभद्रमण्डल बनाकर उसमें ताँबेका कलश स्थापित करे। उस कलशके ऊपर रेशमी पीताम्बरसे आच्छादित भगवान् अनन्तकी सुन्दर सुवर्णमयी प्रतिमा स्थापित करे और उसका विधिपूर्वक यजन करे। इसके सिवा गणेश, मातृका, नवग्रह तथा लोकपालोंका भी पृथक्-पृथक् पूजन करे। फिर हविष्यसे होम करके

पूर्णाहुति दे। द्विजोत्तम! तत्पश्चात् आवश्यक सामग्रियोंसहित शय्या, दूध देनेवाली गाय तथा अनन्तजीकी प्रतिमा आचार्यको भक्तिपूर्वक अर्पण करे और दूसरे चौदह ब्राह्मणोंको मीठे पकवान भोजन कराकर उन्हें दक्षिणाद्वारा संतुष्ट करे। इस प्रकार किये गये 'अनन्तब्रत'का जो आदरपूर्वक प्रत्यक्ष दर्शन करता है, वह भी भगवान् अनन्तके प्रसादसे भोग और मोक्षका भागी होता है।

आश्विन कृष्णा चतुर्दशीको विष, शस्त्र, जल, अग्नि, सर्प, हिंसक जीव तथा वज्रपात् आदिके द्वारा मरे हुए मनुष्यों तथा ब्रह्महत्यारे पुरुषोंके लिये एकोद्दिष्टकी विधिसे श्राद्ध करना चाहिये और ब्राह्मणवर्गको मिष्ठान भोजन कराना चाहिये। उस दिन तर्पण, गोग्रास, कुकुरबलि और काकबलि आदि देकर आचमन करनेके पश्चात् स्वयं भी भाई-बन्धुओंके साथ भोजन करे। जो इस प्रकार दक्षिणा देकर श्राद्ध करता है, वह पितरोंका उद्घार करके सनातन देवलोकमें जाता है। द्विजश्रेष्ठ! आश्विन शुक्ला चतुर्दशीको धर्मराजकी सुवर्णमयी प्रतिमा बनाकर गन्ध आदिसे उनकी विधिवत् पूजा करे और ब्राह्मणको भोजन कराकर उसे वह प्रतिमा दान कर दे। नारद! इस पृथ्वीपर धर्मराज उस दाता पुरुषकी रक्षा करते हैं। जो इस प्रकार धर्मराजकी प्रतिमाका उत्तम दान करता है, वह इस लोकमें श्रेष्ठ भोगोंको भोगकर धर्मराजकी आज्ञासे स्वर्गलोकमें जाता है। कार्तिक कृष्णा चतुर्दशीको सबेरे चन्द्रोदय होनेपर शरीरमें तेल और उबटन लगाकर स्नान करे। स्नानके पश्चात् वह धर्मराजकी पूजा करे। ऐसा करनेसे उस मनुष्यको नरकसे अभय प्राप्त होता है। प्रदोषकालमें तेलके दीपक जलाकर यमराजकी प्रसन्नताके लिये चौराहेपर या घरसे बाहरके प्रदेशमें एकाग्रचित्त हो दीपदान करे। हेमलम्ब नामक संवत्सरमें श्रीसम्पन्न कार्तिक मास आनेपर शुक्लपक्षकी

चतुर्दशीको अरुणोदयकालमें भगवान् विश्वनाथजीने अन्य देवताओंके साथ मणिकर्णिका-तीर्थमें स्नान करके भस्मसे त्रिपुण्ड्र तिलक लगाया और स्वयं अपने-आपकी पूजा करके 'पाशुपत-ब्रत'का पालन किया था; अतः वहाँ गन्ध आदिके द्वारा शिवलिङ्गकी महापूजा करनी चाहिये। द्रोणपुष्प, बिल्वपत्र, अर्कपुष्प, केतकीपुष्प, भाँति-भाँतिके फल, मीठे पकवान एवं नाना प्रकारके नैवेद्योंद्वारा उस शिवलिङ्गकी पूजा करनी चाहिये। नारद! ऐसा करके भगवान् विश्वनाथके संतोषके लिये जो एक समय भोजनका ब्रत करता है, वह इहलोक और परलोकमें मनोवाञ्छित भोगोंको प्राप्त करता है। समृद्धिकी इच्छा रखनेवाले पुरुषको उस दिन 'ब्रह्मकूर्चब्रत' भी करना चाहिये। दिनमें उपवास करके रातमें पञ्चगव्य पान करे और जितेन्द्रिय रहे। कपिला गायका मूत्र, काली गौका गोबर, सफेद गौका दूध, लाल गायका दही और कबरी गायका धी लेकर एकमें मिला दे। अन्तमें कुशोदक मिलावे (यही 'पञ्चगव्य' एवं 'ब्रह्मकूर्च' है, जिसको ब्रतके दिन उपवास करके रातमें पीया जाता है)। तदनन्तर प्रातःकाल कुशयुक्त जलसे स्नान करके देवताओंका तर्पण करे और ब्राह्मणोंको भोजन आदिसे संतुष्ट करके स्वयं मौन होकर भोजन करे। यह 'ब्रह्मकूर्चब्रत' सब पातकोंका नाश करनेवाला है। बाल्यावस्था, कुमारावस्था और वृद्धावस्थामें भी जो पाप किया गया है, वह 'ब्रह्मकूर्चब्रत'से तत्काल नष्ट हो जाता है। नारद! उसी दिन 'पाषाणब्रत' भी बताया गया है। उसका परिचय सुनो, दिनमें उपवास करके रातमें भोजन करे। गन्ध आदिसे गौरी देवीकी पूजा करे और उन्हें धीमें पकायी हुई पाषाणके आकारकी पिण्डी अर्पण करे। (उसी प्रसादको स्वयं भी ग्रहण करे।) द्विजश्रेष्ठ! शास्त्रोक्त विधिसे इस ब्रतका आचरण करके मनुष्य ऐश्वर्य,

सुख, सौभाग्य तथा रूप प्राप्त करता है।

मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्दशीको शिवजीका व्रत किया जाता है। इसमें पहले दिन एक समय भोजन करना चाहिये और व्रतके दिन निराहार रहकर सुवर्णमय वृषकी पूजा करके उसे ब्राह्मणको दान देना चाहिये। तदनन्तर दूसरे दिन प्रातःकाल उठकर स्नानके पश्चात् कमलके फूल, गन्ध, माला और अनुलेपन आदिके द्वारा उमासहित भगवान् महेश्वरकी पूजा करे। उसके बाद ब्राह्मणोंको मिष्ठान भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा आदिसे संतुष्ट करे। विप्रवर! यह शिवव्रत जो करते हैं, जो इसका उपदेश देते हैं, जो इसमें सहायक होते या अनुमोदन करते हैं, उन सबको यह भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाला है। पौष शुक्ला चतुर्दशीको 'विरूपाक्षव्रत' बताया गया है। उस दिन यह चिन्तन करके कि 'मैं भगवान् कपर्दीश्वरका सामीप्य प्राप्त करूँगा' अगाध जलमें स्नान करे। विप्रवर! स्नानके पश्चात् गन्ध, माल्य, नमस्कार, धूप, दीप तथा अन्न-सम्पत्तिके द्वारा विरूपाक्ष शिवका पूजन करे। वहाँ चढ़ी हुई सब वस्तुएँ ब्राह्मणको देकर मनुष्य देवलोकमें देवताकी भाँति आनन्दका अनुभव करता है। माघ कृष्णा चतुर्दशीको 'यमतर्पण' बताया गया है। उस दिन सूर्योदयसे पूर्व स्नान करके सब पापोंसे छुटकारा पानेके लिये शास्त्रोक्त चौदह नामोंसे यमका तर्पण करे। तिल, कुशा और जलसे तर्पण करना चाहिये। उसके बाद ब्राह्मणोंको खिचड़ी खिलावे और स्वयं भी मौन होकर वही भोजन करे।

द्विजश्रेष्ठ! फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशीको 'शिवरात्रिव्रत' बताया गया है। उसमें दिन-रात निर्जल उपवास करके एकाग्रचित्त हो गन्ध आदि उपचारोंसे तथा जल, बिल्वपत्र, धूप, दीप, नैवेद्य, स्तोत्रपाठ और जप आदिसे किसी स्वयम्भू आदि लिङ्गकी अथवा पार्थिक लिङ्गकी पूजा करनी चाहिये। फिर दूसरे दिन उन्हीं उपचारोंसे पुनः पूजन करके ब्राह्मणोंको मिष्ठान भोजन करावे और दक्षिणा देकर विदा करे। इस प्रकार व्रत करके मनुष्य महादेवजीकी कृपासे देवताओंद्वारा सम्मानित हो दिव्य भोग प्राप्त करता है। फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशीको भक्तिपूर्वक गन्ध आदि उपचारोंसे दुर्गाजीकी पूजा करके ब्राह्मणोंको भोजन करावे और स्वयं एक समय भोजन करके रहे। नारद! जो इस प्रकार दुर्गाका व्रत करता है, वह इस लोक और परलोकमें भी मनोवाञ्छित भोगोंको प्राप्त कर लेता है। चैत्र कृष्णा चतुर्दशीको उपवास करके केदारतीर्थका जल पीनेसे अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त होता है। सम्पूर्ण चतुर्दशीव्रतोंके उद्यापनकी सामान्य विधि बतायी जाती है। इसमें चौदह कलश रखे जाते हैं और सबके साथ सुपारी, अक्षत, मोदक, वस्त्र और दक्षिणा-द्रव्य होते हैं। घट ताँबेके हों या मिट्टीके, नये हों। टूटे-फूटे नहीं होने चाहिये। बाँसके चौदह डंडों और उतने ही पवित्रक, आसन, पात्र तथा यज्ञोपवीतोंकी भी व्यवस्था करनी चाहिये। शेष बातें उन-उन व्रतोंके साथ जैसी कही गयी हैं, उसी प्रकार करे।

बारह महीनोंकी पूर्णिमा तथा अमावास्यासे सम्बन्ध रखनेवाले व्रतों तथा सत्कर्मोंकी विधि और महिमा

सनातनजी कहते हैं—नारद! सुनो, अब मैं तुमसे पूर्णिमाके व्रतोंका वर्णन करता हूँ, जिनका पालन करके स्त्री और पुरुष सुख और संतति

प्राप्त करते हैं। विप्रवर! चैत्रकी पूर्णिमा मन्वादि तिथि कही गयी है। उसमें चन्द्रमाकी प्रसन्नताके लिये कच्चे अन्नसहित जलसे भरा हुआ घट दान

करना चाहिये। वैशाखकी पूर्णिमाको ब्राह्मणको जो-जो द्रव्य दिया जाता है, वह सब दाताको निश्चितरूपसे प्राप्त होता है। उस दिन 'धर्मराजव्रत' कहा गया है। वैशाखकी पूर्णिमाको श्रेष्ठ ब्राह्मणके लिये जलसे भरा हुआ घट और पकवान दान करना चाहिये। वह गोदानका फल देनेवाला होता है और उससे धर्मराज संतुष्ट होते हैं। जो स्वच्छ जलसे भरे हुए कलशोंका श्रेष्ठ ब्राह्मणको सुवर्णके साथ दान करता है, वह कभी शोकमें नहीं पड़ता। ज्येष्ठकी पूर्णिमाको 'वट-सावित्री'का व्रत होता है। उस दिन स्त्री उपवास करके अमृतके समान मधुर जलसे वटवृक्षको सींचे



और सूतसे उस वृक्षको एक सौ आठ बार प्रदक्षिणापूर्वक लपेटे। तदनन्तर परम पतिव्रत सावित्रीदेवीसे इस प्रकार प्रार्थना करे—

जगत्पूज्ये जगन्मातः सावित्रि पतिदैवते।

पत्या सहावियोगं मे वटस्थे कुरु ते नमः ॥

(ना० पूर्व० १२४ । ११)

'जगन्माता सावित्री! तुम सम्पूर्ण जगत्के लिये पूजनीय तथा पतिको ही इष्टदेव माननेवाली

पतिव्रता हो। वटवृक्षपर निवास करनेवाली देवि! तुम ऐसी कृपा करो, जिससे मेरा अपने पतिके साथ नित्यसंयोग बना रहे। कभी वियोग न हो। तुम्हें मेरा सादर नमस्कार है।'

जो नारी इस प्रकार प्रार्थना करके दूसरे दिन सुवासिनी स्त्रियोंको भोजन करानेके पश्चात् स्वयं भोजन करती है, वह सदा सौभाग्यवती बनी रहती है। आषाढ़की पूर्णिमाको 'गोपद्वारत'का विधान है। उस दिन स्नान करके भगवान् श्रीहरिके स्वरूपका इस प्रकार ध्यान करे— भगवान्‌के चार भुजाएँ हैं। उनका शरीर विशाल है। उनकी अङ्गकान्ति जाम्बूनद सुवर्णके समान श्याम है। शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, लक्ष्मी तथा गरुड़ उनकी शोभा बढ़ा रहे हैं तथा देवता, मुनि, गन्धर्व, यक्ष और किन्नर उनकी सेवामें लगे हैं। इस प्रकार श्रीहरिका चिन्तन करके गन्ध आदि उपचारोंद्वारा पुरुषसूक्तके मन्त्रोंसे उनकी पूजा करे। तत्पश्चात् वस्त्र और आभूषण आदिके द्वारा आचार्यको संतुष्ट करे और स्नेहयुक्त हृदयसे आचार्य तथा अन्यान्य ब्राह्मणोंको यथाशक्ति मीठे पकवान भोजन करावे। विप्रबर! इस प्रकार व्रत करके मनुष्य कमलापतिके प्रसादसे इहलोक और परलोकके भोगोंको प्राप्त कर लेता है।

श्रावण मासकी पूर्णिमाको 'वेदोंका उपाकर्म' बताया गया है। उस दिन यजुर्वेदी द्विजोंको देवताओं, ऋषियों तथा पितरोंका तर्पण करना चाहिये। अपनी शाखामें बतायी हुई विधिके अनुसार ऋषियोंका पूजन भी करना चाहिये। ऋग्वेदियोंको चतुर्दशीके दिन तथा सामवेदियोंको भाद्रपद मासके हस्त नक्षत्रमें विधिपूर्वक 'रक्षाविधान' करना चाहिये। लाल कपड़ेके एक भागमें सरसों तथा अक्षत रखकर उसे लाल रंगके डोरेसे बाँध दे, इस प्रकार बनी हुई पोटली ही रक्षा है, उसे जलसे सींचकर काँसके पात्रमें रखे।

उसीमें गन्ध आदि उपचारोंद्वारा श्रीविष्णु आदि देवताओंकी पूजा करके उनकी प्रार्थना करे। फिर ब्राह्मणको नमस्कार करके उसीके हाथसे प्रसन्नतापूर्वक अपनी कलाईमें उस रक्षापोटलिकाको बँधा ले। तदनन्तर ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे वेदोंका स्वाध्याय करे तथा सप्तर्षियोंका विसर्जन करके अपने हाथसे बनाकर कुंकुम आदिसे रंगे हुए नूतन यज्ञोपवीतको धारण करे। यथाशक्ति श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भोजन कराकर स्वयं एक समय भोजन करे। विप्रवर! इस व्रतके कर लेनेपर वर्षभर वैदिक कर्म यदि भूल गया हो, विधिसे हीन हुआ हो या नहीं किया गया हो तो वह सब भलीभाँति सम्पादित हो जाता है। भाद्रपद मासकी पूर्णिमाको 'उमामाहेश्वरव्रत' किया जाता है। उसके लिये एक दिन पहले एक समय भोजन करके रहे और शिव-पार्वतीका यत्नपूर्वक पूजन करके हाथ जोड़ प्रार्थना करे—'प्रभो! मैं कल व्रत करूँगा।' इस प्रकार भगवान्‌से निवेदन करके उस उत्तम व्रतको ग्रहण करे। रातमें देवताके समीप शयन करके रातके पिछले पहरमें उठे। फिर संध्या-वन्दन आदि नित्यकर्म करके भस्म तथा रुद्राक्षकी माला धारण करे। तत्पश्चात् उत्तम गन्ध, बिल्वपत्र, धूप, दीप और नैवेद्य आदि विभिन्न उपचारोंद्वारा विधिपूर्वक भगवान् शङ्करकी पूजा करे। उसके बाद सबेरेसे लेकर प्रदोषकालतक विद्वान् पुरुष उपवास करे। चन्द्रोदय होनेपर पुनः पूजा करके वहीं देवताके समीप रातमें जागरण करे।

इस प्रकार प्रतिवर्ष आलस्य छोड़कर पंद्रह वर्षोंतक इस व्रतका निर्वाह करे। उसके बाद विधिपूर्वक व्रतका उद्घापन करना चाहिये। उस समय भगवती उमा और भगवान् शङ्करकी सुवर्णमयी दो प्रतिमाएँ बनवावे। यथाशक्ति सोने, चाँदी, ताँबे अथवा मिट्टीके पंद्रह उत्तम कलश स्थापित करे। वहाँ एक कलशके ऊपर वस्त्रसहित

दोनों प्रतिमाओंकी स्थापना करनी चाहिये। उन प्रतिमाओंको पञ्चमृतसे स्नान कराकर फिर शुद्ध जलसे नहलाना चाहिये। तदनन्तर षोडशोपचारसे उनकी पूजा करनी चाहिये। इसके बाद पंद्रह ब्राह्मणोंको मिष्ठान भोजन करावे और उन्हें दक्षिणा तथा एक-एक कलश दे। भगवान् शङ्करकी मूर्तिसे युक्त कलश आचार्यको अर्पण करे। इस प्रकार 'उमामाहेश्वरव्रत'का पालन करके मनुष्य इस पृथ्वीपर विख्यात होता है। वह समस्त सम्पत्तियोंकी निधि बन जाता है। उसी दिन 'शक्रव्रत'का भी विधान किया गया है। उसमें प्रातःकाल स्नान करके विधिपूर्वक गन्ध आदि उपचारों तथा नैवेद्य-राशियोंसे देवराज इन्द्रकी पूजा करे। फिर निमन्त्रित ब्राह्मणोंको विधिवत् भोजन कराकर वहाँ आये हुए दूसरे लोगोंको तथा दीनों और अनाथोंको भी उसी प्रकार भोजन करावे। विप्रवर! धन-धान्यकी सिद्धि चाहनेवाले राजाको अथवा दूसरे धनी लोगोंको प्रतिवर्ष यह 'शक्रव्रत' करना चाहिये।

आश्विन मासकी पूर्णिमाको 'कोजागरव्रत' कहा गया है। उसमें विधिपूर्वक स्नान करके उपवास करे और जितेन्द्रिय भावसे रहे। ताँबे अथवा मिट्टीके कलशपर वस्त्रसे ढकी हुई सुवर्णमयी लक्ष्मीप्रतिमाको स्थापित करके भिन्न-भिन्न उपचारोंसे उनकी पूजा करे। तदनन्तर सायंकालमें चन्द्रोदय होनेपर सोने, चाँदी अथवा मिट्टीके घृतपूर्ण एक सौ दीपक जलावे। इसके बाद धी और शक्कर मिलायी हुई बहुत-सी खीर तैयार करे और बहुत-से पात्रोंमें उसे ढालकर चन्द्रमाकी चाँदनीमें रखे। जब एक पहर बीत जाय तो लक्ष्मीजीको वह सब अर्पण करे। तत्पश्चात् भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंको वह खीर भोजन करावे और उनके साथ ही माझलिक गीत तथा मञ्जलमय कायोंद्वारा जागरण करे।

तदनन्तर अरुणोदय-कालमें स्नान करके लक्ष्मीजीकी वह स्वर्णमयी मूर्ति आचार्यको अर्पित करे। उस रातमें देवी महालक्ष्मी अपने कर-कमलोंमें वर और अभय लिये निशीथ कालमें संसारमें विचरती हैं और मन-ही-मन संकल्प करती हैं कि 'इस समय भूतलपर कौन जाग रहा है? जागकर मेरी पूजामें लगे हुए उस मनुष्यको मैं आज धन दूँगी।' प्रतिवर्ष किया जानेवाला यह व्रत लक्ष्मीजीको संतुष्ट करनेवाला है। इससे प्रसन्न हुई लक्ष्मी इस लोकमें समृद्धि देती हैं और शरीरका अन्त होनेपर परलोकमें सद्गति प्रदान करती हैं। कार्तिककी पूर्णिमाको ब्राह्मणत्वकी प्राप्ति और सम्पूर्ण शत्रुओंपर विजय पानेके लिये कार्तिकेयजीका दर्शन करे। उसी तिथिको प्रदोषकालमें दीपदानके द्वारा सम्पूर्ण जीवोंके लिये सुखदायक 'त्रिपुरोत्सव' करना चाहिये। उस दिन दीपका दर्शन करके कीट, पतंग, मच्छर, वृक्ष तथा जल और स्थलमें विचरनेवाले दूसरे जीव भी पुनर्जन्म नहीं ग्रहण करते; उन्हें अवश्य मोक्ष होता है। ब्रह्मन्! उस दिन चन्द्रोदयके समय छहों कृत्तिकाओंकी, खडगधारी कार्तिकेयकी तथा वरुण और अग्निकी गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, प्रचुर नैवेद्य, उत्तम अन्न, फल तथा शाक आदिके द्वारा एवं होम और ब्राह्मणभोजनके द्वारा पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार देवताओंकी पूजा करके घरसे बाहर दीप-दान करना चाहिये। दीपकोंके पास ही एक सुन्दर चौकोर गङ्गा खोदे। उसकी लंबाई-चौड़ाई और गहराई चौदह अंगुलकी रखे। फिर उसे चन्दन और जलसे सींचे। तदनन्तर उस गङ्गेको गायके दूधसे भरकर उसमें सर्वाङ्गसुन्दर सुवर्णमय मत्स्य डाले। उस मत्स्यके नेत्र मोतीके बने होने चाहिये। फिर 'महामत्स्याय नमः' इस मन्त्रका उच्चारण करते हुए गन्ध आदिसे उसकी

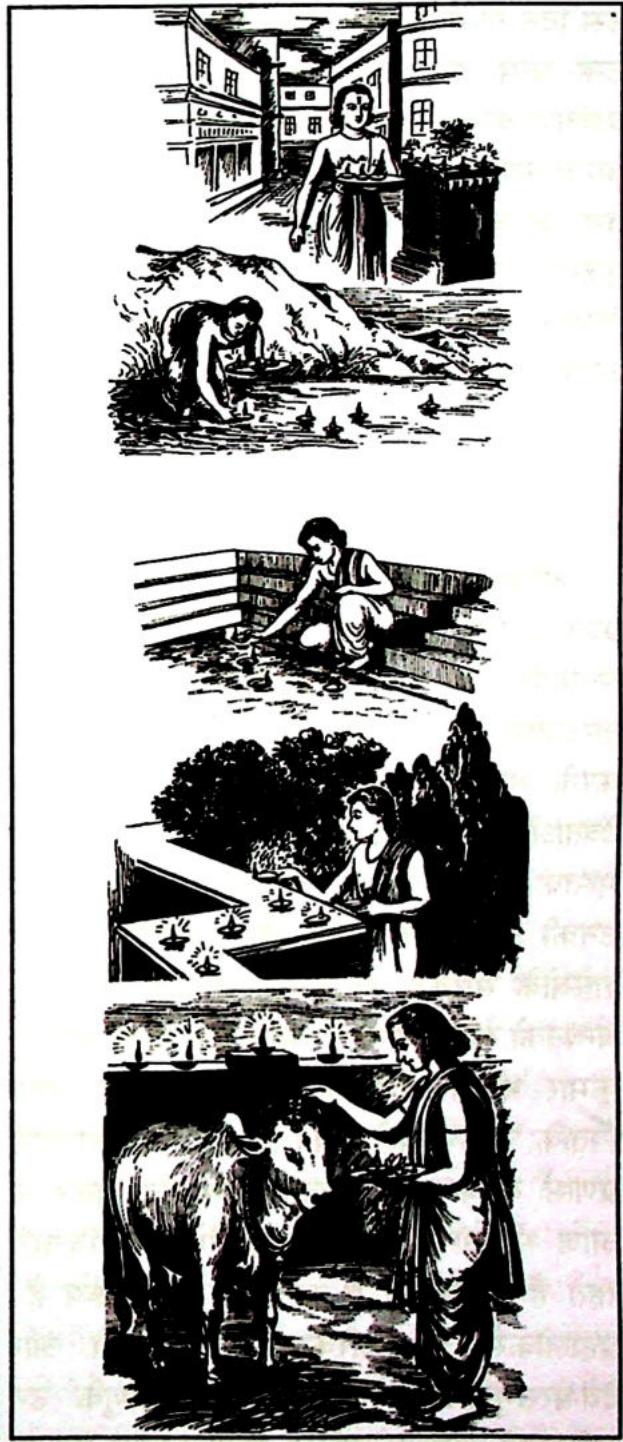
पूजा करके ब्राह्मणको उसका दान कर दे। द्विजश्रेष्ठ! यह मैंने तुमसे क्षीरसागर-दानकी विधि बतायी है। इस दानके प्रभावसे मनुष्य भगवान् विष्णुके समीप आनन्द भोगता है। नारद! इस पूर्णिमाको 'वृषोसर्गव्रत' तथा 'नक्तव्रत' करके मनुष्य रुद्रलोक प्राप्त कर लेता है।

मार्गशीर्ष मासकी पूर्णिमाके दिन शान्त स्वभाववाले ब्राह्मणको सुवर्णसहित एक आढक* नमक दान करे। इससे सम्पूर्ण कामनाओंकी सिद्धि होती है। मनुष्य पूर्णिमाको पुष्ट्यका योग होनेपर सम्पूर्ण सौभाग्यकी वृद्धिके लिये पीली सरसोंके उबटनसे अपने शरीरको मलकर सर्वोषधियुक्त जलसे स्नान करे। स्नानके पश्चात् दो नूतन वस्त्र धारण करे। फिर माझलिक द्रव्यका दर्शन और स्पर्श कर विष्णु, इन्द्र, चन्द्रमा, पुष्ट्य और बृहस्पतिको नमस्कार करके गन्ध आदि उपचारोंद्वारा उनकी पूजा करे। तदनन्तर होम करके ब्राह्मणोंको खीरके भोजनसे तृप्त करे। विप्रवर! लक्ष्मीजीकी प्रीति बढ़ानेवाले और दरिद्रताका नाश करनेवाले इस व्रतको करके मनुष्य इहलोक और परलोकमें आनन्द भोगता है। माघकी पूर्णिमाके दिन तिल, सूती कपड़े, कम्बल, रल, कंचुक, पगड़ी, जूते आदिका अपने वैभवके अनुसार दान करके मनुष्य स्वर्गलोकमें सुखी होता है। जो उस दिन भगवान् शङ्करकी विधिपूर्वक पूजा करता है, वह अश्वमेध-यज्ञका फल पाकर भगवान् विष्णुके लोकमें प्रतिष्ठित होता है। फाल्गुनकी पूर्णिमाको सब प्रकारके काष्ठों और उपलों (कंडों)-का संग्रह करना चाहिये। वहाँ रक्षोद्ध-मन्त्रोंद्वारा अग्निमें विधिपूर्वक होम करके होलिकापर काठ आदि फेंककर उसमें आग लगा दे। इस प्रकार दाह करके होलिकाकी परिक्रमा करते हुए उत्सव मनावे।

* चार सेरके बराबरका एक तौल।

यह होलिका प्रह्लादको भय देनेवाली राक्षसी है। इसीलिये गीत-मङ्गलपूर्वक काष्ठ आदिके द्वारा लोग उसका दाह करते हैं। विप्रेन्द्र! मतान्तरमें यह 'कामदेवका दाह' है।

पक्षान्त-तिथियाँ दो होती हैं—पूर्णिमा तथा अमावास्या। दोनोंके देवता पृथक्-पृथक् हैं। अतः अमावास्याका व्रत पृथक् बतलाया जाता है। नारद! इसे सुनो। यह पितरोंको अत्यन्त प्रिय है। चैत्र और वैशाखकी अमावास्याको पितरोंकी पूजा, पार्वणविधिसे धन-वैभवके अनुसार श्राद्ध, ब्राह्मणभोजन, विशेषतः गौ आदिका दान—ये सब कार्य सभी महीनोंकी अमावास्याको अत्यन्त पुण्यदायक बताये गये हैं। नारद! ज्येष्ठकी अमावास्याको ब्रह्मसावित्रीका व्रत बताया गया है। इसमें भी ज्येष्ठकी पूर्णिमाके समान ही सब विधि कही गयी है। आषाढ़, श्रावण और भाद्रपद मासमें पितृश्राद्ध, दान, होम और देवपूजा आदि कार्य अक्षय होते हैं। भाद्रपदकी अमावास्याको अपराह्नमें तिलके खेतमें पैदा हुए कुशोंको ब्रह्माजीके मन्त्रसे आमन्त्रित करके 'हुं फट्'* का उच्चारण करते हुए उखाड़ ले और उन्हें सदा सब कार्योंमें नियुक्त करे और दूसरे कुशोंको एक ही समय काममें लाना चाहिये। आश्विनकी अमावास्याको विशेषरूपसे गङ्गाजीके जलमें या गयाजीमें पितरोंका श्राद्ध-तर्पण करना चाहिये; वह मोक्ष देनेवाला है। कार्तिककी अमावास्याको देवमन्दिर, घर, नदी, बगीचा, पोखरा, चैत्य वृक्ष, गोशाला तथा बाजारमें दीपदान और श्रीलक्ष्मीजीका पूजन करना चाहिये।



कार्तिकी अमावास्याको गोशाला, बगीचा, पोखरा, नदी, बाजार आदिमें दीपदान

* निमन्त्रणसम्बन्धी ब्रह्माजीका मन्त्र इस प्रकार है—

विरञ्जिना सहोत्पन्ना परमेष्ठिनिसर्गं। नुद सर्वाणि पापानि दर्भं स्वस्तिकरे भव ॥

'दर्भ! तुम ब्रह्माजीके साथ उत्पन्न हुए हो, साक्षात् परमेष्ठी ब्रह्माके स्वरूप हो और तुम स्वभावतः प्रकट हुए हो। हमारे सब पाप हर लो और हमारे लिये कल्याणकारी बनो।'

उस दिन गौओंके सींग आदि अङ्गोंमें रंग लगाकर उन्हें घास और अन्न देकर तथा नमस्कार और प्रदक्षिणा करके उनकी पूजा की जाती है। मार्गशीर्षकी अमावास्याको भी श्राद्ध और ब्राह्मणभोजनके द्वारा तथा ब्रह्मचर्य आदि नियमों और जप, होम तथा पूजनादिके द्वारा पितरोंकी पूजा की जाती है। विप्रवर! पौष और माघमें भी पितृश्राद्धका फल अधिक कहा गया है। फाल्गुनकी अमावास्यामें

श्रवण, व्यतीपात और सूर्यका योग होनेपर केवल श्राद्ध और ब्राह्मणभोजन गयासे अधिक फल देनेवाला होता है। सोमवती अमावास्याको किया हुआ दान आदि सम्पूर्ण फलोंको देनेवाला है। उसमें किये हुए श्राद्धका अधिक फल है। मुने! इस प्रकार मैंने तुम्हें संक्षेपसे तिथिकृत्य बताया है। सभी तिथियोंमें कुछ विशेष विधि है, जो अन्य पुराणोंमें वर्णित है।

सनकादि और नारदजीका प्रस्थान, नारदपुराणके माहात्म्यका वर्णन और पूर्वभागकी समाप्ति

श्रीसूतजी कहते हैं—महर्षियो! देवर्षि नारदजीके प्रश्न करनेपर उन्हें इस प्रकार उपदेश देकर वे सनकादि चारों कुमार, जो शास्त्रवेत्ताओंमें श्रेष्ठ हैं, नारदजीसे पूजित हो, संध्या आदि नित्यकर्म करके भगवान् शङ्करके लोकमें चले गये। वहाँ देवताओं और दानवोंके अधीश्वर जिनके चरणारविन्दोंमें मस्तक झुकाते हैं, उन महेश्वरको प्रणाम करके उनकी आज्ञासे वे भूमिपर बैठे। तदनन्तर सम्पूर्ण शास्त्रोंके सारको, जो अज्ञानी जीवोंके अज्ञानमय बन्धनको खोलनेवाला है, सुनकर वे ज्ञानघनस्वरूप कुमार भगवान् शिवको नमस्कार करके अपने पिताके समीप चले गये। पिताके चरणकमलोंमें प्रणाम करके और उनका आशीर्वाद लेकर वे आज भी सम्पूर्ण लोकोंके तीर्थोंमें सदा विचरते रहते हैं। वास्तवमें वे स्वयं ही तीर्थस्वरूप हैं। ब्रह्मलोकसे वे बदरिकाश्रम-तीर्थमें गये और देवेश्वरसमुदायसे सेवित भगवान् विष्णुके उन अविनाशी चरणारविन्दोंका चिरकालतक चिन्तन करते रहे; जिनका वीतराग संन्यासी ध्यान करते हैं। ब्राह्मणो! तत्पश्चात् नारदजी भी सनकादि कुमारोंसे मनोवाञ्छित ज्ञान-विज्ञान पाकर उस गङ्गातटसे उठकर पिताके निकट गये और प्रणाम करके खड़े रहे। फिर पिता ब्रह्माजीके द्वारा आज्ञा

मिलनेपर वे बैठे। उन्होंने कुमारोंसे जो ज्ञान-विज्ञान श्रवण किया था, उसका ब्रह्माजीके समीप यथार्थरूपसे वर्णन किया। उसे सुनकर ब्रह्माजी बड़े प्रसन्न हुए। इसके बाद ब्रह्माजीके चरणोंमें मस्तक झुकाकर आशीर्वाद ले मुनिवर नारद मुनिसिद्ध-सेवित कैलास पर्वतपर आये। वह पर्वत नाना प्रकारके आश्वर्यजनक दृश्योंसे भरा हुआ था। सिद्ध और किन्नरोंने उस पर्वतको व्यास कर रखा था। जहाँ सुन्दर स्वर्णमय कमल लिखे हुए हैं, ऐसे स्वच्छ जलसे भरे हुए सरोवर उस शैलशिखरकी शोभा बढ़ाते हैं। गङ्गाजीके प्रपातकी कलकल ध्वनि वहाँ सब ओर गूँजती रहती है। कैलासका एक-एक शिखर सफेद बादलोंके समान जान पड़ता है। उसी शिखरपर काले मेघके समान श्यामवर्णका एक वटवृक्ष है, जो सौ योजन विस्तृत है। उसके नीचे योगियोंकी मण्डलीके मध्यभागमें जटाजूटधारी भगवान् त्रिलोचन बाधाम्बर ओढ़े हुए बैठे थे। उनका सारा अङ्ग भस्माङ्गरासे विभूषित हो रहा था। नागोंके आभूषण उनकी शोभा बढ़ाते थे। ब्राह्मणो! रुद्राक्षकी मालासे सदा शोभायमान भगवान् चन्द्रशेखरको देखकर नारदजीने भक्तिभावसे नतमस्तक हो उन जगदीश्वरके चरणोंमें सिर रखकर प्रणाम किया और प्रसन्न मनसे उन

श्रीवृष्णुज शिवका स्तवन किया, तदनन्तर भगवान् शिवकी आज्ञासे वे आसनपर बैठे। उस समय योगियोंने उनका बड़ा सत्कार किया। जगद्गुरु सदाशिवने नारदजीकी कुशल पूछी। नारदजीने कहा—भगवन्! आपके प्रसादसे सब कुशल है। ब्राह्मणो! फिर सब योगियोंके सुनते हुए नारदजीने पशुओं (जीवों)-के अज्ञानमय पाशको छुड़ानेवाले पाशुपत (शाम्भव) ज्ञानके विषयमें प्रश्न किया। तब शरणागतवत्सल भगवान् शिवने उनकी भक्तिसे संतुष्ट हो उनसे आदरपूर्वक अष्टाङ्ग शिव-योगका वर्णन किया। लोककल्याणकारी भगवान् शङ्करसे शाम्भव ज्ञान प्राप्त करके प्रसन्नचित्त हो नारदजी बदरिकाश्रममें भगवान् नारायणके निकट गये। सदा आने-जानेवाले देवर्षि नारदने वहाँ भी सिद्धों और योगियोंसे सेवित भगवान् नारायणको बारम्बार संतुष्ट किया।

ब्राह्मणो! यह नारदमहापुराण है, जिसका मैंने तुम्हारे समक्ष वर्णन किया है। सम्पूर्ण शास्त्रोंका दिग्दर्शन करनेवाला यह उपाख्यान वेदके समान मान्य है। यह श्रोताओंके ज्ञानकी वृद्धि करनेवाला है। विप्रगण! जो इस नारदीय महापुराणका शिवालयमें, श्रेष्ठ द्विजोंके समाजमें, भगवान् विष्णुके मन्दिरमें, मथुरा और प्रयागमें, पुरुषोत्तम जगन्नाथजीके समीप, सेतुबन्ध रामेश्वरमें, काश्मी, द्वारका, हरद्वार और कुशस्थलमें, त्रिपुष्कर तीर्थमें, किसी नदीके तटपर अथवा जहाँ-कहीं भी भक्तिभावसे कीर्तन करता है, वह सम्पूर्ण यज्ञों और तीर्थोंका महान् फल पाता है। सम्पूर्ण दानों और समस्त तपस्याओंका भी पूरा-पूरा फल प्राप्त कर लेता है। जो उपवास करके या हविष्य भोजन करके इन्द्रियोंको काबूमें रखते हुए भगवान् नारायण या शिवकी भक्तिमें तत्पर हो इस पुराणका श्रवण अथवा प्रवचन करता है, वह सिद्धि पाता है। इस पुराणमें सब प्रकारके पुण्यों

और सिद्धियोंके उद्घवका वर्णन किया गया है, जो सदा पढ़ने और सुननेवाले पुरुषोंके समस्त पापोंका नाश करनेवाला है। यह मनुष्योंके कलिसम्बन्धी दोषको हर लेता है और सब सम्पत्तियोंकी वृद्धि करता है। यह सभीको अभीष्ट है। यह तपस्या, व्रत और उनके फलोंका प्रकाशक है। मन्त्र, यन्त्र, पृथक्-पृथक् वेदाङ्ग, आगम, सांख्य और वेद—सबका इसमें संक्षेपसे संग्रह किया गया है। इस वेदसम्मित नारदीय महापुराणका श्रवण करके धन, रत्न और वस्त्र आदिके द्वारा भक्तिभावसे पुराणवाचक आचार्यकी पूजा करनी चाहिये। भूमिदान, गोदान, रक्षान तथा हाथी, घोड़े और रथके दानसे आचार्यको सदैव संतुष्ट करना चाहिये। ब्राह्मणो! यह पुराण धर्मका संग्रह करनेवाला तथा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंको देनेवाला है। जो इसकी व्याख्या करता है, उसके समान मनुष्योंका गुरु दूसरा कौन हो सकता है। शरीर, मन, वाणी और धन आदिके द्वारा सदा धर्मोपदेशक गुरुका प्रिय करना चाहिये। इस पुराणको विधिपूर्वक सुनकर देवपूजन और हवन करके सौ ब्राह्मणोंको मिठाई और खीरका भोजन कराना चाहिये तथा भक्तिभावसे उन्हें दक्षिणा देनी चाहिये; क्योंकि भगवान् माधव भक्तिसे ही संतुष्ट होते हैं। जैसे नदियोंमें गङ्गा, सरोवरोंमें पुष्कर, पुरियोंमें काशीपुरी, पर्वतोंमें मेरु, तीनों देवताओंमें सबका पाप हरनेवाले भगवान् नारायण, युगोंमें सत्ययुग, वेदोंमें सामवेद, पशुओंमें धेनु, वर्णोंमें ब्राह्मण, देने योग्य तथा पोषक वस्तुओंमें अन्न और जल, मासोंमें मार्गशीर्ष, मृगोंमें सिंह, देहधारियोंमें पुरुष, वृक्षोंमें पीपल, दैत्योंमें प्रह्लाद, अङ्गोंमें मुख, अश्वोंमें उच्चैःश्रवा, ऋषुओंमें वसन्त, यज्ञोंमें जपयज्ञ, नागोंमें शेष, पितरोंमें अर्यमा, अस्त्रोंमें धनुष, वसुओंमें पावक, आदित्योंमें विष्णु, देवताओंमें

इन्द्र, सिद्धोंमें कपिल, पुरोहितोंमें बृहस्पति, कवियोंमें शुक्राचार्य, पाण्डवोंमें अर्जुन, दास्य-भक्तोंमें हनुमान्, तृणोंमें कुश, इन्द्रियोंमें मन (चित्त), गन्धवोंमें चित्ररथ, पुष्टियोंमें कमल, अप्सराओंमें उर्वशी तथा धातुओंमें सुवर्ण श्रेष्ठ है। जिस प्रकार ये सब वस्तुएँ अपने सजातीय पदार्थोंमें श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार पुराणोंमें श्रीनारदमहापुराण श्रेष्ठ कहा गया है। द्विजवरो! आप सब लोगोंको शान्ति प्राप्त हो, आपका कल्याण हो। अब मैं अमित तेजस्वी व्यासजीके समीप जाऊँगा।

ऐसा कहकर सूतजी शौनक आदि महात्माओंसे पूजित हो उन सबकी आज्ञा लेकर चले गये। वे शौनक आदि द्विज श्रेष्ठ महात्मा भी जो यज्ञानुष्ठानमें लगे हुए थे, एकाग्रचित्त हो सुने हुए समस्त धर्मोंके अनुष्ठानमें तत्पर हो, वहाँ रहने लगे। जो कलिके पाप-विषका नाश करनेवाले श्रीहरिके जप और पूजन-विधिरूप औषधका सेवन करता है, वह निर्मल चित्तसे भगवान्के ध्यानमें लगकर सदा मनोवाञ्छित लोक प्राप्त करता है।

॥ पूर्वभाग समाप्त ॥

ॐ

श्रीपरमात्मने नमः

श्रीगणेशाय नमः

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

नारदपुराण

उत्तरभाग

महर्षि वसिष्ठका मान्धाताको एकादशीव्रतकी महिमा सुनाना

पान्तु वो जलदश्यामा: शार्द्धञ्चाघातकर्कशाः ।

त्रैलोक्यमण्डपस्तम्भाश्वत्वारो हरिबाहवः ॥ १ ॥

‘जो मेघके समान श्यामवर्ण हैं, शार्द्धधनुषकी प्रत्यञ्चाके आघात (रगड़)-से कठोर हो गयी हैं तथा त्रिभुवनरूपी विशाल भवनको खड़े रखनेके लिये मानो खंभेके समान हैं, भगवान् विष्णुकी वे चारों भुजाएँ आप लोगोंकी रक्षा करें।’

सुरासुरशिरोरलनिघृष्टमणिरञ्जितम् ।

हरिपादाम्बुजद्वन्द्वमभीष्टप्रदमस्तु नः ॥ २ ॥

‘भगवान् श्रीहरिके वे युगल चरणारविन्द हमारे अभीष्ट मनोरथोंकी पूर्ति करें, जो देवताओं और असुरोंके मस्तकपर स्थित रत्नमय मुकुटकी घिसी हुई मणियोंसे सदा अनुरञ्जित रहते हैं।’

मान्धाताने (वसिष्ठजीसे) पूछा—द्विजोत्तम !

जो भयंकर पापरूपी सूखे या गीले ईंधनको जला सके, ऐसी अग्नि कौन है? यह बतानेकी कृपा करें। ब्रह्मपुत्र! विप्रशिरोमणे! तीनों लोकोंमें त्रिविध पाप-तापके निवारणका कोई भी ऐसा सुनिश्चित उपाय नहीं है, जो आपको ज्ञात न हो। अज्ञानावस्थामें किये हुए पापको ‘शुष्क’ और जान-बूझकर किये हुए पातकको ‘आर्द्र’ कहा गया है। वह भूत, वर्तमान अथवा भविष्य कैसा ही क्यों न हो, किस अग्निसे दग्ध हो सकता है? यह जानना मुझे अभीष्ट है।



वसिष्ठजी बोले—नृपश्रेष्ठ! सुनो, जिस अग्निसे ‘शुष्क’ अथवा ‘आर्द्र’ पाप पूर्णतः दग्ध हो सकता है, वह उपाय बताता हूँ। जो मनुष्य भगवान् विष्णुके दिन (एकादशी तिथि) आनेपर जितेन्द्रिय हो उपवास करके भगवान् मधुसूदनकी पूजा करता है, आँवलेसे ज्ञान करके रातमें जागता है, वह पापोंको धो बहा देता है। राजन्! एकादशी नामक अग्निसे, पातकरूपी ईंधन सौ वर्षोंसे संचित हो तो भी शीघ्र ही भस्म हो जाता है। नरेश्वर! मनुष्य जबतक भगवान् पद्मनाभके

शुभदिवस—एकादशी तिथिको उपवासपूर्वक व्रत नहीं करता, तभीतक इस शरीरमें पाप ठहर पाते हैं। सहस्रों अश्वमेध और सैकड़ों राजसूय यज्ञ एकादशीव्रतकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं हो सकते। प्रभो! एकादश इन्द्रियोंद्वारा जो पाप किया जाता है, वह सब-का-सब एकादशीके उपवाससे नष्ट हो जाता है। राजन्! यदि किसी दूसरे बहानेसे भी एकादशीको उपवास कर लिया जाय तो वह यमराजका दर्शन नहीं होने देती। यह एकादशी स्वर्ग और मोक्ष देनेवाली है। राज्य और पुत्र प्रदान करनेवाली है। उत्तम स्त्रीकी प्राप्ति करनेवाली तथा शरीरको नीरोग बनानेवाली है। राजन्! एकादशीसे अधिक पवित्र न गङ्गा है, न गया; न काशी है, न पुष्कर। कुरुक्षेत्र, नर्मदा, देविका, यमुना तथा चन्द्रभागा भी एकादशीसे बढ़कर पुण्यमय नहीं हैं। राजन्! एकादशीका व्रत करनेसे भगवान् विष्णुका धाम अनायास ही प्राप्त हो जाता है। एकादशीको उपवासपूर्वक रातमें जागरण करनेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके लोकमें जाता है। राजेन्द्र! एकादशीव्रत करनेवाला पुरुष मातृकुल,

पितृकुल तथा पलीकुलकी दस-दस पीढ़ियोंका उद्धार कर देता है। महाराज! वह अपनेको भी वैकुण्ठमें ले जाता है। एकादशी चिन्तामणि अथवा निधिके समान है। संकल्पसाधक कल्पवृक्ष एवं वेदवाक्योंके समान है। नरश्रेष्ठ! जो मनुष्य द्वादशी (एकादशीयुक्त)–की शरण लेते हैं, वे चार भुजाओंसे युक्त हो गरुड़की पीठपर वनमाला और पीताम्बरसे सुशोभित हो भगवान् विष्णुके धाममें जाते हैं। महीपते! यह मैंने द्वादशी (एकादशीयुक्त)–का प्रभाव बताया है। यह घोर पापरूपी ईर्धनके लिये अग्रिके समान है। पुत्र-पौत्र आदि विपुल योगों (अप्राप्त वस्तुओं) अथवा भोगोंकी इच्छा रखनेवाले धर्मपरायण मनुष्योंको सदा एकादशीके दिन उपवास करना चाहिये। नरश्रेष्ठ! जो मनुष्य आदरपूर्वक एकादशीव्रत करता है, वह माताके उदरमें प्रवेश नहीं करता (उसकी मुक्ति हो जाती है)। अनेक पापोंसे युक्त मनुष्य भी निष्काम या सकामभावसे यदि एकादशीका व्रत करता है तो वह लोकनाथ भगवान् विष्णुके अनन्त पद (वैकुण्ठ धाम)–को प्राप्त कर लेता है।

तिथिके विषयमें अनेक ज्ञातव्य बातें तथा विद्वा तिथिका निषेध

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! एकादशी तथा भगवान् विष्णुकी महिमासे सम्बन्ध रखनेवाले सूतपुत्रके उस वचनको जो समस्त पापराशियोंका निवारण करनेवाला था, सुनकर सम्पूर्ण श्रेष्ठ ब्राह्मणोंने पुनः निर्मल हृदयवाले पौराणिक सूतपुत्रसे पूछा— मानद! आप व्यासजीकी कृपासे अठारह पुराण और महाभारतको भी जानते हैं। पुराणों और स्मृतियोंमें ऐसी कोई बात नहीं है, जिसे आप न जानते हों। हम लोगोंके हृदयमें एक संशय उत्पन्न हो गया है। आप ही विस्तारसे समझाकर यथार्थरूपसे उसका निवारण कर सकते हैं। तिथिके मूल भाग (प्रारम्भ)–में उपवास

करना चाहिये या अन्तमें? देवकर्म हो या पितृकर्म उसमें तिथिके किस भागमें उपवास करना उचित है? यह बतानेकी कृपा करें।

सौतिने कहा—महर्षियो! देवताओंकी प्रसन्नताके लिये तो तिथिके अन्तभागमें ही उपवास करना उचित है। वही उनकी प्रीति बढ़ानेवाला है। पितरोंको तिथिका मूलभाग ही प्रिय है—ऐसा कालज्ञ पुरुषोंका कथन है। अतः दसगुने फलकी इच्छा रखनेवाले पुरुषोंको तिथिके अन्तभागमें ही उपवास करना चाहिये। धर्मकामी पुरुषोंको पितरोंकी तृप्तिके लिये तिथिके मूलभागको ही उत्तम मानना चाहिये। विप्रगण! धर्म, अर्थ तथा कामकी

इच्छावाले मनुष्योंको चाहिये कि द्वितीया, अष्टमी, षष्ठी और एकादशी तिथियाँ यदि पूर्वविद्धा हों अर्थात् पहलेवाली तिथिसे संयुक्त हों तो उस दिन व्रत न करें। द्विजवरो! सप्तमी, अमावास्या, पूर्णिमा तथा पिताका वार्षिक श्राद्धदिन—इन दिनोंमें पूर्वविद्धा तिथि ही ग्रहण करनी चाहिये। सूर्योदयके समय यदि थोड़ी भी पूर्व तिथि हो तो उससे वर्तमान तिथिको पूर्वविद्धा माने, यदि उदयके पूर्वसे ही वर्तमान तिथि आ गयी हो तो उसे 'प्रभूता' समझे। पारण तथा मनुष्यके मरणमें तत्कालवर्तिनी तिथि ग्रहण करने योग्य मानी गयी है। पितृकार्यमें वही तिथि ग्राह्य है जो सूर्यस्तकालमें मौजूद रहे। विप्रवरो! तिथिका प्रमाण सूर्य और चन्द्रमाकी गतिपर निर्भर है। चन्द्रमा और सूर्यकी गतिका ज्ञान होनेसे कालवेत्ता विद्वान् तिथिके कालका मान समझते हैं।

इसके बाद, अब मैं ज्ञान, पूजा आदिकी विधिका क्रम बताऊँगा, यदि दिन शुद्ध न मिले तो रातमें पूजा की जाती है। दिनका सारा कार्य प्रदोष (रात्रिके आरम्भकाल)-में पूर्ण करना चाहिये। यह विधि व्रत करनेवाले मनुष्योंके लिये बतायी गयी है। विप्रवरो! यदि अरुणोदयकालमें थोड़ी भी द्वादशी हो तो उसमें ज्ञान, पूजन, होम और दान आदि सारे कार्य करने चाहिये। द्वादशीमें व्रत करनेपर शुद्ध त्रयोदशीमें पारण हो तो पृथ्वीदानका फल मिलता है। अथवा वह मनुष्य सौ यज्ञोंके अनुष्ठानसे भी अधिक पुण्य प्राप्त कर लेता है। विप्रगण! यदि आगे द्वादशीयुक्त दिन न दिखायी दे तो (अर्थात् द्वादशीयुक्त त्रयोदशी न हो तो) प्रातःकाल ही ज्ञान करना चाहिये और देवताओं तथा पितरोंका तर्पण करके द्वादशीमें ही पारण कर लेना चाहिये। इस द्वादशीका यदि मनुष्य उल्लङ्घन करे तो वह बहुत बड़ी हानि करनेवाली होती है। ठीक उसी प्रकार जैसे विद्याध्ययन करके समावर्तन-संस्कारद्वारा

मनुष्य स्नातक न बने तो वह सरस्वती उस विद्वान्‌के धर्मका अपहरण करती है। क्षयमें, वृद्धिमें अथवा सूर्योदयकालमें भी पवित्र द्वादशी तिथि प्राप्त हो तो उसीमें उपवास करना चाहिये, किंतु पूर्व तिथिसे विद्ध होनेपर उसका अवश्य त्याग कर देना चाहिये।

ब्राह्मणोंने पूछा—सूतजी! जब पहले दिनकी एकादशीमें द्वादशीका संयोग न प्राप्त होता हो तो मनुष्योंको किस प्रकार उपवास करना चाहिये? यह बतलाइये। उपवासका दिन जब पूर्व तिथिसे विद्ध हो और दूसरे दिन जब थोड़ी भी एकादशी न हो तो उसमें किस प्रकार उपवास करनेका विधान है? इसे भी स्पष्ट कीजिये।

सौतिने कहा—ब्राह्मणो! यदि पहले दिनकी एकादशीमें आधे सूर्योदयतक भी द्वादशीका संयोग न मिलता हो तो दूसरे दिन ही व्रत करना चाहिये। अनेक शास्त्रोंमें परस्पर विरुद्ध वचन देखे जाते हैं और ब्राह्मण लोग भी विवादमें ही पड़े रहते हैं। ऐसी दशामें कोई निर्णय होता न देख पवित्र द्वादशी तिथिमें ही उपवास करे और त्रयोदशीमें पारण कर ले। जब एकादशी दशमीसे विद्ध हो और द्वादशीमें श्रवणका योग मिलता हो तो दोनों पक्षोंमें पवित्र द्वादशी तिथिको ही उपवास करना चाहिये।

ऋषि बोले—सूतपुत्र! अब आप युगादि तिथियों तथा सूर्यसंक्रान्ति आदिमें किये जानेवाले पुण्य कर्मोंकी विधिका यथावत् वर्णन कीजिये; क्योंकि आपसे कोई बात छिपी नहीं है।

सौतिने कहा—अयनका पुण्यकाल, जिस दिन अयनका आरम्भ हो, उस पूरे दिनतक मानना चाहिये। संक्रान्तिका पुण्यकाल सोलह घटीतक होता है। विषुवकालको अक्षय पुण्यजनक बताया गया है। **द्विजश्रेष्ठगण!** दोनों पक्षोंकी दशमीविद्धा एकादशीका अवश्य त्याग करना चाहिये। जैसे वृश्ली स्त्रीसे सम्बन्ध रखनेवाला

ब्राह्मण श्राद्धमें भोजन कर लेनेपर उस श्राद्धको दान, जप, होम, स्नान तथा भगवत्पूजन आदि और श्राद्धकर्ताके पुण्यकृत पुण्यको भी नष्ट कर कर्म सूर्योदयकालमें अन्धकारकी भाँति नष्ट हो देता है, उसी प्रकार पूर्वविद्धा तिथिमें किये हुए जाते हैं।

रुक्माङ्गदके राज्यमें एकादशीव्रतके प्रभावसे सबका वैकुण्ठगमन, यमराज आदिका चिन्तित होना, नारदजीसे उनका वार्तालाप तथा ब्रह्मलोक-गमन

ऋषि बोले—सूतजी ! अब भगवान् विष्णुके आराधनकर्मका विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये, जिससे भगवान् संतुष्ट होते और अभीष्ट वस्तु प्रदान करते हैं। भगवान् लक्ष्मीपति सम्पूर्ण जगत्के स्वामी हैं। यह चराचर जगत् उन्हींका स्वरूप है। वे समस्त पापराशियोंका नाश करनेवाले भगवान् श्रीहरि किस कर्मसे प्रसन्न होते हैं ?

सौतिने कहा—ब्राह्मणो ! धरणीधर भगवान् हृषीकेश भक्तिसे ही वशमें होते हैं, धनसे नहीं। भक्तिभावसे पूजित होनेपर श्रीविष्णु सब मनोरथ पूर्ण कर देते हैं। अतः ब्राह्मणो ! चक्रसुदर्शनधारी भगवान् श्रीहरिकी सदा भक्ति करनी चाहिये। जलसे भी पूजन करनेपर भगवान् जगन्नाथ सम्पूर्ण क्लेशोंका नाश कर देते हैं। जैसे प्यासा मनुष्य जलसे तृप्त होता है। उसी प्रकार उस पूजनसे भगवान् शीघ्र संतुष्ट होते हैं। ब्राह्मणो ! इस विषयमें एक पापनाशक उपाख्यान सुना जाता है, जिसमें महर्षि गौतमके साथ राजा रुक्माङ्गदके संवादका वर्णन है। प्राचीन कालमें रुक्माङ्गद नामसे प्रसिद्ध एक सार्वभौम राजा हो गये हैं। वे सब प्राणियोंके प्रति क्षमाभाव रखते थे। क्षीरसागरमें शयन करनेवाले भगवान् विष्णु उनके प्रिय आराध्यदेव थे। वे भगवद्भक्त तो थे ही, सदा एकादशीव्रतके पालनमें तत्पर रहते थे। राजा रुक्माङ्गद इस जगत्‌में देवेश्वर भगवान् पद्मनाभके सिवा और किसीको नहीं देखते थे। उनकी सर्वत्र भगवद्दृष्टि थी। वे एकादशीके दिन

हाथीपर नगाड़ा रखकर बजवाते और सब और यह घोषणा कराते थे कि 'आज एकादशी तिथि है। आजके दिन आठ वर्षसे अधिक और पचासी वर्षसे कम आयुवाला जो मन्दबुद्धि मनुष्य भोजन करेगा, वह मेरे द्वारा दण्डनीय होगा, उसे नगरसे निर्वासित कर दिया जायगा। औरोंकी तो बात ही क्या, पिता, भ्राता, पुत्र, पत्नी और मेरा मित्र ही क्यों न हो, यदि वह एकादशीके दिन भोजन करेगा तो उसे कठोर दण्ड दिया जायगा। आज गङ्गाजीके जलमें गोते लगाओ, श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको दान दो।' द्विजवरो ! राजाके इस प्रकार घोषणा करानेपर सब लोग एकादशीव्रत करके भगवान् विष्णुके लोकमें जाने लगे। ब्राह्मणो ! इस प्रकार वैकुण्ठधामका मार्ग लोगोंसे भर गया। उस राजाके राज्यमें जो लोग भी मृत्युको प्राप्त होते थे, वे भगवान् विष्णुके धाममें चले जाते थे।

ब्राह्मणो ! सूर्यनन्दन प्रेतराज यम दयनीय स्थितिमें पहुँच गये थे। चित्रगुप्तको उस समय लिखने-पढ़नेके कामसे छुट्टी मिल गयी थी। लोगोंके पूर्व कर्मोंके सारे लेख मिटा दिये गये। मनुष्य अपने धर्मके प्रभावसे क्षणभरमें वैकुण्ठधामको चले जाते थे। सम्पूर्ण नरक सूने हो गये। कहीं कोई पापी जीव नहीं रह गया था। बारह सूर्योंके तेजसे तस होनेवाला यमलोकका मार्ग नष्ट हो गया। सब लोग गरुड़की पीठपर बैठकर भगवान् विष्णुके धामको चले जाते थे। मर्त्यलोकके मानव एकमात्र एकादशीको छोड़कर और कोई व्रत आदि नहीं

जानते थे। नरकमें भी सन्नाटा छा गया। तब एक दिन नारदजीने धर्मराजके पास जाकर कहा।

नारदजी बोले—राजन्! नरकोंके आँगनमें भी किसी प्रकारकी चीख-पुकार नहीं सुनायी देती। आजकल लोगोंके पापकर्मोंका लेखन भी नहीं किया जा रहा है। क्यों चित्रगुप्तजी मुनिकी भाँति मौन साधकर बैठे हैं? क्या कारण है कि आजकल आपके यहाँ माया और दम्भके वशीभूत हो दुष्कर्मोंमें तत्पर रहनेवाले पापियोंका आगमन नहीं हो रहा है?

महात्मा नारदके ऐसा पूछनेपर सूर्यपुत्र धर्मराजने कुछ दयनीय भावसे कहा।

यम बोले—नारदजी! इस समय पृथ्वीपर जो राजा राज्य कर रहा है, वह पुराणपुरुषोत्तम भगवान् हृषीकेशका भक्त है। राजेश्वर रुक्माङ्गद अपने राज्यके लोगोंको नगाड़ा पीटकर सचेत करता है—‘एकादशी तिथि प्राप्त होनेपर भोजन न करो, न करो। जो मनुष्य उस दिन भोजन करेंगे वे मेरे दण्डके पात्र होंगे।’ अतः सब लोग (एकादशीसंयुक्त) द्वादशीव्रत करते हैं। मुनिश्रेष्ठ! जो लोग किसी बहानेसे भी (एकादशीसंयुक्त) द्वादशीको उपवास कर लेते हैं, वे दाह और प्रलयसे रहित वैष्णवधामको जाते हैं। सारांश यह है कि (एकादशीसंयुक्त) द्वादशीव्रतके सेवनसे सब लोग वैकुण्ठधामको चले जा रहे हैं। द्विजश्रेष्ठ! उस राजाने इस समय मेरे लोकके मार्गोंका लोप कर दिया है। अतः मेरे लेखकोंने लिखनेका काम ढीला कर दिया है। महामुने! इस समय मैं काठके मृगकी भाँति निश्चेष्ट हो रहा हूँ। इस तरहके लोकपाल-पदको मैं त्याग देना चाहता हूँ। अपना यह दुःख ब्रह्माजीको बतानेके लिये मैं ब्रह्मलोकमें जाऊँगा। किसी कार्यके लिये नियुक्त हुआ सेवक काम न होनेपर भी यदि उस पदपर बना रहता है और बेकार रहकर स्वामीके धनका उपभोग करता है, वह निश्चय ही नरकमें जाता है।

सौति कहते हैं—ब्राह्मणो! ऐसा कहकर यमराज देवर्षि नारद तथा चित्रगुप्तके साथ ब्रह्माजीके धाममें गये। वहाँ उन्होंने देखा कि ब्रह्माजी मूर्त और अमूर्त जीवोंसे घिरे बैठे हैं। वे सम्पूर्ण वेदोंके आश्रय जगत्की उत्पत्तिके बीज



तथा सबके प्रपितामह हैं। उनका स्वतः प्रादुर्भाव हुआ है। वे सम्पूर्ण भूतोंके निवासस्थान और पापसे रहित हैं। ॐकार उन्होंका नाम है। वे पवित्र, पवित्र वस्तुओंके आधार, हंस (विशुद्ध आत्मा) और दर्थ (कुश), कमण्डलु आदि चिह्नोंसे युक्त हैं। अनेकानेक लोकपाल और दिक्षाल भगवान् ब्रह्माजीकी उपासना कर रहे हैं। इतिहास, पुराण और वेद साकाररूपमें उपस्थित हो उनकी सेवा करते हैं। उन सबके बीचमें यमराजने लजाती हुई नववधूकी भाँति प्रवेश किया। उनका मुँह नीचेकी ओर झुका था और वे नीचेकी ओर ही देख रहे थे। ब्रह्माजीकी सभामें बैठे हुए लोग देवर्षि नारद तथा चित्रगुप्तके साथ यमराजको वहाँ उपस्थित देख आश्र्वर्यचकित नेत्रोंसे देखते हुए आपसमें कहने लगे, ‘क्या ये

सूर्यपुत्र यमराज यहाँ लोककर्ता पितामह ब्रह्माजीका दर्शन करनेके लिये पधारे हुए हैं? क्या इनके पास इस समय कोई कार्य नहीं है? इनको तो एक क्षणका भी अवकाश नहीं मिलता है; ये सूर्यनन्दन यम सदा अपने कार्योंमें ही व्यग्र रहते हैं, फिर भी आज यहाँ कैसे आ गये? देवता लोग सकुशल तो हैं? सबसे बढ़कर आश्वर्य तो यह मालूम होता है कि ये लेखक महोदय (चित्रगुप्तजी) बड़ी दीनताके साथ यहाँ उपस्थित हुए हैं और इनके हाथमें जो पट है, जिसपर जीवोंका शुभाशुभ कर्म लिखा जाता है, उसका सब लेख मिटा दिया गया है। अबतक किसी भी धर्मात्माने इनके पटपर लिखे हुए लेखको नहीं मिटाया था। अबतक जो बात देखने और

सुननेमें नहीं आयी थी, वह यहीं प्रत्यक्ष दिखायी देती है।'

ब्राह्मणो! ब्रह्माजीके सभासद् जब इस प्रकारकी बातें कर रहे थे, उस समय सम्पूर्ण भूतोंका शासन करनेवाले सूर्यपुत्र यम पितामहके चरणोंमें गिर पड़े और बोले—‘देवेश्वर! मेरा बड़ा तिरस्कार हुआ है। मेरे पटपर जो कुछ लिखा गया था, सब मिटा दिया गया। कमलासन! आप—जैसे स्वामीके रहते हुए मैं अपनेको अनाथ देख रहा हूँ।’ द्विजवरो! ऐसा कहकर धर्मराज निश्चेष्ट हो गये। फिर उदारचित्तवाले लोकमूर्ति वायुदेवने अपनी सुन्दर एवं मोटी भुजाओंसे यमराजके संदेहका निवारण करते हुए उन्हें धीरे-धीरे उठाया और उन धर्मराज और चित्रगुप्तको आसनपर बिठाया।

यमराजके द्वारा ब्रह्माजीसे अपने कष्टका निवेदन और रुक्माङ्गदके प्रभावका वर्णन

तब यमराज बोले—पितामह! पितामह!! नाथ! मेरी बात सुनिये। देव! किसीके प्रभावका जो खण्डन है, वह मृत्युसे भी अधिक दुःखदायक होता है। कमलोद्धव! जो पुरुष कार्यमें नियुक्त होकर स्वामीके उस आदेशका पालन नहीं करता; किंतु उनसे वेतन लेकर खाता है, वह काठका कीड़ा होता है। जो लोभवश प्रजा अथवा राजासे धन लेकर खाता है, वह कर्मचारी तीन सौ कल्पोंतक नरकमें पड़ा रहता है। जो अपना काम बनाता और स्वामीको लूटता है, वह मन्दबुद्धि मानव तीन सौ कल्पोंतक घरका चूहा होता है। जो राजकर्मचारी राजाके सेवकोंको अपने घरके क्षमापमें लगाता है, वह बिल्ली होता है। देव! मैं आपकी आज्ञासे धर्मपूर्वक प्रजाका शासन करता आ॒गा॒प्रभो! मैं मुनियों तथा धर्मशास्त्र आदिके द्वारा अस्तीति विचार करके पुण्यकर्म करनेवालेको मृण्यफलसे और पाप करनेवालेको पापके फलसे

संयुक्त करता था। कल्पके आदिसे लेकर जबतक आपका वह दिन पूरा होता है, तबतक आपके ही आदेशके अनुसार मैं सब काम करता आया हूँ और आगे भी कर सकता हूँ, किंतु आज राजा रुक्माङ्गदने मेरा महान् तिरस्कार कर दिया है। जगन्नाथ! उस राजाके भयसे समुद्रोंद्वारा धिरी हुई समूची पृथ्वीके लोग सर्वपापनाशक एकादशीके दिन भोजन नहीं करते हैं और उसके प्रभावसे भगवान् विष्णुके धाममें चले जाते हैं; वह भी अकेले नहीं, पितरों और पितामहोंको भी साथ ले लेते हैं। इस लोकमें व्रत करनेवालोंके पितर तो वैकुण्ठलोकमें जाते ही हैं, उनके पितरोंके पितर तथा माताके पिता-मातामह आदि भी विष्णुधामको चले जाते हैं, फिर उन सबके भी जो पिता-माता आदि हैं, उनके पूर्वज भी वैकुण्ठवासी हो जाते हैं। यही नहीं, उनकी पत्नियोंके पितर भी मेरी लिपिको मिटाकर विष्णुधामको चले जाते

हैं। पिता आदिके साथ वीर्यका सम्बन्ध है और माताने तो गर्भमें ही धारण किया है। अतः उनकी सद्गति हो तो कोई अनुचित बात नहीं है। नियम यह है कि एक पुरुष जो कर्म करता है, उसका उपभोग भी वह अकेले ही करता है। ब्रह्मन्! कर्तासे भिन्न जो उसके पिता हैं, उनके वीर्यसे उसका जन्म हुआ है और माताके पेटसे वह पैदा हुआ है। इसलिये वह जिसको पिण्ड देनेका अधिकारी है और जिससे उसका शरीर प्रकट हुआ है, ऐसे पिता और माता इन दोनों पक्षोंको वह तार सकता है। किंतु वह पत्नीका वीर्य तो है नहीं और न पत्नीने उसे गर्भमें धारण किया है। अतः जगत्राथ! पति या दामादके पुण्यकी महिमासे उसकी पत्नी तथा श्वशुर पक्षके लोग कैसे परम पदको प्राप्त होते हैं? इसीसे मेरे सिरमें चक्कर आ रहा है। पद्मयोने! वह अपने साथ पिता, माता और पत्नी—इन तीन कुलोंका उद्घार करके मेरे लोकका मार्ग त्यागकर विष्णुधाममें पहुँच जाता है। वैष्णवव्रत एकादशीका पालन करनेवाला पुरुष जैसी गतिको पाता है, वैसी गति और किसीको नहीं मिलती। एकादशीके दिन अपने शरीरमें आँखेके फलका लेपन करके भोजन छोड़कर मनुष्य दुष्कर्मोंसे युक्त होनेपर भी भगवान् धरणीधरके लोकमें चला जाता है। देव! अब मैं निराश हो गया हूँ। इसलिये आपके युगल चरणारविन्दोंकी सेवामें उपस्थित हुआ हूँ। आपकी सेवामें अपने दुःखका निवेदनमात्र कर देनेसे आप सबको अभयदान देते हैं। इस समय जगतकी सृष्टि, पालन और संहारके लिये जो समयोचित कार्य प्रतीत हो, उसे आप करें। अब पृथ्वीपर वैसे पापी मनुष्य नहीं हैं, जो मेरे भूतगणोंद्वारा साँकल और पशमें बाँधकर मेरे समीप लाये जायें और मेरे अधीन हों। सूर्यके तापसे युक्त जो यमलोकका मार्ग था, उसे अत्यन्त तीव्र हाथवाले विष्णुभक्तोंने नष्ट कर दिया; अतः

समस्त जनसमुदाय कुम्भीपाककी यातनाको त्यागकर परात्पर श्रीहरिके धाममें चला जा रहा है।

त्रिभुवनपूजित देव! निरन्तर जाते हुए मनुष्योंसे ठसाठस भरे रहनेके कारण भगवान् विष्णुके लोकका मार्ग घिस गया है। जगत्पते! मैं समझता हूँ कि भगवान् विष्णुके लोकका कोई माप नहीं है, वह अनन्त है। तभी तो सम्पूर्ण जीवसमुदायके जानेपर भी भरता नहीं है। राजा रुक्माङ्गदने एक हजार वर्षसे इस भूमण्डलका शासन प्रारम्भ किया है और इसी बीचमें असंख्य मानवोंको चतुर्भुज रूप दे पीत वस्त्र, वनमाला और मनोहर अङ्गरागसे सुशोभित करके उन्हें गरुड़की पीठपर बिठाकर वैकुण्ठधाममें पहुँचा दिया। देवेश! लक्ष्मीपतिका प्रिय भक्त रुक्माङ्गद यदि पृथ्वीपर रह जायगा तो वह सम्पूर्ण लोकको भगवान् विष्णुके अनामय धाम वैकुण्ठमें पहुँचा देगा। लीजिये यह रहा आपका दिया हुआ दण्ड और यह है पट; यह सब मैंने आपके चरणोंमें अर्पित कर दिया। देवेश्वर! राजा रुक्माङ्गदने मेरे अनुपम लोकपालपदको मिट्टीमें मिला दिया। धन्य है उसकी माता, जिसने उसे गर्भमें धारण किया था। मातासे उत्पन्न हुआ अधिक गुणवान् पुत्र सम्पूर्ण दुःखोंका विनाश करनेवाला होता है। माताको क्लेश देनेवाले पुत्रके जन्म लेनेसे क्या लाभ? देव! कुपुत्रको जन्म देनेवाली माताने व्यर्थ ही प्रसवका कष्ट भोगा है! विरच्छे! निःसंदेह इस संसारमें एक ही नारी वीर पुत्रको जन्म देनेवाली है, जिसने मेरी लिपिको मिटा देनेके लिये रुक्माङ्गदको उत्पन्न किया है। देव! पृथ्वीपर अबतक किसी भी राजाने ऐसा कार्य नहीं किया था। अतः भगवन्! जो भयंकर नगाड़ा बजाकर मेरे लोकके मार्गका लोप कर रहा है और निरन्तर भगवान् विष्णुकी सेवामें लगा हुआ है, उस रुक्माङ्गदके पृथ्वीके राज्यपर स्थित रहते मेरा जीवन सम्भव नहीं।

ब्रह्माजीके द्वारा यमराजको भगवान् तथा उनके भक्तोंकी श्रेष्ठता बताना

ब्रह्माजी बोले—धर्मराज ! तुमने क्या आश्वर्यकी बात देखी है ? क्यों इतने खिन्न हो रहे हो ? किसीके उत्तम गुणोंको देखकर जो मनमें संताप होता है, वह मृत्युके तुल्य माना गया है। सूर्यनन्दन ! जिनके नामका उच्चारण करनेमात्रसे परम पद प्राप्त हो जाता है, उन्हींकी प्रीतिके लिये उपवास करके मनुष्य वैकुण्ठधामको क्यों न जाय ? भगवान् श्रीकृष्णके लिये किया हुआ एक बारका प्रणाम दस अश्वमेध-यज्ञोंके अवभूथ-स्नानके समान है। फिर भी इतना अन्तर है कि दस अश्वमेध-यज्ञ करनेवाला मनुष्य पुण्यभोगके पश्चात् पुनः इस संसारमें जन्म लेता है; परंतु श्रीकृष्णको प्रणाम करनेवाला पुरुष फिर संसार-बन्धनमें नहीं पड़ता*। जिसकी जिह्वाके अग्रभागपर 'हरि' यह दो अक्षर विराजमान है, उसे कुरुक्षेत्र, काशी और विरजतीर्थके सेवनकी क्या आवश्यकता है ? क्योंकि जो खिलवाड़में भी भगवान् विष्णुके नामका उच्चारण और श्रवण कर लेता है, वह मनुष्य गङ्गाजीके जलमें स्नान करनेसे प्राप्त हुई पवित्रताके तुल्य पवित्रता प्राप्त कर लेता है। त्रिभुवननाथ पुरुषोत्तम हमारे जन्मदाता हैं, उनके दिन (एकादशी)-का सेवन करनेवाले पुरुषपर शासन कैसे चल सकता

है ? जो राजकर्मचारी इस पृथ्वीपर राजाके श्रेष्ठ भक्तोंको नहीं जानता, वह उनके विरुद्ध सम्पूर्ण आयास करके भी फिर उन्हींके द्वारा दण्डनीय होता है। अतः राजकार्यमें नियुक्त हुए पुरुषको चाहिये कि वे अपराधी होनेपर भी राजाके प्रिय जनोंपर शासन न करें, क्योंकि वे स्वामीके प्रसादसे सिद्ध (कृतकार्य) होते हैं और शासकपर भी शासन कर सकते हैं। सूर्यनन्दन ! इसी प्रकार जो पापी होनेपर भी भगवान् जनार्दनके चरणोंकी शरणमें जा चुके हैं, उनपर तुम्हारा शासन कैसे चल सकता है ? उनपर शासन करना तो मूर्खताका ही सूचक है। धर्मराज ! यदि भगवान् शिवके, सूर्यके अथवा मेरे भक्तोंसे तुम्हारा विवाद हो तो मैं तुम्हारी कुछ सहायता कर सकता हूँ; किंतु भास्करनन्दन ! विष्णुभक्तोंके साथ सामना होनेपर मैं कोई सहायता नहीं कर सकूँगा; क्योंकि भगवान् पुरुषोत्तम सभी देवताओंके आदि हैं। भगवान् मधुसूदनके भक्तोंको दण्ड देना सम्भव नहीं है। जिन्होंने किसी बहानेसे भी दोनों पक्षोंकी (एकादशीसंयुक्त) द्वादशीका सेवन किया है, उनके द्वारा यदि तुम्हारा अपमान हुआ है तो उसमें मैं तुम्हारा सहायक नहीं हो सकता।

यमराजकी इच्छा-पूर्ति और भक्त रुक्माङ्गदका गौरव बढ़ानेके लिये ब्रह्माजीका अपने मनसे एक सुन्दरी नारीको प्रकट करना, नारीके प्रति वैराग्यकी भावना तथा उस सुन्दरी 'मोहिनी' का मन्द्राचलपर जाकर मोहक संगीत गाना

यमराजने कहा—तात ! वेद जिनके चरण हैं, उन भगवान्‌को नमस्कार करनेमें ही सबका हित है; इस बातको मैंने भी समझा है। जगत्पते ! फिर भी जबतक राजा रुक्माङ्गद पृथ्वीका शासन करता है, तबतक मेरा चित्त शान्त नहीं रह

सकता। देवश्रेष्ठ ! यदि एकमात्र रुक्माङ्गदको ही आप एकादशीके दिन धैर्यसे विचलित कर दें, तो मैं आपका किङ्गर बना रहूँगा। देव ! उसने मेरे पटका लेख मिटा दिया है। आजसे जो मानव देवताओंके स्वामी भगवान् विष्णुका स्मरण,

* एको हि कृष्णस्य कृतप्रणामो दशाश्वमेधावभृथेन तुल्यः। दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म कृष्णप्रणामी न पुनर्भवाय॥
(ना० उत्तर० ६। ३)

स्वन अथवा उनके लिये उपवासव्रत करेंगे, उनपर मैं कोई शासन नहीं करूँगा। जो मनुष्य किसी दूसरे व्याजसे भी सहसा हरि-नामका उच्चारण कर लेते हैं, वे माताके गर्भसे छुटकारा पा जाते हैं। वे चतुर मानव मेरे पटके लेखमें नहीं आते तथा देवताओंके समुदाय भी उन्हें नमस्कार करते हैं*।

सौति कहते हैं—वैवस्वत यमके कार्यसे और उनके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये (और रुक्माङ्गदका गौरव बढ़ानेके लिये) देवेश्वर ब्रह्माजीने कुछ देरतक विचार किया। सम्पूर्ण प्राणियोंसे विभूषित भगवान् ब्रह्माने क्षणभर चिन्तन करनेके पश्चात् सम्पूर्ण लोकको मोहमें डालनेवाली एक नारीको उत्पन्न किया। ब्रह्माजीके मनसे निर्मित

सम्पन्न उस सुन्दरीको सामने देख ब्रह्माजीने अपनी आँखें मूँद लीं। उन्होंने इस बातपर भी लक्ष्य किया कि मेरे स्वजन काममोहित होकर इस सुन्दरीकी ओर देख रहे हैं। तब उन्होंने उन सबको समझाते हुए कहा—‘जो यहाँ माता, पुत्री, पुत्रवधू, भौजाई, गुरुपत्री तथा राजाकी रानीकी ओर रागयुक्त मन और आसक्तिपूर्ण दृष्टिसे देखता या उनका चिन्तन करता है, वह घोर नरकमें पड़ता है। जो मनुष्य इन प्रमदाओंको देखकर क्षोभको प्राप्त होता है, उसका जन्मभरका किया हुआ पुण्य व्यर्थ हो जाता है। यदि उन रमणियोंका सङ्ग करे तो दस हजार जन्मोंका पुण्य नष्ट होता है और पुण्यका नाश होनेसे पापी मनुष्य अवश्य ही पहाड़ी चूहा होता है; अतः विद्वान् पुरुष इन युवतियोंको न तो रागयुक्त दृष्टिसे देखे और न रागयुक्त हृदयसे इनका चिन्तन ही करे।

धर्मराज! जो पुत्रवधू अपने श्वशुरको अपने खुले अङ्ग दिखाती है, उसके हाथ और पैर गल जाते हैं तथा वह ‘कृमिभक्ष’ नामक नरकमें पड़ती है। जो पापी मनुष्य पुत्रवधूके हाथसे पैर धुलवाता, स्थान करता अथवा शरीरमें तेल आदि मालिश करता है, उसकी भी ऐसी ही गति होती है। वह एक कल्पतक काले रंगके मुखवाले ‘सूचीमुख’ नामक कीड़ोंका भक्ष्य बना रहता है। अतः मनुष्य कामनायुक्त मनसे किसी भी नारीकी ओर विशेषतः पुत्री अथवा पुत्रवधूकी ओर न देखे। जो देखता है, वह उसी क्षण पतित हो जाता है। इस प्रकार विचार करके ब्रह्माजीने अपनी दृष्टि और सूक्ष्म कर ली और कहा—‘यह जो गोल-गोल और कुछ ऊँचाई लिये हुए सुन्दर मुँह दिखायी देता है, वह हड्डियोंका ढाँचामात्र ही तो है, जो चर्म और मांससे ढका



हुई वह देवी संसारकी समस्त सुन्दरियोंमें श्रेष्ठ एवं प्रकाशमान थी। सम्पूर्ण आभूषणोंसे विभूषित हो वह उनके आगे खड़ी हुई। रूपके वैभवसे

* हरिरिति सहसा ये संगृणन्ति च्छलेन जननिजठरमागते विमुक्ता हि मर्त्याः।

मम पटविलिपि ते नो विशन्ति प्रवीणा दिविचरवरसङ्घस्ते नमस्या भवन्ति॥

(ना० उत्तर० ७। ६)

हुआ है। स्त्रियोंके शरीरमें जो दो सुन्दर नेत्र स्थित हैं, वे वसा और मेदके सिवा और क्या हैं? छातीपर दोनों स्तनोंमें यह अत्यन्त ऊँचा मांस ही तो स्थित है। जघनदेशमें भी अधिक मांस ही भरा हुआ है। जिस योनिपर तीनों लोकोंके प्राणी मुग्ध रहते हैं, वह छिपा हुआ मूत्रका ही तो द्वार है। वीर्य और हड्डियोंसे भरा हुआ शरीर केवल मांससे ढका होनेके कारण कैसे सुन्दर कहा जा सकता है? मांस, मेद और चब्बी ही जिसका सार-सर्वस्व है, देहधारियोंके उस शरीरमें सार-तत्त्व क्या है? बताओ। विष्ठा, मूत्र और मलसे पुष्ट हुए शरीरमें कौन मनुष्य अनुरक्त होगा? इस प्रकार ब्रह्माजीने ज्ञानदृष्टिसे बहुत विचार करके उस नारीसे कहा—‘सुन्दरी! जिस प्रकार मैंने मनसे तुम श्रेष्ठ वर्णवाली नारीकी सृष्टि की है, उसके अनुरूप ही तुम मनको उन्मत्त बना देनेवाली उत्पन्न हुई हो।’

तब उस नारीने चतुर्मुख ब्रह्माजीको प्रणाम करके कहा—‘नाथ! देखिये, योगियोंसहित समस्त चराचर जगत् मेरे रूपसे मोहित हो गया है; तीनों लोकोंमें कोई भी ऐसा पुरुष नहीं है, जो मुझे देखकर क्षुब्ध न हो जाय। कल्याणकी इच्छा रखनेवाले किसी पुरुषको अपनी स्तुति नहीं करनी चाहिये; तथापि कार्यके उद्देश्यसे मुझे अपनी प्रशंसा करनी पड़ी है। ब्रह्मन्! आपने किसीके चित्तमें क्षोभ उत्पन्न करनेके लिये ही मेरी सृष्टि की है; अतः जगन्नाथ! उसका नाम बताइये, मैं निस्संदेह उसको क्षुब्ध कर डालूँगी। देव! पृथ्वीपर मुझे देखकर पहाड़ भी मोहित हो जायगा; फिर साँस लेनेवाले जङ्गम प्राणीके लिये तो कहना ही क्या? इसीलिये पुराणोंमें नारीकी ओर देखना, उसके रूपकी चर्चा करना मनुष्योंके लिये उन्मादकारी बतलाया गया है। वह कठिन-

से-कठिन व्रतका भी नाश करनेवाला है। मनुष्य तभीतक सन्मार्गपर चलता रहता है, तभीतक इन्द्रियोंको काबूमें रखता है, तभीतक दूसरोंसे लज्जा करता है और तभीतक विनयका आश्रय लेता है, जबतक कि धैर्यको छीन लेनेवाले युवतियोंके नीली पाँखवाले नेत्ररूपी बाण हृदयमें गहरी चोट नहीं पहुँचाते। नाथ! मदिराको तो जब मनुष्य पी लेता है, तब वह चतुर पुरुषके मनमें मोह उत्पन्न करती है; परंतु युवती नारी दूरसे दर्शन और स्मरण करनेपर ही मोहमें डालती है; अतः वह मदिरासे बढ़कर है’*।

ब्रह्माजीने कहा—देवि! तुमने ठीक कहा है। तुम्हारे लिये तीनों लोकोंमें कुछ भी असाध्य नहीं है। ऐसी शक्ति रखनेवाली तुम सम्पूर्ण लोकोंके चित्तका अपहरण क्यों न करोगी। यह सत्य है कि तुम्हारा रूप सबको मोह लेनेवाला है। मैंने जिस उद्देश्यसे तुम्हारी सृष्टि की है, उसे सिद्ध करो। शुभे! वैदिश नगरमें रुक्माङ्गद नामसे प्रसिद्ध एक राजा हैं। उनकी पत्नीका नाम सन्ध्यावली है, जो रूपमें तुम्हारे ही समान है। उसके गर्भसे राजकुमार धर्माङ्गदका जन्म हुआ है, जो पितासे भी अत्यधिक प्रतापी है। उसमें एक लाख हाथीका बल है और प्रतापमें तो वह सूर्यके ही समान है। क्षमामें पृथ्वीके और गम्भीरतामें वह समुद्रके समान है। तेजसे अग्निके समान प्रज्वलित होता है। त्यागमें राजा बलि, गतिमें वायु, सौम्यतामें चन्द्रमा तथा रूपमें कामदेवके समान है। राजकुमार धर्माङ्गद राजनीतिमें बृहस्पति और शुक्राचार्यको भी परास्त करता है। वरानने पिताने केवल एक (अखण्ड) रूपमें समस्त जम्बूद्वीपका भोग किया है; किंतु धर्माङ्गदने अन्य द्वीपोंपर भी अधिकार प्राप्त कर लिया है। उसने माता-पिताके संकोचवश अभीतक स्त्रीसुखका

* मीतं हि मर्यां मनुजेन नाथ करोति मोहं सूविचक्षणस्य। स्मृता च दृष्टा युवती नरेण विमोहयेदेव सुराधिका हि॥
(ना० उत्तर० ७। ४०)

अनुभव नहीं किया। सहस्रों राजकुमारियाँ उसकी पत्नी होनेके लिये स्वयं आयीं, किंतु उसने सबको त्याग दिया। वह घरमें रहकर कभी पिताकी आज्ञाके पालनसे विचलित नहीं होता। चारुहासिनि! धर्माङ्गदके तीन सौ माताएँ हैं। वे सब-की-सब सोनेके महलोंमें रहती हैं। राजकुमार उन सबके प्रति समानरूपसे पूज्य दृष्टि रखता है। रुक्माङ्गदके जीवनमें धर्मकी ही प्रधानता है। वे पुत्ररक्षसे सम्पन्न हैं। मोहिनी! तुम उत्तम मन्दराचलपर उन्हीं नरेशके समीप जाओ और उन्हें मोहित करो। सुन्दरी! तुमने इस सम्पूर्ण जगत्को मोहित कर लिया है, अतः देवि! तुम्हारे इस गुणके अनुरूप ही तुम्हारा 'मोहिनी' नाम होगा।

ब्रह्माजीके ऐसा कहनेपर मोहिनी ब्रह्माजीको प्रणाम करके मन्दराचलकी ओर प्रस्थित हुई। तीसरे मुहूर्त (पाँचवीं घड़ी)-में वह पर्वतके शिखरपर जा पहुँची। मन्दराचल वह पर्वत है, जिसे पूर्वकालमें भगवान् विष्णुने कच्छपरूपसे अपनी पीठपर धारण किया था और देवता तथा दानवोंने जिसके द्वारा क्षीरसागरका मन्थन किया था एवं जो महान् पर्वत भगवान्‌के कूर्म-शरीरसे रगड़ा जानेपर भी फूट न सका तथा जिसने क्षीरसागरमें पड़कर उसकी गहराई कितनी है, इसे स्पष्ट दिखा दिया। वह अनेक प्रकारके रक्षोंका घर तथा भाँति-भाँतिकी धातुओंसे सम्पन्न है। मन्दराचल देवताओंकी क्रीड़ा और विहारका स्थान है। तपस्वी मुनियोंकी तपस्याका वह प्रमुख साधन है। उसका मूलभाग ग्यारह हजार

योजनतक नीचे गया है। इतना ही उसका विस्तार भी है और ऊँचाईमें भी उसका यही माप है। वह अपने सुवर्णमय तथा रक्षमय शिखरोंसे पृथ्वी और आकाशको प्रकाशित कर रहा है। मोहिनी उस मन्दराचलपर आ पहुँची। उसके अङ्गोंकी प्रभा भी स्वर्णके ही समान थी; अतः वह अपनी कान्तिसे स्वयं भी उस पर्वतके तेजको बढ़ा रही थी। वह राजा रुक्माङ्गदसे मिलनेकी इच्छा रखकर पर्वतकी एक विशाल शिलापर जा बैठी, जिसका विस्तार सात योजन था। वह दिव्य शिला नीली कान्तिसे सुशोभित थी। राजेन्द्र! उस शिलापर एक वज्रमय शिवलिङ्ग स्थापित था, जिसकी ऊँचाई दस हाथकी थी। वह 'वृषलिङ्ग'के नामसे विख्यात था और ऐसा जान पड़ता था, मानो महलके ऊपर सुन्दर सोनेका कलश शोभा पा रहा हो। द्विजवरो! मोहिनीने उस शिवलिङ्गके समीप ही उत्तम संगीत प्रारम्भ किया। वीणाकी झँकार और ताल-स्वरसे युक्त वह श्रेष्ठ गीत मानसिक क्लेशको दूर करनेवाला था। वह सुन्दरी शिवलिङ्गके अत्यन्त निकट होकर मूर्च्छना और तालके साथ गान्धारस्वरमें गीत गा रही थी। राजेन्द्र! उसका वह गान कामवेदनाको बढ़ानेवाला था। मुनीश्वरो! उस संगीतके प्रारम्भ होनेपर स्थावर जीवोंकी भी उसमें स्पृहा हो गयी। देवताओं तथा दैत्योंके समाजमें भी कभी वैसा मोहक संगीत नहीं हुआ था। मोहिनीके मुखसे निकला हुआ वह गान चित्तको मोह लेनेवाला था।

रुक्माङ्गद-धर्माङ्गद-संवाद, धर्माङ्गदका प्रजाजनोंको उपदेश और प्रजापालन तथा रुक्माङ्गदका रानी सन्ध्यावलीसे वार्तालाप

सौति कहते हैं—महाराज रुक्माङ्गदने मनुष्य-लोकके उत्तम भोग भोगते हुए नाना प्रकारसे पीताम्बरधारी भगवान् श्रीहरिकी आराधना की।

विप्रगण! युद्धमें पराक्रमसे सुशोभित होनेवाले शत्रुओंपर विजय प्राप्त कर ली और वैवस्वत यमको जीतकर यमलोकका मार्ग सुना कर

दिया। वैकुण्ठका मार्ग मनुष्योंसे भर दिया और उचित समय जानकर अपने पुत्र धर्माङ्गदको बुलाकर कहा—‘बेटा! तुम अपने धर्मपर दृढ़तापूर्वक डटे रहकर अपने पराक्रमसे इस धन-धान्य-सम्पन्न पृथ्वीका सब ओरसे पालन करो। पुत्रके समर्थ हो जानेपर जो उसे राज्य नहीं सौंप देता, उस राजाके धर्म तथा कीर्तिका निश्चय ही नाश हो जाता है। अपने शक्तिशाली पुत्रके द्वारा यदि पिता सुखी न हो तो उस पुत्रको तीनों लोकोंमें अवश्य पातकी जानना चाहिये। पिताका भार हल्का करनेमें समर्थ होकर भी जो पुत्र उस भारको नहीं सँभालता, वह माताके मल-मूत्रकी भाँति पैदा हुआ है। पुत्र वही है, जो इस पृथ्वीपर पितासे भी अधिक ख्याति लाभ करे। यदि पुत्रके अन्यायजनित दुःखसे पिताको रातभर जागना पड़े तो वह पुत्र एक कल्पतक नरकमें पड़ा रहता है। जो पुत्र घरमें रहकर पिताकी प्रत्येक आज्ञाका पालन करता है, वह देवताओंद्वारा प्रशंसित हो भगवान्‌का सायुज्य प्राप्त करता है। पुत्र! मैं प्रजाजनोंकी रक्षाके लिये इस पृथ्वीपर सदा नाना प्रकारके कर्मोंमें आसक्त रहा। प्रजापालनमें संलग्न होकर मैंने कभी भोजन और शयनकी परवा नहीं की। कुछ लोग शिवकी उपासनामें तत्पर रहते हैं, कुछ लोग भगवान् सूर्यके भजन-ध्यानमें संलग्न हैं, कोई ब्रह्माजीके पथपर चलते हैं और दूसरे लोग पार्वतीजीकी आराधनामें स्थित हैं। कुछ लोग सायंकाल और सबेरे अग्निहोत्र कर्ममें लगे होते हैं। ‘बालक हो या युवक, बूढ़ा हो या गर्भिणी स्त्री, कुमारी कन्या, रोगी पुरुष अथवा किसी कष्टसे व्याकुल मनुष्य—ये सब उपवास नहीं कर सकते।’ इस तरहकी बातें जिन्होंने कहीं, उन सबकी बातोंका मैंने सब तरहसे खण्डन किया और बहुत दिनोंतक पुराणमें कहे हुए वचनोंद्वारा प्रजाके सुखके लिये उन्हें बार-बार समझाया। विद्वानोंको शास्त्रदृष्टिसे समझाकर

और मूर्खोंको दण्डपूर्वक काबूमें करके मैं एकादशीके दिन सबको निराहार रखता आया हूँ।

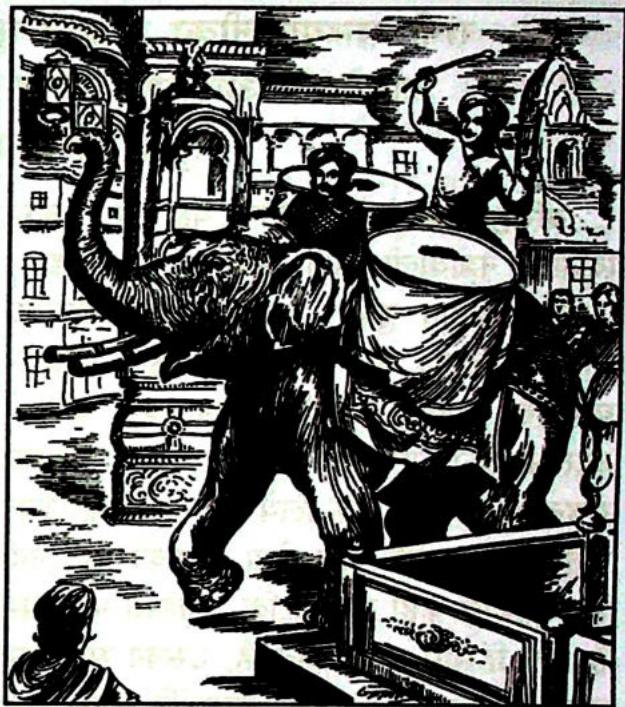
‘वत्स! अपने हों या पराये, कभी किसीको दुःख नहीं देना चाहिये। जो राजा प्रजाकी रक्षा करता है, उसे पुराणोंमें अक्षय लोकोंकी प्राप्ति बतायी गयी है। अतः सौम्य! मैं प्रजाके लिये सदा कर्तव्यपालनमें लगा रहा। अपने शरीरको विश्राम देनेका मुझे कभी अवसर नहीं मिला। बेटा! मुझे कभी मदिरा पीने और जूआ खेलने आदिके सुखकी इच्छा नहीं होती। वत्स! इन दुर्व्यसनोंमें फँसा हुआ राजा शीघ्र नष्ट हो जाता है। पुत्र! तुम्हरे ऊपर राज्यका भार रखकर मैं (प्रजाजनोंके रक्षार्थ) शिकार खेलने जाना चाहता हूँ और इसी बहाने अनेकानेक पर्वत, वन, नदी और भाँति-भाँतिके सरोवर देखना चाहता हूँ।’

धर्माङ्गदने कहा—पिताजी! मैं आपके राज्य-सम्बन्धी भारी भारको आजसे अपने ऊपर उठाता हूँ। आपकी आज्ञापालन करनेके सिवा मेरे लिये दूसरा कोई धर्म नहीं है। जो पिताकी बात नहीं मानता, यह धर्मानुष्ठान करते हुए भी नरकमें पड़ता है। इसलिये मैं आपकी आज्ञाका पालन करूँगा।

ऐसा कहकर धर्माङ्गद हाथ जोड़े खड़े रहे। उनके इस वचनको सुनकर राजा रुक्माङ्गद बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने (प्रजाके रक्षार्थ) मृगयाके लिये वनमें जानेका निश्चय किया और पुत्रकी अनुमति प्राप्त कर ली। इस बातको जानकर धर्माङ्गदने प्रसन्नचित्त हो प्रजावर्गको बुलाया और इस प्रकार कहा—‘प्रजागण! पिताने मुझे आप लोगोंके पालन और हित-साधनके लिये नियुक्त किया है। सर्वथा धर्मपालनकी इच्छा रखनेवाले मुझ-जैसे पुत्रको पिताकी आज्ञाका सदैव पालन करना चाहिये। पुत्रके लिये पिताके आदेशका पालन करनेके सिवा दूसरा कोई धर्म नहीं है। अब मैं दण्डधारण करके राजाके पदपर स्थित हुआ हूँ। मेरे

जीते-जी यहाँ कहीं यमराजका शासन नहीं चल सकता। ऐसा समझकर आप सब लोगोंको भगवान् गरुडध्वजका स्मरण तथा भगवदर्पणबुद्धिसे कर्म करते हुए उसके द्वारा भगवान् जनार्दनका यजन करते रहना चाहिये। संसारके भोगोंसे ममता हटकर अपनी-अपनी जातिके लिये विहित कर्मद्वारा भगवान्की पूजा करनी चाहिये। इससे आपको अक्षय लोकोंकी प्राप्ति होगी। प्रजाजनो! यह मैंने पिताजीके मार्गसे एक अधिक मार्ग आपको दिखाया है। ब्रह्मार्पणभावसे कर्ममें संलग्न होकर आप सब लोग ज्ञानमें निपुण हो जायें। एकादशीके दिन भोजन नहीं करना चाहिये—यह पिताजीका बताया हुआ सनातन मार्ग तो है ही, यह ब्रह्मनिष्ठारूप विशेष मार्ग आपके लिये मैंने बताया है। तत्त्ववेत्ता पुरुषोंको इस ब्रह्मनिष्ठारूप मार्गका अवलम्बन अवश्य करना चाहिये। इससे इस संसारमें पुनः नहीं आना पड़ता।'

इस प्रकार सम्पूर्ण प्रजाको अनुनयपूर्वक बारम्बार आश्वासन देकर धर्माङ्गद उनके पालनमें लगे रहे। वे न तो दिनमें सोते थे और न रातमें ही। वे अपने शौर्यके बलसे पृथ्वीको निष्कण्टक बनाते हुए सर्वत्र भ्रमण करते थे। हाथीके मस्तकपर रखा हुआ उनका नगाड़ा प्रतिदिन बजता और कर्तव्यपालनकी घोषणा इस प्रकार करता रहता था—‘लोगो! (एकादशीसंयुक्त) द्वादशीको उपवास करते हुए ममतासे रहित हो जाओ और नाना प्रकारके कार्योंमें देवेश्वर श्रीहरिका चिन्तन करते रहो। भगवान् पुरुषोत्तम ही यज्ञ और श्राद्धके भोक्ता हैं। सूर्यमें, सूर्ने आकाशमें तथा सम्पूर्ण सृष्टिमें वे जगदीश्वर भगवान् विष्णु व्यास हो रहे हैं। धर्म, अर्थ और कामरूप त्रिवर्गकी भी इच्छा रखनेवाले सब मनुष्योंको उन्हींका स्मरण करना चाहिये। इसी प्रकार अपने वर्णोचित कर्तव्यकर्मका आचरण करते हुए भी उन्हीं भगवान् माधवका चिन्तन करना चाहिये। वे



भगवान् पुरुषोत्तम ही भोक्ता और भोग्य हैं, सब कर्मोंमें उन्हींका विनियोग—उन्हींकी प्रसन्नताके लिये कर्मोंका अनुष्ठान करना उचित है।' इस प्रकार मेघकी गर्जनाके समान गम्भीर स्वरसे डंका पीटकर श्रेष्ठ ब्राह्मण उपर्युक्त बातें दुहराया करते थे। ब्राह्मणो! इस तरह धर्मका सम्पादन करके धर्माङ्गदके पिताने जब यह जान लिया कि मेरा पुत्र मुझसे भी अधिक कर्तव्यपरायण है तो वे अत्यन्त प्रसन्न हो द्वितीय लक्ष्मीके समान सुशोभित अपनी धर्मपत्नीसे बोले—‘सन्ध्यावलि! मैं धन्य हूँ तथा श्रेष्ठ वर्णवाली देवि! तुम भी धन्य हो; क्योंकि हम दोनोंका पैदा किया हुआ पुत्र इस पृथ्वीपर चन्द्रमाके समान उज्ज्वल कीर्तिसे प्रकाशित हो रहा है। सुन्दरी! यह निश्चय है कि सदाचार और पराक्रमसे सम्पन्न विनयशील एवं प्रतापी पुत्र प्राप्त होनेपर पिताके लिये घरमें ही मोक्ष है। किंतु अब मैं प्रसन्नतापूर्वक शिकार खेलने एवं जंगली पशुओंको मारनेके लिये वनमें जाऊँगा। विशाललोचने! वहाँ स्वच्छन्द विचरते हुए मैं जन-रक्षाका कार्य करूँगा।

रानी सन्ध्यावलीका पतिको मृगोंकी हिंसासे रोकना, राजाका वामदेवके आश्रमपर जाना तथा उनसे अपने पारिवारिक सुख आदिका कारण पूछना

बसिष्ठजी कहते हैं—पतिका यह वचन सुनकर विशाल नेत्रोंवाली रानी सन्ध्यावलीने कहा—‘राजन्! आपने पुत्रपर सातों द्वीपोंके पालनका भार रख दिया। अब यह मृगोंकी हिंसा छोड़कर यज्ञोंद्वारा भगवान् जनार्दनकी आराधना कीजिये और भोगोंकी अभिलाषा त्यागकर देवनदी गङ्गाका सेवन कीजिये। आपके लिये अब यही न्यायोचित कर्तव्य है; मृगोंके प्राण लेना न्यायकी बात नहीं है। पुराणोंमें कहा गया है कि ‘अहिंसा परम धर्म है। जो हिंसामें प्रवृत्त होता है, उसका सारा धर्म व्यर्थ हो जाता है। राजन्! विद्वानोंने जीव-हिंसा छः प्रकारकी बतायी है। पहला हिंसक वह है, जो हिंसाका अनुमोदन करता है। दूसरा वह है, जो जीवको मारता है। जो विश्वास पैदा करके जीवको फँसाता है, वह तीसरे प्रकारका हिंसक है। मारे हुए जीवका मांस खानेवाला चौथा हिंसक है; उस मांसको पकाकर तैयार करनेवाला पाँचवाँ हिंसक है तथा राजन्! जो यहाँ उसका बँटवारा करता है, वह छठा हिंसक है। विद्वान् पुरुषोंने हिंसायुक्त धर्मको अधर्म ही माना है। धर्मात्मा राजाओंमें भी मृगोंके प्रति दयाभावका होना ही श्रेष्ठ माना गया है। मैंने आपके हितकी भावनासे ही बार-बार आपको मृगयासे रोकनेका प्रयत्न किया है।’

ऐसी बातें कहती हुई अपनी धर्मपत्नीसे राजा रुक्माङ्गदने कहा—‘देवि! मैं मृगोंकी हत्या नहीं करूँगा। मृगयाके बहाने हाथमें धनुष लेकर वनमें विचरण करूँगा। वहाँ जो प्रजाके लिये कण्टकरूप हिंसक जन्तु हैं, उन्हींका वध करूँगा। जनपदमें मेरा पुत्र रहे और वनमें मैं। वरानने! राजाको हिंसक जन्तुओं और लुटेरोंसे प्रजाकी रक्षा करनी

चाहिये। शुभे! अपने शरीरसे अथवा पुत्रके द्वारा प्रजाकी रक्षा करना अपना धर्म है। जो राजा प्रजाकी रक्षा नहीं करता, वह धर्मात्मा होनेपर भी नरकमें जाता है; अतः प्रिये! मैं हिंसाभावका परित्याग करके जन-रक्षाके उद्देश्यसे वनमें जाऊँगा।’

रानी सन्ध्यावलीसे ऐसा कहकर राजा रुक्माङ्गद अपने उत्तम अश्वपर आरूढ़ हुए। वह घोड़ा पृथ्वीका आभूषण, चन्द्रमाके समान ध्वल वर्ण और अश्वसम्बन्धी दोषोंसे रहित था। रूपमें उच्चैःश्रवाके समान और वेगमें वायुके समान था। राजा रुक्माङ्गद पृथ्वीको कम्पित करते हुए-से चले। वे नृपश्रेष्ठ अनेक देशोंको पार करते हुए वनमें जा पहुँचे। उनके घोड़ेके वेगसे तिरस्कृत हो कितने ही हाथी, रथ और घोड़े पीछे छूट जाते थे। वे राजा रुक्माङ्गद एक सौ आठ योजन भूमि लाँघकर सहसा मुनियोंके उत्तम आश्रमपर पहुँच गये। घोड़ेसे उत्तरकर उन्होंने आश्रमकी रमणीय भूमिमें प्रवेश किया, जहाँ केलेके बगीचे आश्रमकी शोभा बढ़ा रहे थे। अशोक, वकुल (मौलसिरी), पुत्राग (नागकेसर) तथा सरल (अर्जुन) आदि वृक्षोंसे वह स्थान घिरा हुआ था। राजाने उस आश्रमके भीतर जाकर द्विजश्रेष्ठ महर्षि वामदेवका दर्शन किया, जो अग्निके समान तेजस्वी जान पड़ते थे। उन्हें बहुत-से शिष्योंने घेर रखा था। राजाने मुनिको देखकर उन्हें आदरपूर्वक प्रणाम किया। उन महर्षिने भी अर्घ्य, पाद्य आदिके द्वारा राजाका सत्कार किया। वे कुशके आसनपर बैठकर हर्षभरी वाणीसे बोले—‘मुने! आज मेरा पातक नष्ट हो गया। भलीभाँति ध्यानमें तत्पर रहनेवाले आप-जैसे महात्माके युगल चरणारविन्दोंका दर्शन करके मैंने समस्त पुण्य-कर्मोंका फल प्राप्त



कर लिया।' राजा रुक्माङ्गदकी यह बात सुनकर वामदेवजी बड़े प्रसन्न हुए और कुशल-मङ्गल पूछकर बोले—'राजन्! तुम अत्यन्त पुण्यात्मा तथा भगवान् विष्णुके भक्त हो। महाभाग! तुम्हारी दृष्टि पड़नेसे मेरा यह आश्रम इस पृथ्वीपर अधिक पुण्यमय हो गया। भूमण्डलमें कौन ऐसा राजा होगा, जो तुम्हारी समानता कर सके। तुमने यमराजको जीतकर उनके लोकमें जानेका मार्ग ही नष्ट कर दिया। राजन्! सब लोगोंसे पापनाशिनी (एकादशीसंयुक्त) द्वादशीका व्रत कराकर सबको तुमने अविनाशी वैकुण्ठधाममें पहुँचा दिया। साम, दान, दण्ड और भेद—इन चार प्रकारके सुन्दर उपायोंसे भूमण्डलकी प्रजाको संयममें रखकर अपने कर्म या विपरीत कर्ममें लगी हुई सब प्रजाको तुमने भगवान् विष्णुके धाममें भेज दिया। नरेश्वर! हम भी तुम्हारे दर्शनकी इच्छा रखते थे, सो तुमने स्वयं दर्शन दे दिया।

महीपाल! चाण्डाल भी यदि भगवान् विष्णुका भक्त है तो वह द्विजसे भी बढ़कर है और द्विज भी यदि विष्णुभक्तिसे रहित है तो वह चाण्डालसे भी अधिक नीच है। भूपाल! इस पृथ्वीपर विष्णुभक्त राजा दुर्लभ हैं*। जो राजा भगवान् विष्णुका भक्त नहीं है, वह भूदेवी और लक्ष्मीदेवीकी कृपा नहीं प्राप्त कर सकता। तुमने भगवान् विष्णुकी आराधना करके न्यायोचित कर्तव्यका ही पालन किया है। नृपते! भगवान्की आराधनासे तुम धन्य हो गये हो और तुम्हारे दर्शनसे हम भी धन्य हो गये।'

वामदेवजीको ऐसी बातें करते देख नृपश्रेष्ठ रुक्माङ्गद, जो स्वभावसे ही विनयी थे, अत्यन्त नम्र होकर उनसे बोले—'द्विजश्रेष्ठ! आपसे क्षमा माँगता हूँ। भगवन्! आप जैसा कहते हैं, वैसा महान् मैं नहीं हूँ। विप्रवर! आपके चरणोंकी धूलके बराबर भी मैं नहीं हूँ। इस जगत्में देवता भी कभी ब्राह्मणोंसे बढ़कर नहीं हो सकते; क्योंकि ब्राह्मणोंके संतुष्ट होनेपर जीवकी भगवान् विष्णुमें भक्ति होती है।' तब वामदेवजीने उनसे कहा—'राजन्! इस समय तुम मेरे घरपर आये हो। तुम्हारे लिये कुछ भी अदेय नहीं है, अतः बोलो, मैं तुम्हें क्या दूँ? महीपाल! इस भूतलपर जो सबको अभीष्ट वस्तु प्रदान करता है और एकादशीके दिन डंका पीटकर प्रजाको भोजन करनेसे रोकता है, उसके लिये क्या नहीं दिया जा सकता।'

तब राजाने हाथ जोड़कर विप्रवर वामदेवजीसे कहा—'ब्रह्मन्! आपके युगल चरणोंके दर्शनसे मैंने सब कुछ पा लिया। मेरे मनमें बहुत दिनोंसे एक संशय है। मैं उसीके विषयमें आपसे पूछता हूँ; क्योंकि आप सब संदेहोंका निवारण करनेवाले

*श्वपचोऽपि महीपाल विष्णुभक्तो द्विजाधिकः॥

विष्णुभक्तविहीनस्तु द्विजोऽपि श्वपचाधिकः। दुर्लभा भूप राजानौ विष्णुभक्ता महीतले॥

ब्राह्मणशिरोमणि हैं। मुझे किस सत्कर्मके फलसे त्रिभुवनसुन्दरी पत्नी प्राप्त हुई है, जो सदा मुझे अपनी दृष्टिसे कामदेवसे भी अधिक सुन्दर देखती है। परम सुन्दरी देवी सन्ध्यावली जहाँ-जहाँ पैर रखती है, वहाँ-वहाँ पृथ्वी छिपी हुई निधि प्रकाशित कर देती है। उसके अङ्गोंमें बुद्धापेका प्रवेश नहीं होता। मुनिश्रेष्ठ! वह सदा शरत्कालके चन्द्रमाकी प्रभाके समान सुशोभित होती है। विप्रवर! बिना आगके भी वह षड्ग्रस भोजन तैयार कर लेती है और यदि थोड़ी भी रसोई बनाती है तो उसमें करोड़ों मनुष्य भोजन कर लेते हैं। वह पतिव्रता, दानशीला तथा समस्त प्राणियोंको सुख देनेवाली है। ब्रह्मन्! उसने सोते समय भी वाणीमात्रके द्वारा भी कभी मेरी अवहेलना नहीं की है। उसके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न हुआ है, वह सदा मेरी आज्ञाके पालनमें तत्पर रहता है। द्विजश्रेष्ठ! ऐसा लगता है, इस भूतलपर केवल मैं ही पुत्रवान् हूँ, जिसका पुत्र पिताका भक्त है और गुणोंके संग्रहमें पितासे भी बढ़ गया है। मैं भूमण्डलमें केवल एक द्वीपके स्वामीरूपसे प्रसिद्ध था; किंतु मेरा पुत्र मुझसे बढ़ गया। वह सातों द्वीपोंकी पृथ्वीका पालक है। विप्रवर! वह मेरे लिये विद्युल्लेखा नामसे विख्यात राजकुमारीको ले आया था और युद्धमें उसने विपक्षी राजाओंको परास्त कर दिया था। वह रूप-सम्पत्तिसे भी सुशोभित है। उसने सेनापति होकर छः महीनेतक युद्ध किया और शत्रुपक्षके

सैनिकोंको जीतकर सबको अस्त्रहीन कर दिया। स्त्रीराज्यमें जाकर उसने वहाँकी स्त्रियोंको युद्धमें जीता और उनमेंसे आठ सुन्दरियोंको लाकर मुझे समर्पित किया तथा उन सबको मातृभावसे उसने बारम्बार मस्तक झुकाया। पृथ्वीपर उसने जो-जो दिव्य वस्त्र तथा दिव्य रत्न प्राप्त किये, उन सबको लाकर मुझे दे दिया। इससे उसकी माताने उसकी बड़ी प्रशंसा की। वह एक ही दिनमें अनेक योजन विस्तृत समूची पृथ्वीको लौँघकर रातको मेरे पैरोंमें तेल मालिश करनेके लिये पुनः घर लौट आता है। आधी रातमें मेरे शरीरकी सेवा करके वह द्वारपर कवच धारण करके खड़ा हो जाता है और नींदसे व्याकुल इन्द्रियोंवाले सेवकोंको जगाता रहता है। मुनिश्रेष्ठ! मेरा यह शरीर भी नीरोग रहता है। मुझे अनन्त सुख प्राप्त है और घरमें मेरी प्यारी पत्नी सदा मेरे अधीन रहती है। पृथ्वीपर सब लोग मेरी आज्ञाका पालन करनेवाले हैं। किस कर्मके प्रभावसे इस समय मुझे यह सुख मिला है? वह सत्कर्म इस जन्मका किया हुआ है या दूसरे जन्मका? ब्रह्मन्! आप अपनी बुद्धिसे विचारकर मेरा पुण्य मुझे बताइये। मेरे शरीरमें रोग नहीं है। मेरी पत्नी मेरे वशमें रहनेवाली है। घरमें अनन्त ऐश्वर्य है। भगवान्‌के चरणोंमें मेरी भक्ति है। विद्वानोंमें मेरा आदर है और ब्राह्मणोंको दान देनेकी मुझमें शक्ति है। अतः मैं ऐसा मानता हूँ कि यह सब किसी (विशेष) पुण्यकर्मका फल है।'

वामदेवजीका पूर्वजन्ममें किये हुए 'अशून्यशयनव्रत' को राजाके वर्तमान सुखका कारण बताना, राजाका मन्दराचलपर जाकर मोहिनीके गीत तथा रूप-दर्शनसे मोहित होकर गिरना और मोहिनीद्वारा उन्हें आश्वासन प्राप्त होना

वसिष्ठजी कहते हैं—राजाका यह वचन सुनकर | चिन्तन किया। फिर राजाके सुख-सौभाग्यका महाज्ञानी मुनीश्वर वामदेवजीने एक क्षणतक कुछ | कारण जानकर वे इस प्रकार बोले।

वामदेवजीने कहा—महीपाल ! तुम पूर्वजन्ममें शूद्रजातिमें उत्पन्न हुए थे । उस समय दिर्द्रिता तथा दुष्ट भायने तुम्हारा बड़ा तिरस्कार किया था । तुम्हारी स्त्री पर-पुरुषका सेवन करती थी । राजन् ! तुम ऐसी स्त्रीके साथ बहुत वर्षोंतक निवास करते हुए दुःखसे संतप्त होते रहे । एक समय किसी ब्राह्मणके संसर्गसे तुम तीर्थयात्राके लिये गये; फिर सब तीर्थोंमें घूमकर ब्राह्मणकी सेवामें तत्पर हो, तुम पुण्यमयी मथुरापुरीमें जा पहुँचे । महीपते ! वहाँ ब्राह्मणदेवताके सङ्गसे तुमने यमुनाजीके सब तीर्थोंमें उत्तम—विश्रामघाट नामक तीर्थमें स्नान करके भगवान् वाराहके मन्दिरमें होती हुई पुराणकी कथा सुनी, जो 'अशून्यशयनव्रत' के विषयमें थी; चार पारणसे जिसकी सिद्धि होती है, जिसका अनुष्ठान कर लेनेपर मेघके समान श्यामवर्ण देवेश्वर लक्ष्मीभर्ता जगन्नाथ, जो अशेष पापराशिका नाश करनेवाले हैं, प्रसन्न होते हैं । राजन् ! तुमने अपने घर लौटकर वह पवित्र 'अशून्यशयनव्रत' किया, जो घरमें परम अभ्युदय प्रदान करनेवाला है । महीपते ! श्रावण मासकी द्वितीयाको यह पुण्यमयव्रत ग्रहण करना चाहिये । इससे जन्म, मृत्यु और जरावस्थाका नाश होता है । पृथ्वीपते ! इस व्रतमें फल, फूल, धूप, लाल-चन्दन, शश्यादान, वस्त्रदान और ब्राह्मणभोजन आदिके द्वारा लक्ष्मीसहित भगवान् विष्णुकी पूजा करनी चाहिये । राजन् ! तुमने यह सब दुस्तर कर्म भी पूरा किया । महीपते ! तुमने जो पहले पुण्यके फलस्वरूप सुख विस्तारपूर्वक बताये हैं, वे इसी व्रतसे प्राप्त हुए हैं, सुनो—जिसके ऊपर भगवान् जगन्नाथ प्रसन्न न हों, उसके यहाँ वे सुख निश्चय ही नहीं हो सकते । राजेन्द्र ! इस जन्ममें भी तुम

(एकादशीसंयुक्त) द्वादशीव्रतके द्वारा श्रीहरिकी पूजा करते हो । राजन् ! इससे तुम्हें निश्चितरूपसे भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त होगा ।

राजा बोले—द्विजश्रेष्ठ ! आपकी आज्ञा हो तो मैं मन्दराचलपर जानेको उत्सुक हूँ । राज्य-शासनका गुरुतर भार अपने पुत्रके ऊपर छोड़कर मैं हलका हो गया हूँ । अब मेरे कर्तव्यका पालन मेरा पुत्र करेगा ।

राजाकी बात सुनकर वामदेवजी इस प्रकार बोले—'नृपश्रेष्ठ ! पुत्रका यह सबसे महान् कर्तव्य है कि वह सदा प्रेमपूर्वक पिताको क्लेशसे मुक्त करता रहे । जो मन, वाणी और शरीरकी शक्तिसे सदा पिताकी आज्ञाका पालन करता है, उसे प्रतिदिन गङ्गास्नानका फल मिलता है । जो पिताकी आज्ञाका उल्लङ्घन करके गङ्गास्नान करनेके लिये जाता है, उस पुत्रकी शुद्धि नहीं होती—यह वैदिक श्रुतिका कथन है* । भूपाल ! तुम इच्छानुसार यात्रा करो । तुमने अपना सब कर्तव्य पूरा कर लिया ।'

मुनिके ऐसा कहनेपर श्रीमान् राजा रुक्माङ्गद घोड़ेपर चढ़कर शीघ्र गतिसे चले, मानो साक्षात् वायुदेव जा रहे हों । मार्गमें अनेकानेक पर्वत, वन, नदी, सरोवर तथा उपवन आदि सम्पूर्ण आश्चर्यमय दृश्योंको देखते हुए वे राजाधिराज रुक्माङ्गद थोड़े ही समयमें श्वेतगिरि, गन्धमादन और महामेरुको लाँघकर उत्तर-कुरुवर्षको देखते हुए मन्दराचलपर्वतपर जा पहुँचे, जो सब ओरसे सुवर्णसे आच्छादित था । वहाँ बहुत-से निर्झर झर रहे थे । अनेकानेक कन्दराएँ उस पर्वतकी शोभा बढ़ा रही थीं । सहस्रों नदियोंसे पूर्ण मन्दराचल गङ्गाजीके शुभ जलसे भी प्रक्षालित हो रहा था । यह सब देखते हुए राजा रुक्माङ्गद उस महापर्वतके

* एतद्धि परमं कृत्यं पुत्रस्य नृपुङ्गव पितॄवर्चनकारी च मनोवाक्कायशक्तिः निरस्य पितॄवाक्यं तु ब्रजेत्प्रातुं सुरापगाम्

। यत्क्लेशात् पितरं प्रेम्णा विमोचयति सर्वदा ॥
। तस्य भागीरथीस्नानमहन्यहनि जायते ॥
। नो शुद्धिस्तस्य पुत्रस्य इतीत्यं वैदिकी श्रुतिः ॥

ब्राह्मणशिरोमणि हैं। मुझे किस सत्कर्मके फलसे त्रिभुवनसुन्दरी पत्नी प्राप्त हुई है, जो सदा मुझे अपनी दृष्टिसे कामदेवसे भी अधिक सुन्दर देखती है। परम सुन्दरी देवी सन्ध्यावली जहाँ-जहाँ पैर रखती है, वहाँ-वहाँ पृथ्वी छिपी हुई निधि प्रकाशित कर देती है। उसके अङ्गोंमें बुद्धापेका प्रवेश नहीं होता। मुनिश्रेष्ठ! वह सदा शरत्कालके चन्द्रमाकी प्रभाके समान सुशोभित होती है। विप्रवर! बिना आगके भी वह घड़रस भोजन तैयार कर लेती है और यदि थोड़ी भी रसोई बनाती है तो उसमें करोड़ों मनुष्य भोजन कर लेते हैं। वह पतिव्रता, दानशीला तथा समस्त प्राणियोंको सुख देनेवाली है। ब्रह्मन्! उसने सोते समय भी वाणीमात्रके द्वारा भी कभी मेरी अवहेलना नहीं की है। उसके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न हुआ है, वह सदा मेरी आज्ञाके पालनमें तत्पर रहता है। द्विजश्रेष्ठ! ऐसा लगता है, इस भूतलपर केवल मैं ही पुत्रवान् हूँ, जिसका पुत्र पिताका भक्त है और गुणोंके संग्रहमें पितासे भी बढ़ गया है। मैं भूमण्डलमें केवल एक द्वीपके स्वामीरूपसे प्रसिद्ध था; किंतु मेरा पुत्र मुझसे बढ़ गया। वह सातों द्वीपोंकी पृथ्वीका पालक है। विप्रवर! वह मेरे लिये विद्युल्लेखा नामसे विख्यात राजकुमारीको ले आया था और युद्धमें उसने विपक्षी राजाओंको परास्त कर दिया था। वह रूप-सम्पत्तिसे भी सुशोभित है। उसने सेनापति होकर छः महीनेतक युद्ध किया और शत्रुपक्षके

सैनिकोंको जीतकर सबको अस्त्रहीन कर दिया। स्त्रीराज्यमें जाकर उसने वहाँकी स्त्रियोंको युद्धमें जीता और उनमेंसे आठ सुन्दरियोंको लाकर मुझे समर्पित किया तथा उन सबको मातृभावसे उसने बारम्बार मस्तक झुकाया। पृथ्वीपर उसने जो-जो दिव्य वस्त्र तथा दिव्य रूप प्राप्त किये, उन सबको लाकर मुझे दे दिया। इससे उसकी माताने उसकी बड़ी प्रशंसा की। वह एक ही दिनमें अनेक योजन विस्तृत समूची पृथ्वीको लाँघकर रातको मेरे पैरोंमें तेल मालिश करनेके लिये पुनः घर लौट आता है। आधी रातमें मेरे शरीरकी सेवा करके वह द्वारपर कवच धारण करके खड़ा हो जाता है और नींदसे व्याकुल इन्द्रियोंवाले सेवकोंको जगाता रहता है। मुनिश्रेष्ठ! मेरा यह शरीर भी नीरोग रहता है। मुझे अनन्त सुख प्राप्त है और घरमें मेरी प्यारी पत्नी सदा मेरे अधीन रहती है। पृथ्वीपर सब लोग मेरी आज्ञाका पालन करनेवाले हैं। किस कर्मके प्रभावसे इस समय मुझे यह सुख मिला है? वह सत्कर्म इस जन्मका किया हुआ है या दूसरे जन्मका? ब्रह्मन्! आप अपनी बुद्धिसे विचारकर मेरा पुण्य मुझे बताइये। मेरे शरीरमें रोग नहीं है। मेरी पत्नी मेरे वशमें रहनेवाली है। घरमें अनन्त ऐश्वर्य है। भगवान्‌के चरणोंमें मेरी भक्ति है। विद्वानोंमें मेरा आदर है और ब्राह्मणोंको दान देनेकी मुझमें शक्ति है। अतः मैं ऐसा मानता हूँ कि यह सब किसी (विशेष) पुण्यकर्मका फल है।'

वामदेवजीका पूर्वजन्ममें किये हुए 'अशून्यशयनव्रत' को राजाके वर्तमान सुखका कारण बताना, राजाका मन्दराचलपर जाकर मोहिनीके गीत तथा रूप-दर्शनसे मोहित होकर गिरना और मोहिनीद्वारा उन्हें आश्वासन प्राप्त होना

वसिष्ठजी कहते हैं—राजाका यह वचन सुनकर | चिन्तन किया। फिर राजाके सुख-सौभाग्यका महाज्ञानी मुनीश्वर वामदेवजीने एक क्षणतक कुछ | कारण जानकर वे इस प्रकार बोले।

वामदेवजीने कहा—महीपाल ! तुम पूर्वजन्ममें शूद्रजातिमें उत्पन्न हुए थे । उस समय दरिद्रता तथा दुष्ट भायने तुम्हारा बड़ा तिरस्कार किया था । तुम्हारी स्त्री पर-पुरुषका सेवन करती थी । राजन् ! तुम ऐसी स्त्रीके साथ बहुत वर्षोंतक निवास करते हुए दुःखसे संतस होते रहे । एक समय किसी ब्राह्मणके संसर्गसे तुम तीर्थयात्राके लिये गये; फिर सब तीर्थोंमें घूमकर ब्राह्मणकी सेवामें तत्पर हो, तुम पुण्यमयी मथुरापुरीमें जा पहुँचे । महीपते ! वहाँ ब्राह्मणदेवताके सङ्गसे तुमने यमुनाजीके सब तीर्थोंमें उत्तम—विश्रामधाट नामक तीर्थमें स्नान करके भगवान् वाराहके मन्दिरमें होती हुई पुराणकी कथा सुनी, जो 'अशून्यशयनव्रत'के विषयमें थी; चार पारणसे जिसकी सिद्धि होती है, जिसका अनुष्ठान कर लेनेपर मेघके समान श्यामवर्ण देवेश्वर लक्ष्मीभर्ता जगन्नाथ, जो अशेष पापराशिका नाश करनेवाले हैं, प्रसन्न होते हैं । राजन् ! तुमने अपने घर लौटकर वह पवित्र 'अशून्यशयनव्रत' किया, जो घरमें परम अभ्युदय प्रदान करनेवाला है । महीपते ! श्रावण मासकी द्वितीयाको यह पुण्यमयव्रत ग्रहण करना चाहिये । इससे जन्म, मृत्यु और जरावस्थाका नाश होता है । पृथ्वीपते ! इस व्रतमें फल, फूल, धूप, लाल-चन्दन, शश्यादान, वस्त्रदान और ब्राह्मणभोजन आदिके द्वारा लक्ष्मीसहित भगवान् विष्णुकी पूजा करनी चाहिये । राजन् ! तुमने यह सब दुस्तर कर्म भी पूरा किया । महीपते ! तुमने जो पहले पुण्यके फलस्वरूप सुख विस्तारपूर्वक बताये हैं, वे इसी व्रतसे प्राप्त हुए हैं, सुनो—जिसके ऊपर भगवान् जगन्नाथ प्रसन्न न हों, उसके यहाँ वे सुख निश्चय ही नहीं हो सकते । राजेन्द्र ! इस जन्ममें भी तुम

(एकादशीसंयुक्त) द्वादशीव्रतके द्वारा श्रीहरिकी पूजा करते हो । राजन् ! इससे तुम्हें निश्चितरूपसे भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त होगा ।

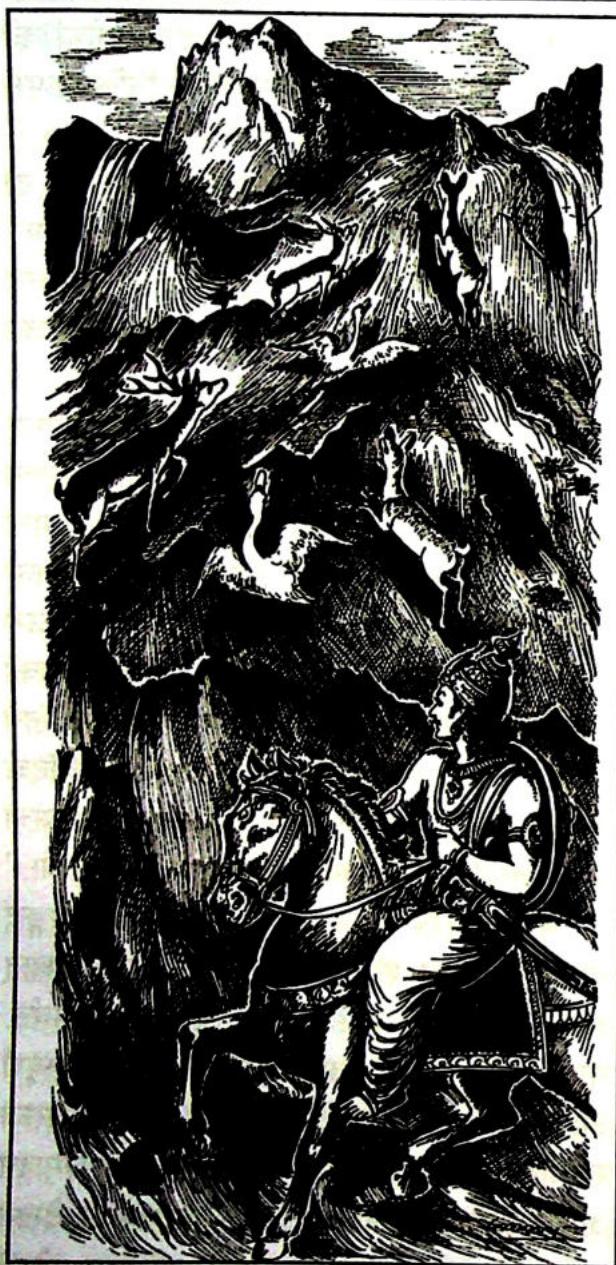
राजा बोले—द्विजश्रेष्ठ ! आपकी आज्ञा हो तो मैं मन्दराचलपर जानेको उत्सुक हूँ । राज्य-शासनका गुरुतर भार अपने पुत्रके ऊपर छोड़कर मैं हलका हो गया हूँ । अब मेरे कर्तव्यका पालन मेरा पुत्र करेगा ।

राजाकी बात सुनकर वामदेवजी इस प्रकार बोले—'नृपश्रेष्ठ ! पुत्रका यह सबसे महान् कर्तव्य है कि वह सदा प्रेमपूर्वक पिताको क्लेशसे मुक्त करता रहे । जो मन, वाणी और शरीरकी शक्तिसे सदा पिताकी आज्ञाका पालन करता है, उसे प्रतिदिन गङ्गास्नानका फल मिलता है । जो पिताकी आज्ञाका उल्लङ्घन करके गङ्गास्नान करनेके लिये जाता है, उस पुत्रकी शुद्धि नहीं होती—यह वैदिक श्रुतिका कथन है* । भूपाल ! तुम इच्छानुसार यात्रा करो । तुमने अपना सब कर्तव्य पूरा कर लिया ।'

मुनिके ऐसा कहनेपर श्रीमान् राजा रुक्माङ्गद घोड़ेपर चढ़कर शीघ्र गतिसे चले, मानो साक्षात् वायुदेव जा रहे हों । मार्गमें अनेकानेक पर्वत, वन, नदी, सरोवर तथा उपवन आदि सम्पूर्ण आश्वर्यमय दृश्योंको देखते हुए वे राजाधिराज रुक्माङ्गद थोड़े ही समयमें श्वेतगिरि, गन्धमादन और महामेरुको लाँघकर उत्तर-कुरुवर्षको देखते हुए मन्दराचलपर्वतपर जा पहुँचे, जो सब ओरसे सुवर्णसे आच्छादित था । वहाँ बहुत-से निझर झर रहे थे । अनेकानेक कन्दराएँ उस पर्वतकी शोभा बढ़ा रही थीं । सहस्रों नदियोंसे पूर्ण मन्दराचल गङ्गाजीके शुभ जलसे भी प्रक्षालित हो रहा था । यह सब देखते हुए राजा रुक्माङ्गद उस महापर्वतके

* एतद्धि परमं कृत्यं पुत्रस्य नृपुङ्गवं पितुर्वचनकारी च मनोवाक्कायशक्तिः निरस्य पितुवाक्यं तु व्रजेत्स्नातुं सुरापगाम्

। यत्क्लेशात् पितरं प्रेम्णा विमोचयति सर्वदा ॥
। तस्य भागीरथीस्नानमहन्यहनि जायते ॥
। नो शुद्धिस्तस्य पुत्रस्य इतीत्थं वैदिकी श्रुतिः ॥



समीप जा पहुँचे। तत्पश्चात् उन्होंने समस्त मृग आदि पशुओं और पक्षियोंके समुदायको एक

संगीतकी ध्वनिसे खिंचकर शीघ्रतापूर्वक एक ओर जाते देखा। वह ध्वनि मोहिनीके मुखसे निकले हुए संगीतकी थी। उनको जाते देख राजा रुक्माङ्गद स्वयं भी उन्हींके साथ शीघ्रतापूर्वक चल दिये। मोहिनीके मुखसे निकले हुए संगीतकी ध्वनि राजाके भी कानमें पड़ी, जिससे मोहित होकर उन्होंने घोड़ा वहीं छोड़ दिया और पर्वतीय मार्गको लाँঢ़ते हुए वे क्षणभरमें सहसा उसके पास पहुँच गये। उन्होंने देखा, तपाये हुए सुवर्णके समान कान्तिवाली एक दिव्य नारी पर्वतपर बैठी है, मानो गिरिराजनन्दिनी पार्वतीकी रूपराशि उसके रूपमें अभिव्यक्त हुई हो। उसे देखकर राजा उसके पास खड़े हो उस मोहिनीका रूप निहारने लगे। देखते-देखते वे मोहित होकर वहीं गिर पड़े। मोहिनीने वीणाको रख दिया और गीत बन्द कर दिया। वह देवी राजाके समीप गयी। मोहिनी सन्तस राजा रुक्माङ्गदसे मधुर मनोरम वचनोंमें बोली—‘राजन्! उठिये। मैं आपके वशमें हूँ। क्यों मूर्छासे आप अपने इस शरीरको क्षीण कर रहे हैं। भूपाल! आप तो पृथ्वीके इस महान् भारको तिनकेके समान समझकर ढोते आये हैं। फिर आज आप मोहित क्यों हो रहे हैं? दृढ़तापूर्वक अपनेको सँभालिये। आप धीर हैं, वीर हैं। आपकी चेष्टाएँ उदारतापूर्ण हैं। राजराजेश्वर! यदि मेरे साथ अत्यन्त मनोरम एवं मनोऽनुकूल क्रीड़ा करनेकी आपके मनमें इच्छा हो तो मुझे धर्मयुक्त दान देकर अपनी दासीकी भाँति मेरा उपभोग कीजिये।’

राजाकी मोहिनीसे प्रणय-याचना, मोहिनीकी शर्त तथा राजाद्वारा उसकी स्वीकृति एवं विवाह तथा दोनोंका राजधानीकी ओर प्रस्थान

बसिष्ठजी कहते हैं—मोहिनीके इस प्रकार सुन्दर वचन बोलनेपर राजा रुक्माङ्गद आँखें खोलकर गदगद कण्ठसे बोले—‘बाले! मैंने पूर्ण चन्द्रमाके समान सुन्दर मुखवाली बहुत-सी

रमणियोंको देखा, किंतु ऐसा रूप मैंने कहीं नहीं देखा है, जैसा कि विश्विमोहन रूप तुमने धारण किया है। वरानने! मैं तुम्हरे दर्शनमात्रसे इतना मोहित हो गया कि तुमसे बाततक न कर सका

और पृथ्वीपर गिर पड़ा। मुझपर कृपा करो! तुम्हारे मनमें जो भी अभिलाषा होगी, वह सब मैं तुम्हें दूँगा। मैं सम्पूर्ण पृथ्वीको तुम्हारी सेवामें दे दूँगा। इसके साथ ही कोष, खजाना, हाथी, घोड़े, मन्त्री और नगर आदि भी तुम्हारे अधीन हो जायेंगे। तुम्हारे लिये मैं अपने-आपको भी तुम्हें अर्पण कर दूँगा; फिर धन, रल आदिकी तो बात ही क्या है? अतः मोहिनी! मुझपर प्रसन्न हो जाओ।'

राजाका मधुर वचन सुनकर मोहिनीने मुसकराते हुए उस समय उन्हें उठाया और इस प्रकार कहा—‘वसुधापते! मैं आपसे पर्वतोंसहित पृथ्वी नहीं माँगती। मेरी इतनी ही इच्छा है कि मैं समयपर जो कुछ कहूँ उसका निःशङ्क होकर आप पालन करते रहें। यदि यह शर्त आप स्वीकार कर लें तो मैं निःसंदेह आपकी सेवा करूँगी।’

राजा बोले—देवि! तुम जिससे संतुष्ट रहो, वही शर्त मैं स्वीकार करता हूँ।

मोहिनीने कहा—आप अपना दाहिना हाथ मुझे दीजिये; क्योंकि वह बहुत धर्म करनेवाला हाथ है। राजन्! उसके मिलनेसे मुझे आपकी बातपर विश्वास हो जायगा। आप धर्मशील राजा हैं। आप समय आनेपर कभी असत्य नहीं बोलेंगे।

राजन्! मोहिनीके ऐसा कहनेपर महाराज रुक्माङ्गदका मन प्रसन्न हो गया और वे इस प्रकार बोले—‘सुन्दरि! जन्मसे लेकर अबतक मैंने कभी क्रीडाविहारमें भी असत्य भाषण नहीं किया है। लो, मैंने पुण्य-चिह्नसे युक्त यह दाहिना हाथ तुम्हें दे दिया। मैंने जन्मसे लेकर अबतक जो भी पुण्य किया है, वह सब यदि तुम्हारी बात न मानूँ तो तुम्हारा ही हो जाय। मैंने धर्मको ही

साक्षीका स्थान दिया है। कल्याणी! अब तुम मेरी पत्नी बन जाओ! मैं इक्ष्वाकुकुलमें उत्पन्न हुआ हूँ। मेरा नाम रुक्माङ्गद है। मैं महाराज ऋतध्वजका पुत्र हूँ और मेरे पुत्रका नाम धर्माङ्गद है। तुम मेरी प्रार्थनाका उत्तर देकर मेरे ऊपर कृपादृष्टि करो।’

राजाके ऐसा कहनेपर मोहिनीने उत्तर देते हुए कहा—‘राजन्! मैं ब्रह्माजीकी पुत्री हूँ। आपकी कीर्ति सुनकर आपके लिये ही इस स्वर्णमय मन्दराचलपर आयी हूँ। केवल आपमें मन लगाये यहाँ तपस्यामें तत्पर थी और देवेश्वर भगवान् शङ्करका संगीतदानके द्वारा पूजन कर रही थी। मुझे विश्वास है कि संगीतका दान देवताओंको अधिक प्रिय है। संगीतसे संतुष्ट हो भगवान् पशुपति तत्काल फल देते हैं। तभी तो अपने प्रियतम आप महाराजको मैंने शीघ्र पा लिया है। राजन्! आपका मुझपर प्रेम है और मैं भी आपसे प्रेम करती हूँ।’ राजासे ऐसा कहकर मोहिनीने उनका हाथ पकड़ लिया।

तदनन्तर राजाको उठाकर मोहिनी बोली—महाराज! मेरे प्रति कोई शङ्का न कीजिये! मुझे कुमारी एवं पापरहित जानिये। महीपाल! गृहसूत्रमें बतायी हुई विधिके अनुसार मेरे साथ विवाह कीजिये। राजन्! यदि अविवाहिता कन्या गर्भ धारण कर ले तो वह सब वर्णोंमें निन्दित चाण्डाल पुत्रको जन्म देती है। पुराणमें विद्वान् पुरुषोंने तीन प्रकारकी चाण्डाल-योनि मानी है—एक तो वह जो कुमारी कन्यासे उत्पन्न हुआ है, दूसरा वह जो विवाहिता होनेपर भी सगोत्र कन्याके पेटसे पैदा हुआ है। नृपत्रेष्ठ! शूद्रके वीर्यद्वारा ब्राह्मणीके गर्भसे उत्पन्न हुआ पुत्र तीसरे प्रकारका चाण्डाल है*। महाराज! इस कारण

* चाण्डालयोन्यस्तसः पुराणे कवयो विदुः ॥

कुमारीसम्भवा त्वेका सगोत्रापि द्वितीयका। ब्राह्मण्या शूद्रजनिता रूतीया नृपपुञ्जय ॥

(ना० उत्तर० १३। ३-४)

मुझ कुमारीके साथ आप विवाह कर लें।

तब राजा रुक्माङ्गदने मन्दराचलपर उस चपलनयना मोहिनीके साथ विधिपूर्वक विवाह किया और उसके साथ हँसते हुए-से रहने लगे।

राजाने कहा—वरानने! स्वर्गकी प्राप्ति भी मुझे वैसा सुख नहीं दे सकती, जैसा सुख इस मन्दराचल पर्वतपर तुम्हारे मिलनेसे प्राप्त हो रहा है। बाले! तुम यहीं मेरे साथ रहोगी या मेरे राजमहलमें?

राजा रुक्माङ्गदकी बात सुनकर मोहिनीने अनुरागपूर्वक मधुर वाणीमें कहा—‘राजन्! जहाँ आपको सुख मिले, वहीं मैं भी रहूँगी। स्वामीका निवासस्थान धन-वैभवसे रहित हो तो भी पत्नीको वहीं निवास करना चाहिये। उसके लिये पतिके सामीप्यको ही सुवर्णमय मेरु पर्वत बताया गया है। नारीके लिये पतिके निवासस्थानको छोड़कर अपने पिताके घर भी रहना वर्जित है। पिताके

स्थान और आश्रयमें आसक्त होनेवाली स्त्री नरकमें डूबती है। वह सब धर्मसे रहित होकर सूकर-योनिमें जन्म लेती है*। इस प्रकार पतिके निवासस्थानसे अन्यत्र रहनेमें जो दोष है, उसे मैं जानती हूँ। अतः मैं आपके साथ ही चलूँगी। सुखमें और दुःखमें आप ही मेरे स्वामी हैं।’

मोहिनीका यह कथन सुनकर राजाका हृदय प्रसन्नतासे खिल उठा। वे उस सुन्दरीको हृदयसे लगाकर बोले—‘प्रिये! मेरी समस्त पत्नियोंमें तुम्हारा स्थान सर्वोपरि होगा। मेरे घरमें तुम प्राणोंसे भी अधिक प्रिय बनकर रहोगी। आओ, अब हम लोग सुखपूर्वक राजधानीकी ओर चलें।’ राजा रुक्माङ्गदने जब ऐसी बात कही, तब चन्द्रमाके समान मुखवाली मोहिनी उस पर्वतकी शोभाको अपने साथ खींचती हुई (राजा रुक्माङ्गदके साथ राजधानीकी ओर) चली।

घोड़ेकी टापसे कुचली हुई छिपकलीकी राजाद्वारा सेवा, छिपकलीकी आत्मकथा, पतिपर वशीकरणका दुष्परिणाम, राजाके पुण्यदानसे उसका उद्धार

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! वे दोनों पति-पत्नी मन्दराचलके शिखरसे पृथ्वीकी ओर प्रस्थित हुए। मार्गमें अनेकों मनोहर पर्वतीय दृश्योंको देखते हुए क्रमशः नीचे उत्तरने लगे। पृथ्वीपर आकर राजाने अपने श्रेष्ठ घोड़ेको देखा, जो वज्रके समान कठोर टापोंसे धरतीको वेगपूर्वक खोद रहा था। उस भूभागके भीतर एक छिपकली रहती थी। जब तीखी टापसे वह घोड़ा धरती खोद रहा था, उसी समय वह छिपकली वहाँसे निकलकर जाने लगी। इतनेमें ही टापके आधातसे उसका शरीर विदीर्ण हो गया। दयालु राजा

रुक्माङ्गदने जब उसकी यह दशा देखी तो वे बड़े वेगसे दौड़े और वृक्षके कोमल पत्तेसे उन्होंने स्वयं उसे खुरके नीचेसे उठाया तथा घास एवं तृणसे भरी हुई भूमिपर रख दिया। तत्पश्चात् उसे मूर्छित देख मोहिनीसे बोले—‘सुन्दरी! शीघ्र पानी ले आओ। कमललोचने! यह छिपकली कुचलकर मूर्छित हो गयी है। इसे उस जलसे सींचूँगा।’ स्वामीकी आज्ञासे मोहिनी शीघ्र शीतल जल ले आयी। राजाने उस जलसे बेहोश पड़ी हुई छिपकलीको सींचा। राजन्! शीतल जलके अभिषेकसे उसकी खोयी हुई चेतना फिर लौट

*भर्तस्थानं परित्यज्य स्वपितुर्वापि वर्जितम्॥

पितृस्थानाश्रयरता नारी तमसि मञ्जति। सर्वधर्मविहीनापि नारी भवति सूकरी॥

(ना० उत्तर० १३। १८-१९)



आयी। किसी प्रकारकी चोट क्यों न हो, सबमें शीतल जलसे सींचना उत्तम माना गया है अथवा भीगे हुए वस्त्रसे सहसा उसपर पट्टी बाँधना हितकर माना गया है। राजन्! जब छिपकली सचेत हुई तो राजाको सामने खड़े देख वेदनासे पीड़ित हो धीरे-धीरे इस प्रकार (मनुष्यकी बोलीमें) बोली—‘महाबाहु रुक्माङ्गद! मेरा पूर्वजन्मका चरित्र सुनिये। रमणीय शाकल नगरमें मैं एक ब्राह्मणकी पत्नी थी। प्रभो! मुझमें रूप था, जवानी थी तो भी मैं अपने स्वामीकी अत्यन्त प्यारी न हो सकी। वे सदा मुझसे द्वेष रखते और मेरे प्रति कठोरतापूर्ण बातें कहते थे। महाराज! तब मैंने क्रोधयुक्त हो वशीकरण औषध प्राप्त करनेके लिये ऐसी स्त्रियोंसे सलाह ली, जिन्हें उनके पतियोंने कभी त्याग दिया था (और फिर वे उनके वशमें हो गये थे)। भूपाल! मेरे पूछनेपर उन स्त्रियोंने कहा—‘तुम्हारे पति अवश्य वशमें हो जायेंगे। उसका एक उपाय है। यहाँ एक संन्यासिनी रहती हैं, उन्हींकी दी हुई दवाओंसे हमारे पति वशमें हुए थे। वरारेहे! तुम भी उन्हीं

संन्यासिनीजीसे पूछो। वे तुम्हें कोई अच्छी दवा दे देंगी। तुम उनपर संदेह न करना।’ राजन्! तब उन स्त्रियोंके कहनेसे मैं तुरंत वहाँ उनके पास पहुँची और उनसे चूर्ण और रक्षासूत्र लेकर अपने पतिके पास लौट आयी और प्रदोषकालमें दूधके साथ वह चूर्ण स्वामीको पिला दिया। साथ ही रक्षासूत्र उनके गलेमें बाँध दिया। नृपश्रेष्ठ! जिस दिन स्वामीने वह चूर्ण पीया उसी दिनसे उन्हें क्षयका रोग हो गया और वे प्रतिदिन दुबले होने लगे। उनके गुप्त अङ्गमें घाव हो जानेसे उसमें दूषित व्रणजनित कीड़े पड़ गये। कुछ ही दिन बीतनेपर मेरे स्वामी तेजोहीन हो गये। उनकी इन्द्रियाँ व्याकुल हो उठीं। वे दिन-रात क्रन्दन करते हुए मुझसे बार-बार कहने लगे—‘सुन्दरी! मैं तुम्हारा दास हूँ। तुम्हारी शरणमें आया हूँ, अब कभी परायी स्त्रीके पास नहीं जाऊँगा। मेरी रक्षा करो।’ महीपते! उनका वह रोदन सुनकर मैं उन तापसीके पास गयी और पूछा—‘मेरे पति किस प्रकार सुखी होंगे?’ अब उन्होंने उनके दाहकी शान्तिके लिये दूसरी दवा दी। उस दवाको पिला देनेपर मेरे पति तत्काल स्वस्थ हो गये। तबसे मेरे स्वामी मेरे अधीन हो गये और मेरे कथनानुसार चलने लगे। तदनन्तर कुछ कालके बाद मेरी मृत्यु हो गयी और मैं नरक-यातनामें पड़ी। मुझे तांबिके भाड़में रखकर पंद्रह युगोंतक जलाया गया। जब थोड़ा-सा पातक शेष रह गया तो मैं इस पृथ्वीपर उतारी गयी और यमराजने मेरा छिपकलीका रूप बना दिया। राजन्! उस रूपमें यहाँ रहते हुए मुझे दस हजार वर्ष बीत गये।

‘भूपाल! यदि कोई दूसरी युवती भी पतिके लिये वशीकरणका प्रयोग करती है तो उसके सारे धर्म व्यर्थ हो जाते हैं और वह दुराचारिणी स्त्री तांबिके भाड़में जलायी जाती है। पति ही नारीका रक्षक है, पति ही गति है तथा पति ही देवता और गुरु है। जो उसके ऊपर वशीकरणका

प्रयोग करेगी, वह कैसे सुख पा सकती है? वह तो सैकड़ों बार पशु-पक्षियोंकी योनिमें जन्म लेती और अन्तमें गलित कोढ़के रोगसे युक्त स्त्री होती है। अतः महाराज! स्त्रियोंको सदा अपने स्वामीके आदेशका पालन करना चाहिये*। राजन्! आज मैं आपकी शरणमें आयी हूँ। यदि आप विजया द्वादशीजनित पुण्य देकर मेरा उद्धार नहीं करेंगे तो मैं फिर पातक युक्त कुत्सित योनिमें ही पड़ जाऊँगी। आपने जो सरयू और गङ्गाके पापनाशक एवं पुण्यमय संगम-तीर्थमें श्रवण नक्षत्रयुक्त द्वादशीका व्रत किया है, वह पुण्यमयी तिथि प्रेतयोनिसे छुड़ानेवाली तथा मनोवाञ्छित फल देनेवाली है। भूपाल! उस तिथिको जो मनुष्य घरमें रहकर भी भगवान् श्रीहरिका स्मरण करते हैं, उन्हें भगवान् सब तीर्थोंके फलकी प्राप्ति करा देते हैं। भूपते! विजयाके दिन जो दान, जप, होम और देवाराधन आदि किया जाता है, वह सब अक्षय होता है, जिसका ऐसा उत्कृष्ट फल है, उसीका पुण्य मुझे दीजिये। द्वादशीको उपवास करके त्रयोदशीको पारण करनेपर मनुष्य उस एक उपवासके बदले बारह वर्षोंके उपवासका फल पाता है। महीपाल! आप इस पृथ्वीपर धर्मके साक्षात् स्वरूप तथा यमराजके मार्गिका विध्वंस करनेवाले हैं; दया करके मुझ दुखियाका उद्धार कीजिये।'

छिपकलीकी बात सुनकर मोहिनी बोली— 'प्रभो! मनुष्य अपने ही कियेका सुख और दुःखरूप फल भोगता है; अतः स्वामीके प्रति दुष्ट भाव रखनेवाली इस पापिनीसे अपना क्या प्रयोजन है, जिसने रक्षासूत्र और चूर्ण आदिके द्वारा पतिको वशमें कर रखा था। इस पापिनीको

छोड़िये, अब हम दोनों नगरकी ओर चलें। जो दूसरे लोगोंके व्यापारमें फँसते हैं, उनका अपना सुख नष्ट होता है।'

रुक्माङ्गदने कहा—ब्रह्मपुत्री! तुमने ऐसी बात कैसे कही? सुमुखि! साधुपुरुषोंका बर्ताव ऐसा नहीं होता है। जो पापी और दूसरोंको सतानेवाले होते हैं, वे ही केवल अपने सुखका ध्यान रखते हैं। सूर्य, चन्द्रमा, मेघ, पृथ्वी, अग्नि, जल, चन्दन, वृक्ष और संतपुरुष परोपकार करनेवाले ही होते हैं। वरानने! सुना जाता है कि पहले राजा हरिश्चन्द्र हुए थे, जिन्हें (सत्यरक्षाके लिये) स्त्री और पुत्रको बेचकर चाण्डालके घरमें रहना पड़ा। वे एक दुःखसे दूसरे भारी दुःखमें फँसते चले गये, परंतु सत्यसे विचलित नहीं हुए। उनके सत्यसे संतुष्ट होकर इन्द्र आदि देवताओंने महाराज हरिश्चन्द्रको इच्छानुसार वर माँगनेके लिये प्रेरित किया; तब उन सत्यपरायण नरेशने ब्रह्मा आदि देवताओंसे कहा—देवगण! यदि आप संतुष्ट हैं और मुझे वर देना चाहते हैं तो यह वर दीजिये— 'यह सारी अयोध्यापुरी बाल, वृद्ध, तरुण, स्त्री, पशु, कीट-पतंग और वृक्ष आदिके साथ पापयुक्त होनेपर भी स्वर्गलोकमें चली जाय और अयोध्याभरका पाप केवल मैं लेकर निश्चितरूपसे नरकमें जाऊँ। देवेश्वरो! इन सब लोगोंको पृथ्वीपर छोड़कर मैं अकेला स्वर्गमें नहीं जाऊँगा। यह मैंने सच्ची बात बतायी है।' उनकी यह दृढ़ता जानकर इन्द्र आदि देवताओंने आज्ञा दे दी और उन्हींके साथ वह सारी पुरी स्वर्गलोगमें चली गयी। देवि! महर्षि दधीचिने देवताओंको दैत्योंसे परास्त हुआ सुनकर दयावश उनके उपकारके लिये अपने शरीरकी हड्डियाँतक दे दीं। सुन्दरी!

* यान्यापि युवतिर्भूप भर्तुर्वश्यं समाचरेत्। वृथाधर्मा दुराचारा दह्यते ताप्रभ्राष्टके॥
भर्ता नाथो गतिर्भर्ता दैवतं गुरुरेव च। तस्य वश्यं चरेद्या तु सा कथं सुखमानुयात्॥
तिर्यग्योनिशतं याति कृमिकुष्ठसमन्विता। तस्माद्बूपाल कर्तव्यं स्त्रीभिर्भर्तुवचः सदा॥

(ना० उत्तर० १४। ३९-४१)

पूर्वकालमें राजा शिविने कबूतरकी प्राणरक्षाके लिये भूखे बाजको अपना मांस दे दिया था। वरानने! प्राचीन कालमें इस पृथ्वीपर जीमूतवाहन नामसे प्रसिद्ध एक राजा हो गये हैं, जिन्होंने एक सर्पकी प्राणरक्षाके लिये अपना जीवन समर्पित कर दिया था। इसलिये देवि! राजाको सदा दयालु होना चाहिये। शुभे! बादल पवित्र और अपवित्र स्थानमें भी समानरूपसे वर्षा करता है। चन्द्रमा अपनी शीतल किरणोंसे चाण्डालों और पतितोंको भी आहाद प्रदान करते हैं। अतः सुन्दरि! इस दुःखिया छिपकलीको मैं उसी प्रकार अपने पुण्य देकर उद्धार करूँगा, जैसे राजा ययातिका उद्धार उनके नातियोंने किया था।

इस प्रकार मोहिनीकी बातका खण्डन करके राजाने छिपकलीसे कहा—‘मैंने विजयाका पुण्य तुम्हें दे दिया, दे दिया। अब तुम समस्त पापोंसे रहित हो विष्णुलोकको चली जाओ।’ भूपाल! राजा रुक्माङ्गदके ऐसा कहनेपर उस स्त्रीने सहसा छिपकलीके उस पुराने शरीरको त्याग दिया और दिव्य शरीर धारण करके दिव्य वस्त्राभूषणोंसे विभूषित हो वह दसों दिशाओंको प्रकाशित करती हुई राजाकी आज्ञा ले अद्भुत वैष्णव



धामको चली गयी। वह वैकुण्ठधाम योगियोंके लिये भी अगम्य है। वहाँ अग्नि आदिका प्रकाश काम नहीं देता। वह स्वयं प्रकाश, श्रेष्ठ, वरणीय तथा परमात्मस्वरूप है; अतः राजन्! यह अग्निको भी प्रकाश देनेवाली विजया-द्वादशी (वामन-द्वादशी) सम्पूर्ण जगत्को प्रकाश देनेके लिये प्रकट हुई है।

मोहिनीके साथ राजा रुक्माङ्गदका वैदिश नगरको प्रस्थान, राजकुमार धर्माङ्गदका स्वागतके लिये मार्गमें आगमन तथा पिता-पुत्र-संवाद

वसिष्ठजी कहते हैं—छिपकलीको पापसे मुक्त करके राजा रुक्माङ्गद बड़े प्रसन्न हुए और वे मोहिनीसे हँसते हुए बोले—‘घोड़ेपर शीघ्र सवार हो जाओ।’ राजाकी बात सुनकर मोहिनी वायुके समान वेगवाले उस अश्वपर पतिके साथ सवार हुई। राजा रुक्माङ्गद बड़े हर्षके साथ मार्गमें आये हुए वृक्ष, पर्वत, नदी, अत्यन्त विचित्र वन, नाना प्रकारके मृग, ग्राम, दुर्ग, देश, शुभ नगर, विचित्र

सरोवर तथा परम मनोहर भूभागका दर्शन करते हुए वैदिश नगरमें आये, जो उनके अपने अधीन था। गुप्तचरोंके द्वारा महाराजके आगमनका समाचार सुनकर राजकुमार धर्माङ्गद हर्षमें भर गये और अपने वशवर्ती राजाओंसे पिताके सम्बन्धमें इस प्रकार बोले—‘नृपवरो! मेरे पिताका अश्व इधर आ पहुँचा है। इसलिये हम सब लोग महाराजके सम्मुख चलें। जो पुत्र पिताके आनेपर उनकी

अगवानीके लिये सामने नहीं जाता, वह चौदह इन्द्रोंके राज्यकालतक घोर नरकमें पड़ा रहता है। पिताके स्वागतके लिये सामने जानेवाले पुत्रको पग-पगपर यज्ञका फल प्राप्त होता है—ऐसा पौराणिक द्विज कहते हैं। अतः उठिये, मैं आप लोगोंके साथ पिताजीको प्रेमपूर्वक प्रणाम करनेके लिये चल रहा हूँ; क्योंकि ये मेरे लिये देवताओंके भी देवता हैं।'

तदनन्तर उन सब राजाओंने 'तथास्तु' कहकर धर्माङ्गदकी आज्ञा स्वीकार की। फिर राजकुमार धर्माङ्गद उन सबके साथ एक कोसतक पैदल चलकर पिताके सम्मुख गये। मार्गमें दूरतक बढ़ जानेके बाद उन्हें राजा रुक्माङ्गद मिले। पिताको पाकर धर्माङ्गदने राजाओंके साथ धरतीपर मस्तक रखकर भक्तिभावसे उन्हें प्रणाम किया। राजन्! महाराज रुक्माङ्गदने देखा कि मेरा पुत्र प्रेमवश अन्य सब नरेशोंके साथ स्वागतके लिये आया है और प्रणाम कर रहा है, तब वे घोड़ेसे उतर पड़े और अपनी विशाल भुजाओंसे पुत्रको उठाकर उन्होंने हृदयसे लगा लिया। उसका मस्तक सूँघा और उस समय धर्माङ्गदसे इस प्रकार कहा—‘पुत्र! तुम समस्त प्रजाका पालन करते हो न? शत्रुओंको दण्ड तो देते हो न? खजानेको न्यायोपार्जित धनसे भरते रहते हो न? ब्राह्मणोंको अधिक संख्यामें स्थिर वृत्ति तुमने दी है न? तुम्हारा शील-स्वभाव सबको रुचिकर प्रतीत होता है न? तुम किसीसे कठोर बातें तो नहीं कहते? अपने राज्यके भीतर प्रत्येक पुत्र पिताकी आज्ञाका पालन करनेवाला है न? बहुएँ सासका कहना मानती हैं

न? अपने स्वामीके अनुकूल चलती हैं न? तिनके और घाससे भरी हुई गोचरभूमिमें जानेसे गौओंको रोका तो नहीं जाता? अन्न आदिके तोल और माप आदिका तुम सदा निरीक्षण तो करते हो न? वत्स! किसी बड़े कुटुम्बवाले गृहस्थको उसपर अधिक कर लगाकर कष्ट तो नहीं देते? तुम्हारे राज्यमें कहीं भी मदिरापान और जूआ आदिका खेल तो नहीं होता? अपनी सब माताओंको समानभावसे देखते हो न? वत्स! लोग एकादशीके दिन भोजन तो नहीं करते? अमावास्याके दिन लोग श्राद्ध करते हैं न? प्रतिदिन रातके पिछले पहरमें तुम्हारी नींद खुल जाती है न? क्योंकि अधिक निद्रा अधर्मका मूल है। निद्रा पाप बढ़ानेवाली है। निद्रा दरिद्रताकी जननी तथा कल्याणका नाश करनेवाली है। निद्राके वशमें रहनेवाला राजा अधिक दिनोंतक पृथ्वीका शासन नहीं कर सकता। निद्रा व्यभिचारिणी स्त्रीकी भाँति अपने स्वामीके लोक-परलोक दोनोंका नाश करनेवाली है।’

पिताके इस प्रकार पूछनेपर राजकुमार धर्माङ्गदने महाराजको बार-बार प्रणाम करके कहा—‘तात! इन सब बातोंका पालन किया गया है और आगे भी आपकी आज्ञाका पालन करूँगा। पिताकी आज्ञापालन करनेवाले पुत्र तीनों लोकोंमें धन्य माने जाते हैं। राजन्! जो पिताकी बात नहीं मानता, उसके लिये उससे बढ़कर और पातक क्या हो सकता है? जो पिताके वचनोंकी अवहेलना करके गङ्गा-स्नान करनेके लिये जाता है और पिताकी आज्ञाका पालन नहीं करता, उसे उस तीर्थ-सेवनका फल नहीं मिलता। मेरा यह

३. सम्मुखं ब्रजमानस्य पुत्रस्य पितरं प्रति। पदे पदे यज्ञफलं प्रोचुः पौराणिका द्विजाः॥

(ना० उत्तर० १५। १४)

२. पितुर्वचनकर्तारः पुत्रा धन्या जगत्त्रये। किं ततः पातकं राजन् यो न कुर्यात्पितुर्वचः॥
पितृवाक्यमनादृत्य ब्रजेत्प्रातुं त्रिमार्गाम्। न तत्तीर्थफलं भुद्धते यो न कुर्यात् पितुर्वचः॥

(ना० उत्तर० १५। ३४-३५)

शरीर आपके अधीन है। मेरे धर्मपर भी आपका अधिकार है और आप ही मेरे सबसे बड़े देवता हैं।' अनेकों राजाओंसे घिरे हुए अपने पुत्र धर्माङ्गदकी यह बात सुनकर महाराज रुक्माङ्गदने पुनः उसे छातीसे लगा लिया और इस प्रकार कहा—'बेटा! तुमने ठीक कहा है; क्योंकि तुम धर्मके ज्ञाता हो। पुत्रके लिये पितासे बढ़कर दूसरा कोई देवता नहीं है। बेटा! तुमने अनेक राजाओंसे सुरक्षित सात द्वीपवाली पृथ्वीको जीतकर जो उसकी भलीभाँति रक्षा की है, इससे तुमने मुझे अपने मस्तकपर बिठा लिया। लोकमें यही सबसे बड़ा सुख है, यही अक्षय स्वर्गलोक है कि पृथ्वीपर पुत्र अपने पितासे अधिक यशस्वी हो। तुम सद्गुणपर चलनेवाले तथा समस्त राजाओंपर

शासन करनेवाले हो। तुमने मुझे कृतार्थ कर दिया, ठीक उसी तरह जैसे शुभ एकादशी तिथिने मुझे कृतार्थ किया है।'

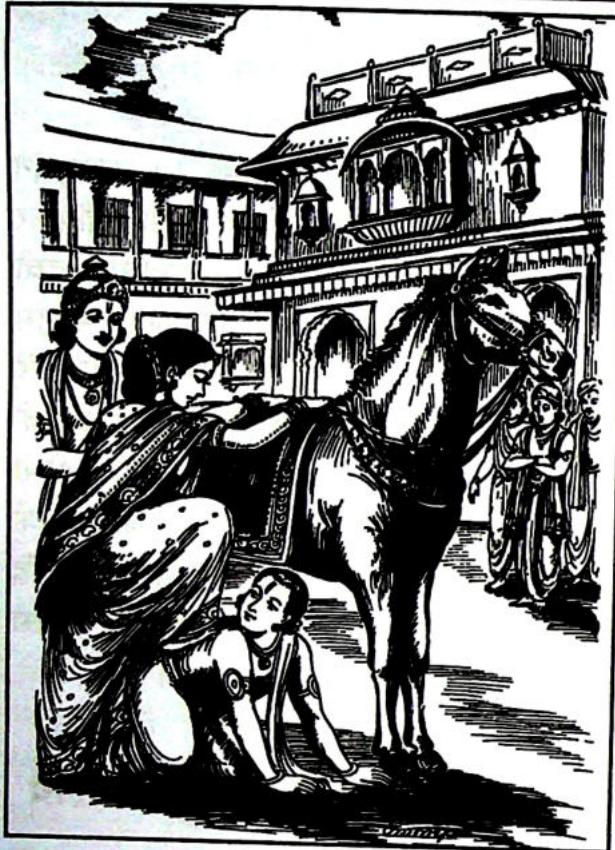
पिताकी यह बात सुनकर राजपुत्र धर्माङ्गदने पूछा—'पिताजी! सारी सम्पत्ति मुझे सौंपकर आप कहाँ चले गये थे? ये कान्तिमयी देवी किस स्थानपर प्राप्त हुई हैं? महीपाल! मालूम होता है, ये साक्षात् गिरिराजनन्दिनी उमा हैं अथवा क्षीरसागर-कन्या लक्ष्मी हैं? अहो! ब्रह्माजी रूप-रचनामें कितने कुशल हैं, जिन्होंने ऐसी देवीका निर्माण किया है। राजराजेश्वर! ये स्वर्णगौरीदेवी आपके घरकी शोभा बढ़ाने योग्य हैं। यदि इनकी-जैसी माता मुझे प्राप्त हो जायें तो मुझसे बढ़कर पुण्यात्मा दूसरा कौन होगा।'

धर्माङ्गदद्वारा मोहिनीका सत्कार तथा अपनी माताको मोहिनीकी सेवाके लिये एक पतिव्रता नारीका उपाख्यान सुनाना

वसिष्ठजी कहते हैं—धर्माङ्गदकी बात सुनकर रुक्माङ्गदको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे बोले—'बेटा! सचमुच ही ये तुम्हारी माता हैं। ये ब्रह्माजीकी पुत्री हैं। इन्होंने बाल्यावस्थासे ही मुझे प्राप्त करनेका निश्चय लेकर देवगिरिपर कठोर तपस्या प्रारम्भ की थी। आजसे पंद्रह दिन पूर्व मैं घोड़ेपर सवार हो अनेक धातुओंसे सुशोभित गिरिश्रेष्ठ मन्दराचलपर गया था। उसीके शिखरपर यह बाला भगवान् महेश्वरको प्रसन्न करनेके लिये संगीत सुना रही थी। वहीं मैंने इस सुन्दरीका दर्शन किया और इसने कुछ प्रार्थनाके साथ मुझे पतिरूपमें वरण किया। मैंने भी इन्हें दाहिना हाथ देकर इनकी मुँहमाँगी वस्तु देनेकी प्रतिज्ञा की और मन्दराचलके शिखरपर ही विशाल नेत्रोंवाली ब्रह्मपुत्रीको अपनी पत्नी बनाया। फिर पृथ्वीपर उतरकर घोड़ेपर चढ़ा और अनेक पर्वत, देश,

सरोवर एवं नदियोंको देखता हुआ तीन दिनमें वेगपूर्वक चलकर तुम्हारे समीप आया हूँ।'

पिताका यह कथन सुनकर शत्रुदमन धर्माङ्गदने घोड़ेपर चढ़ी हुई माताके उद्देश्यसे धरतीपर मस्तक रखकर प्रणाम करते हुए कहा—'देवि! आप मेरी माँ हैं, प्रसन्न होइये। मैं आपका पुत्र और दास हूँ। माता! अनेक राजाओंके साथ मैं आपको प्रणाम करता हूँ।' राजन्! मोहिनी राजपुत्र धर्माङ्गदको धरतीपर गिरकर प्रणाम करते देख घोड़ेसे उतर पड़ी और उसने दोनों बाँहोंसे उसे उठाकर हृदयसे लगा लिया। फिर कमलनयन धर्माङ्गदने मोहिनीको अपनी पीठपर पैर रखवाकर उस उत्तम घोड़ेपर चढ़ाया। राजन्! इसी विधिसे उसने पिताको भी घोड़ेपर बिठाया। तत्पश्चात् राजकुमार धर्माङ्गद अन्य राजाओंसे घिरकर पैदल ही चलने लगे। अपनी माता



मोहिनीको देखकर उनके शरीरमें हर्षातिरेकसे रोमाञ्च हो आया और मेघके समान गम्भीर वाणीमें अपने भाग्यकी सराहना करते हुए वे इस प्रकार बोले—‘एक माताको प्रणाम करनेपर पुत्रको समूची पृथ्वीकी परिक्रमाका फल प्राप्त होता है; इसी प्रकार बहुत-सी माताओंको प्रणाम करनेपर मुझे महान् पुण्यकी प्राप्ति होगी।’ राजाओंसे घिरकर इस प्रकारकी बातें करते हुए धर्माङ्गदने परम समृद्धिशाली रमणीय वैदिश नगरमें प्रवेश किया। मोहिनीके साथ घोड़ेपर चढ़े हुए राजा रुक्मिण्ड भी तत्काल वहाँ जा पहुँचे। तदनन्तर राजमहलके समीप पहुँचकर परिचारकोंसे पूछित हो राजा घोड़ेसे उत्तर गये और मोहिनीसे इस प्रकार बोले—‘सुन्दरि! तुम अपने पुत्र धर्माङ्गदके घरमें जाओ। ये गुणोंके अनुरूप तुम्हारी गुरुजनोंचित् सेवा करेंगे।’

पतिके ऐसा कहनेपर मोहिनी पुत्रके महलकी

ओर चली। धर्माङ्गदने देखा, पतिकी आज्ञासे माता मोहिनी मेरे महलकी ओर जा रही हैं। तब उन्होंने राजाओंको वहाँ छोड़ दिया और कहा, ‘आप लोग ठहरें। मैं पिताकी आज्ञासे माताजीकी सेवा करूँगा।’ ऐसा कहकर वे गये और माताको घरमें ले गये। पंद्रह पग चलनेके बाद एक पलंगके पास पहुँचकर उन्होंने माताको उसपर बिठाया। वह पलंग सोनेका बना और रेशमी सूतसे बुना हुआ था। अतः मजबूत होनेके साथ ही कोमल भी था। उस पलंगमें जहाँ-तहाँ मणि और रत्न जड़े हुए थे। मोहिनीको पलंगपर बैठाकर धर्माङ्गदने उसके चरण धोये। संध्यावलीके प्रति राजकुमारके मनमें जो गौरव था, उसी भावसे वे मोहिनीको भी देखते थे। यद्यपि वे सुकुमार एवं तरुण थे और मोहिनी भी तन्वङ्गी तरुणी थी तथापि मोहिनीके प्रति उनके मनमें तनिक भी दोष या विकार नहीं उत्पन्न हुआ। उसके चरण धोकर उन्होंने उस चरणोदकको मस्तकपर चढ़ाया और विनम्र होकर कहा—‘माँ! आज मैं बड़ा पुण्यात्मा हूँ।’ ऐसा कहकर धर्माङ्गदने स्वयं तथा दूसरे नर-नारियोंके संयोगसे मोहिनी माताके श्रमका निवारण किया और प्रसन्नतापूर्वक उनके लिये सब प्रकारके उत्तम भोग अर्पण किये। क्षीरसागरका मन्थन होते समय जो दो अमृतवर्षी कुण्डल प्राप्त हुए थे, उन्हें धर्माङ्गदने पातालमें जाकर दानवोंको पराजित करके प्राप्त किया था। उन दोनों कुण्डलोंको उन्होंने स्वयं मोहिनीके कानोंमें पहना दिया। आँखेके फल बराबर सुन्दर मोतीके एक हजार आठ दानोंका बना हुआ सुन्दर हार मोहिनीदेवीके वक्षःस्थलपर धारण कराया। सौ भर सुवर्णका एक निष्क (पदक) तथा सहस्रों हीरोंसे विभूषित एक सुन्दर लघूतर हार भी उस समय राजकुमारने माताको भेंट किया। दोनों हाथोंमें सोलह-सोलह

रत्नमयी चूड़ियाँ, जिनमें हीरे जड़े हुए थे, पहनाये। उनमेंसे एक-एकका मूल्य उसकी कीमतको समझनेवाले लोगोंने एक-एक करोड़ स्वर्ण-मुद्रा निश्चित किया था। केयूर और नूपुर भी जो सूर्यके समान चमकनेवाले थे, राजकुमारने उसे अर्पित कर दिये। उस समय धर्माङ्गदका अङ्ग-अङ्ग आनन्दसे पुलकित हो उठा था। पूर्वकालमें हिरण्यकशिपुकी जो त्रिलोकसुन्दरी पत्नी थी, उसके पास विद्युतके समान प्रकाशमान एक जोड़ा सीमन्त (शीशफूल) था। वह पतिव्रता नारी जब पतिके साथ अग्रिमें प्रवेश करने लगी तो अपने सीमन्तको अत्यन्त दुःखके कारण समुद्रमें फेंक दिया। कालान्तरमें धर्माङ्गदके पराक्रमसे संतुष्ट हो समुद्रने उन्हें वे दोनों रत्न भेंट कर दिये। धर्माङ्गदने प्रसन्नतापूर्वक वे दोनों सीमन्त भी मोहिनी माताको दे दिये। अत्यन्त मनोहर दो सुन्दर साड़ियाँ और दो चोलियाँ, जिनकी कीमत कोटि सहस्र स्वर्णमुद्रा थी, धर्माङ्गदने मोहिनीको भेंट कीं। दिव्य माल्य, उत्तम गन्धसे युक्त दिव्य अनुलेपन जो सम्पूर्ण देवताओंके गुरु बृहस्पतिजीके सिद्ध हाथसे तैयार किया हुआ तथा परम दुर्लभ था और जिसे वीर धर्माङ्गदने सम्पूर्ण द्वीपोंकी विजयके समय प्राप्त किया था; मोहिनी देवीको दे दिया। राजन्! इस प्रकार मोहिनीको विभूषित करके राजकुमारने बड़ी भक्तिके साथ षड्हस भोजन मँगाया और अपनी माताके हाथसे मोहिनीको भोजन कराया।

बहुत समझा-बुझाकर माता संध्यावलीको इस सपत्नीसेवाके लिये तैयार कर लिया था। उन्होंने कहा था—‘देवि! मेरा और तुम्हारा कर्तव्य है कि राजाकी आज्ञाका पालन करें। स्वामीको स्नेहकी दृष्टिसे जो अधिक प्रिय है, उसके साथ स्वामीका स्नेह छुड़ानेके लिये जो सौतिया-डाह करती है, वह यमलोकमें जाकर

ताँबेके भाड़में भूँजी जाती है। अतः पतिव्रता पत्नीका कर्तव्य है कि जिस प्रकार स्वामीको सुख मिले, वैसा ही करे। श्रेष्ठ वर्णवाली माँ! स्वामीकी ही भाँति उनकी प्रियतमा पत्नीको भी आदरकी दृष्टिसे देखना चाहिये। जो सपत्नी अपनी सौतको पतिकी प्यारी देख उसकी सदा सेवा-शुश्रूषा करती है, उसे अक्षय लोक प्राप्त होता है।

‘प्राचीन कालकी बात है, एक दुष्ट प्रकृतिका शूद्र था, जिसने अपने सदाचारका परित्याग कर दिया था। उसने अपने घरमें एक वेश्या लाकर रख ली। शूद्रकी विवाहित पत्नी भी थी, किंतु वह वेश्या ही उसको अधिक प्रिय थी। उसकी स्त्री पतिको प्रसन्न रखनेवाली सती थी। वह वेश्याके साथ पतिकी सेवा करने लगी। दोनोंसे नीचे स्थानमें सोती और उन दोनोंके हितमें लगी रहती थी। वेश्याके मना करनेपर भी उसकी सेवासे मुँह नहीं मोड़ती थी और सदाचारके पावन पथपर दृढ़तापूर्वक स्थित रहती थी। इस प्रकार वेश्याके साथ पतिकी सेवा करते हुए उस सतीके बहुत वर्ष बीत गये। एक दिन खोटी बुद्धिवाले उसके पतिने मूलीके साथ भैसका दही और तैल मिलाया हुआ ‘निष्पाव’ खा लिया। अपनी पतिव्रता स्त्रीकी बात अनसुनी करके उसने यह कुपथ्य भोजन कर लिया। परिणाम यह हुआ कि उसकी गुदामें भगंदर रोग हो गया। अब वह दिन-रात उसकी जलनसे जलने लगा। उसके घरमें जो धन था, उसे लेकर वह वेश्या चली गयी। तब वह शूद्र लज्जामें झूबकर दीनतापूर्ण मुखसे रोता हुआ अपनी पत्नीसे बोला। उस समय उसका चित बड़ा व्याकुल था। उसने कहा—‘देवि! वेश्यामें फैसे हुए मुझ निर्दयीकी रक्षा करो। मुझ पापीने तुम्हारा कुछ भी उपकार नहीं किया। बहुत वर्षोंतक उस वेश्याके ही साथ जीवन बिताता रहा। जो पापी अपनी विनीत



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



भार्याका अहंकारवश अनादर करता है, वह पंद्रह जन्मोंतक उस पापके अशुभ फलको भोगता है।'

पतिकी यह बात सुनकर शूद्रपत्नी उससे बोली—
 ‘नाथ! पूर्वजन्मके किये हुए पाप ही दुःखरूपमें
 प्रकट होते हैं। जो विवेकी पुरुष उन दुःखोंको
 धैयपूर्वक सहन करता है, उसे मनुष्योंमें श्रेष्ठ
 समझना चाहिये।’ ऐसा कहकर उसने स्वामीको
 धीरज बँधाया। वह सुन्दरी नारी अपने पिता और
 भाइयोंसे धन माँग लायी। वह अपने पतिको
 क्षीरशायी भगवान् मानती थी। प्रतिदिन दिनमें
 और रातमें भी उसकी गुदाके घावको धोकर शुद्ध
 करती थी। रजनीकर नामक वृक्षका गोंद लेकर¹
 उसपर लगाती और नखद्वारा धीरे-धीरे स्वामीके
 कोढ़से कीड़ोंको नीचे गिराती थी। फिर मोरपंखका
 व्यजन लेकर उनके लिये हवा करती थी। माँ!
 वह श्रेष्ठ नारी न रातमें सोती थी, न दिनमें। थोड़े
 दिनोंके बाद उसके पतिको त्रिदोष हो गया। अब
 वह बड़े यक्षसे सोंठ, मिर्च और पीपल अपने
 स्वामीको पिलाने लगी। एक दिन सर्दीसे पीड़ित
 हो काँपते हुए पतिने पत्नीकी अँगुली काट ली।
 उस समय सहसा उसके दोनों दाँत आपसमें सट
 गये और वह कटी हुई अँगुली उसके मुँहके
 भीतर ही रह गयी। महारानी! उसी दशामें
 उसकी मृत्यु हो गयी। अब वह अपना कंगन
 बेचकर काठ खरीद लायी और उसकी चिता
 तैयार की। चितापर उसने धी छिड़क दिया और
 बीचमें पतिको सुलाकर स्वयं भी उसपर चढ़
 गयी। वह सुन्दर अङ्गोंवाली सती प्रज्वलित
 अग्निमें देहका परित्याग करके पतिको साथ ले
 सहसा देवलोकको चली गयी। उसने, जिसका
 साधन कठिन है, ऐसे दुष्कर कर्मद्वारा बहुत-सी
 पापराशियोंको शुद्ध कर दिया था।’